समकालीन भारतीय साहित्य

साहित्य अकादेमी की द्विमासिक पत्रिका

वर्ष 16 अंक 63 जनवरी-फ़रवरी 19[illegible]

सपादक

गिरधर राठी

द्विमासिक
समकालीन भारतीय साहित्य
वर्ष 16 अंक 63 जनवरी-फ़रवरी 1996

प्रकाशक साहित्य अकादेमी

संपादकीय कार्यालय
रवीन्द्र भवन 35 फ़ीरोज़शाह मार्ग
नई दिल्ली 110001
फ़ोन 3386626 3386627 3386623
3386628 3386629 3387064
तार साहित्यकार
फ़ैक्स 091 11 3382428

आवरण बसोहली के रागमाला चित्र (17 18 शताब्दी)
सौजन्य : ललित कला अकादेमी नई दिल्ली
सज्जा करुणानिधान

मूल्य 15 रुपए

शुल्क-दर एक वर्ष (6 अंक) 80 रुपए तीन वर्ष (18 अंक) 220 रुपए

विदेश में
हवाई डाक एक प्रति 7 डॉलर
एक वर्ष 35 डॉलर/20 पौंड तीन वर्ष 90 डॉलर/55 पौंड
समुद्री डाक एक वर्ष 15 डॉलर/9 पौंड तीन वर्ष 40 डॉलर/25 पौंड

शुल्क 'सचिव, साहित्य अकादेमी' के नाम से इस पते पर भेजें
(केवल मनीऑर्डर, ड्राफ्ट या चेक)

सचिव साहित्य अकादेमी
विक्रय विभाग 'स्वाति' मंदिर मार्ग नई दिल्ली 110001
फ़ोन 3735297

SAMAKĀLĪN BHĀRATĪYA SĀHITYA
A Bi-monthly journal of Indian literature from 22
languages in Hindi published by Sahitya Akademi
Rabindra Bhavan, 35 Ferozeshah Road
New Delhi 110001 India

समकालीन भारतीय साहित्य
साहित्य अकादेमी की द्विमासिक पत्रिका

वर्ष 16 अक 63 जनवरी फरवरी 1996

आलेख

डोगरी कहानियाँ

रेखाचित्र

एकाकी

डोगरी कविताएँ

और अन्य कहानियाँ

और अन्य कविताएँ

लोकमंच

आलेख

किताबें

अनुस्मरण

अद्यतन

समकालीन भारतीय साहित्य का यह अक अपने पाठकों को सौंपते हुए हमें दोहरी खुशी है। वह इस तरह कि अव्वल तो यह लगभग 16 वर्ष की अपनी यात्रा के बाद निकला पहला दोमाही अक है—जनवरी फरवरी 1996 का। दूसरे इसलिए कि अपनी आशा के अनुरूप हम डोगरी भाषा के आधुनिक लेखन पर केन्द्रित एक विशेष खड भी आप को दे पाए हैं। रचनाओं के चयन और अनुवाद में श्रीमती पद्मा सचदेव की सुदीर्घ सहायता और आलेख एव लेखक-परिचय सुलभ कराने में श्री ओम गोस्वामी की तत्परता के लिए हार्दिक आभार निश्चय ही व्यक्त किया जा सकता है। साथ ही उन समस्त रचनाकारों और अनुवादकों का भी, जिन्होंने हमारा अनुरोध रखा। यह कहना शायद ज़रूरी है कि सामग्री के चयन के लिए अतत हम ही ज़िम्मेदार हैं ख़ास कर उन सभी त्रुटियों और भूलो के लिए, जो जाने-अनजान इस प्रक्रिया में हुई होंगी।

साथ ही साथ हमें इस बात की भी प्रसन्नता है कि कुछेक अन्य भाषाओं की कुछेक स्मरणीय कहानियाँ भी इस अक में हैं—ये एक लबे अरसे से हमारे पास रखी हुई थीं और स्थान के अभाव के कारण प्रकाशित नहीं हो सकी थीं। विभिन्न भाषाओं के कुछ वरिष्ठ कवियों के अलावा हिन्दी के कुछेक ऐसे कवियों की रचनाओं के नमूने भी इस अक मे हैं जिन में एकाध अपवाद को छोड कर या तो बिल्कुल युवा हैं या फिर बरसों से लिखते रहन के बावजूद स्वय को अप्रकाशित रखने का दुसाध्य शील निभाते आ रहे हैं।

लोकमच स्तभ नया है इस की शुरुआत एक अत्यत समृद्ध लोकभाषा (भोजपुरी) के एक अत्यत समादृत रचनाकार (भिखारी ठाकुर) की नाट्य रचना से हो रही है—यह पुन रेखाकित करने लायक़ बात मानी जा सकती है। हमें प्रसन्नता है कि किताबों वाले खड में भी हम गुजराती, ओड़िया पजाबी और हिन्दी आदि विभिन्न भाषाओं की कुछेक महत्वपूर्ण रचनाओं की ओर पाठकों का ध्यान आकृष्ट कर सके हैं। अगले अक से कोशिश यह भी रहेगी कि महत्वपूर्ण नई किताबों की यदि विस्तृत समीक्षा न हो सके तो भी उन पर कम से कम परिचयात्मक टिप्पणी जा सके। कुछ और नए स्तभ हम शुरू करना चाहते हैं लेकिन वह तभी सभव है जब कुछ और स्थान उपलब्ध हो। मार्च-अप्रैल के आगामी अक में पजाबी के कुछ वरिष्ठ कथाकारों की कहानियाँ शायद विशिष्ट रूप से पाठकों का ध्यान आकृष्ट करेंगी।

प्रसन्नता के इस भाव प्रकाश का आशय यह नहीं है कि साहित्य और जीवन में उठने वाले नए और पेचीदा सवाल ख़त्म हो चुके हैं। बीसवीं सदी के इन अतिम चार पाँच वर्षों की शुरुआत विकटतम रूप में हुई है। यदि कुछ हुआ है तो यही कि विनाश पतन, प्रतिहिंसा भुखमरी दरिद्रता इत्यादि की समस्याएँ विकरालतम रूप में दरपेश हैं। दूसरी ओर प्रगति, विज्ञान टेक्नोलॉजी वैभव विलास के अकल्पनीय नए शिखर उभरे हैं। स्याह सफ़ेद के इस प्रकट खेल को साहित्य इसी तरह स्याह-सफ़ेद रगतों में प्रकट करता रहे या इन के परे जा कर कुछ और दिखाए? दैनदिन जीवन हमें मोटी-मोटी व्यावहारिक अकाट्य स्थितियों-समस्याओं में उलझाए ही रखता है।

कला या साहित्य की माँग इन स ऊपर उठ कर कुछ दूरी स्थापित करते हुए, कुछ अधिक गहरी बात बताने या दिखाने की होती है। लेकिन जीवन और साहित्य क रिश्ते को इस तरह परिभाषित करना भी आज अधूरा और अपर्याप्त लगने लगा है। जब यथार्थ स्वय इतना विचित्र उन्मादक विकराल विद्रूप स्वर्गोपम इत्यादि अर्थात—हर तरह का हो परस्पर विरोधों से भरा हुआ हो तब यह सवाल बार-बार उठता है कि 'कथा' रच कर हम क्या हासिल करते हैं? हमारे समय का बीभत्स यथार्थ यदि हू-ब हू देखना हो तो अपराध खुफ़ियागिरी जासूसी और मनोरजन से जुडे भारी भरकम उपन्यासों में जिस प्रामाणिकता के साथ 'यथार्थ' देखने को मिलता है, वैसा सचमुच के उत्कृष्ट और श्रेष्ठ कथा साहित्य में शायद ही मिले। लेकिन क्या वह तथाकथित 'लोकप्रिय' कथा-साहित्य जो करोड़ों की सख्या में छपता बिकता है हमारी वे सभी अपेक्षाएँ पूरी कर देता है जो हम उत्कृष्ट साहित्यिक-कलात्मक कृतियों से अब तक करते आए हैं?

'श्रेष्ठ साहित्य' क्या करता है? उस से अब इस विकटतम युग में क्या अपेक्षाएँ की जाएँ? क्या हम बने-बनाए चश्मों और साँचों में साहित्य को रगा ढला देख कर सतुष्ट रहें? हम साहित्य में यथार्थ को खोजें, आदर्श को खोजें समाधान को ढूँढें? या ऐसा कुछ न करें—उसे केवल मनोरजन का माध्यम मानें? रचनाकार 'स्वात सुखाय' लिखें और पाठक भावक-रसिक उसे 'काव्यशास्त्रविनोद' में समय बिताने का साधन मात्र मानें? हमें अहसास है कि आज जो पेचीदा सवाल उठ रहे हैं उन का एक सरलीकृत रूप मात्र हम ऊपर दे पाए हैं। पश्चिमी आलोचना-सिद्धान्तों के निरूपण में पिछले बीस पच्चीस बरसों में अनेक भूचाल आए हैं। इस का आभास *समकालीन भारतीय साहित्य* में प्रकाशित आलेखों और आलोचनाओं में भी यदा-कदा पाठकों को मिलता रहा है। लेकिन भारतीय आलोचना जगत में—यहाँ तक कि भारतीय अंग्रेज़ी साहित्य के आलोचना ससार तक में—अपने भीतर से ही कोई बड़ी हलचल पैदा होती नहीं दिखाई देती। इस नए वर्ष में एक बार फिर इस अभाव की चर्चा करके हम गण्यमान्य विद्वानों और आलोचकों से केवल यह प्रार्थना ही कर रहे हैं कि वे अपने औज़ारों की ज़रा कुछ और सख्त पड़ताल करें—और यदि संभव हो तो *समकालीन भारतीय साहित्य* के सुधी पाठकों तक किसी विशेष अंक में अपनी ऊहापोह पहुँचाएँ। कुछेक पत्रिकाओं ने इस दिशा में प्रयास किए हैं जिन का स्वागत करते हुए भी यह कहना ज़रूरी लगता है कि साहित्य विमर्श को कुछ और अधिक विचारोत्तेजक बनाने का अभियान बड़े पैमाने पर चले।

—गिरधर राठी

ओम गोस्वामी

आधुनिक डोगरी साहित्य दिशा और दशा

समकालीन जीवन स्थितियों से जुडने और जूझने की आकाक्षा साहित्य में भी रूपायित होती है। समीक्षा शास्त्र में इसे आधुनिकता के नाम से जाना जाता है। आधुनिक साहित्य में समय की ललकारों का निरूपण भी किया गया दिखाई पडता है और सतत दिशान्वेषण की चाह भी प्रतिबिम्बित हुई है। डोगरी साहित्य में भी आधुनिकता नित्य नए अनुभव से साक्षात्कार की आकाक्षा ले कर आगे बढा है। बदलते जीवन मूल्यों का प्रणयन विशेषतया कहानी और एकाकी विधा में स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होता है जबकि आज की डोगरी कविता गज़ल विधा के शैली प्रयोग तले दम तोड रही प्रतीत होती है। यद्यपि यह सत्य है कि आधुनिकता के स्वर सब से पहले कविता में ही उभरे थे और—पाश्चात्य जीवन मूल्यों के भारतीय जीवन शैली पर प्रभाव को नकारने के प्रयोजन से ही सही—आधुनिक दृष्टि अनायास ही उभर आई थी। नए तवरों और बदलते स्वरों का चीन्हते हुए डोगरी में जो प्रथम रचनात्मक तब्दीली दिखाई पड़ती है वह प सतराम शास्त्री की इतिवृत्तात्मक कविता से प्रादुर्भूत होती है।

सतराम शास्त्री रियासत जम्मू-कश्मीर के महाराजा प्रतापसिह के समकालीन थे। महाराजा प्रतापसिह का राज्याभिषेक सन् 1890 ई में हुआ था। उन के राज्यकाल में घटी एक घटना जिस ने आने वाले समय में डोगरी को पगु बना दिया वह थी डोगरी के स्थान पर उर्दू को राजकीय भाषा के स्थान पर समासीन करना। इस एक घटना ने न केवल डोगरी भाषा के प्रकृत अधिकार पर घातक आघात किया बल्कि इस क्षेत्र की सास्कृतिक विशिष्टता और ऐतिहासिक धरोहर को धूल धूसरित करने की भूमिका भी बाँध दी। शिक्षण सस्थाओं में उर्दू पढ़ाई जाने लगी। इस से यह बात स्पष्ट हो कर उभर आती है कि महाराजा रणबीरसिंह के दौर में डोगरी को मिला राजकीय सरक्षण व्यावहारिक रूप से किसी काम का सिद्ध नहीं हो सका। साहित्यिक उन्मेष की नव-अकुरित आकाक्षाओं को फलने फूलने से पहले ही मसल दिया गया। अभिजात वर्ग में उर्दू और पजाबी का प्रचलन बढने लगा। डोगरी प्राय ग्रामीण लोगों तक सीमित रह गई।

इस दौरान रचे गए लोक साहित्य में जीवन की विडबनाओं का रेखाकन इस बात को सामने लाता है कि जन सामान्य नई-नई अनुभूतियों को सदा शब्दबद्ध करता रहता है। डुग्गर भूमि के कवि बहुधा बहुभाषी रहे हैं। उत्तर मध्य युग में पुराने कवि डोगरी के साथ-साथ ब्रजभाषा और सस्कृत आदि में भी साहित्य रचते रहे थे। किन्तु बीसवीं सदी डोगरी के लिए निराशा भरा सदेश ले कर आरभ होती है। इसी दौरान भारत में नए युग का सन्देश देने वाली सामाजिक एव राजनीतिक गतिविधियाँ शुरू होती हैं। साहित्य भी समय के स्वर भाँपने का जतन करता है। कुछेक दशकों के गतिरोध के उपरात डोगरी में इक्का-दुक्का रचनात्मक जतन होने लगते हैं। महाराजा प्रतापसिह के राज्यकाल में आर्य समाज की गतिविधिया जम्मू प्रात में प्रसार पाने लगी थीं। सामती मानसिकता में जी रहे जम्मू के कट्टरपथी धार्मिक ढाँचे में अनेकानेक रूढ़ियाँ व्याप्त थीं। महाराजा हरिसिंह का दौर आते-आते कवि वर्ग इन रूढिया को ले कर अपने विचार व्यक्त करने लगा था। 'करतूताँ डोगरियाँ' शीर्षक कविता में सत राम शास्त्री एक ओर जहाँ व्यग्य द्वारा सुधार की आकांक्षा व्यक्त करते हैं वहीं रूढिवाद को नकारते दिखाई पड़ते हैं। उन की सोच

नाम भी लिया जाता है। बीत चुके लम्हों का दर्द कुछ खो जाने की अनुभूति मन एव वातावरण में टीसता नैराश्य उन की कविता के केन्द्र में टिका हुआ दीखता है। स्वच्छदतावादी भाव भूमि का आधार बना कर लिख रहे दो अन्य कवि अश्विनी मगोत्रा और कुंवर वियोगी इस धारा के सशक्त हस्ताक्षर हैं। अश्विनी मगोत्रा नप तुले शब्दों से अर्थगत चमत्कार पैदा करते हैं तो कुंवर वियोगी समृद्ध शब्दावली के प्रयोग से विविध भाव चित्रों का निर्माण करते हैं। युवा पीढ़ी में ज्ञानेश्वर और विजय वर्मा विलक्षण काव्य प्रतिभा का प्रदर्शन कर रहे हैं।

वैचारिक धरातल पर यही दो प्रमुख प्रवत्तियाँ रही हैं किन्तु स्वामी ब्रह्मानन्द ठा रघुनाथ सिंह सम्याल रामलाल शर्मा तथा गंगाराम 'साथी' कमोबेश एक तीसरी धारा पर चलते दिखाई पडते हैं। अध्यात्मवादी एव समाजगत सुधार की आकाक्षा इन की कविता का प्रमुख स्वर रही है। जीवन के विरोधाभासों की खुल कर आलोचना करने की प्रवृत्ति इन्हें विशिष्ट पहचान प्रदान करती है। इधर कुलदीप सिंह जिन्द्राहिया ने 'छमका' नामक शैली की कविता लिख कर गतिरोधग्रस्त कविता को नयापन प्रदान किया है। 'छमक' चाबुक को कहते हैं। क्षणिका' जैसे इन चाबुकों की वर्षा पढने-सुनने वालो को अभिभूत कर देती है। व्यग से ओत प्रोत यह छोटी-छोटी कविताएँ विचार कविता की तरह हैं। इस विधा को खूब सराहा गया है।

बहरहाल प्रवृत्ति कोई भी हो यह बात ध्यान देने योग्य है कि शैली की दृष्टि से कविता ने किसी नए रूपबंध की तलाश नहीं की। कुछेक अपवादों को छोड कर इस की जड़ें सास्कृतिक अथवा पारपरिक धरातल से अपनी खुराक हासिल करती रही हैं। चरण सिंह और कुछेक परवर्ती युवा कवियों ने छंद विधान का उल्लघन अवश्य किया है परतु शैलीगत दृष्टि से कवियो में इस से अधिक कुछ करने का साहस दिखाई नहीं देता।

गत कुछ वर्षों में डोगरी कविता-यात्रा में नई प्रतिभाएँ भी सम्मिलित होती रही हैं। उन का अस्तित्व अधिकतर कवि गोष्ठियों से बँधा हुआ है। नई प्रतिभा प्राय स्वच्छदतावादी रोमानी भाव-व्यजना के प्रति आकर्षित दिखाई पडती है। इस कारण कई बार अनेक कवि एक ही लकीर पीटते दिखाई देते हैं। वे ऐसे विषयों पर पुन पुन लिखते हैं जिन पर उन से पीछे की पीढ़ी ने जम कर लिखा था। जिन बातों का दुहराव हुआ है वे हैं—पर्वत श्रृंखलाएँ उन पर छाए धुँधलके धुँधलकों में पैरों की पाज़ेब छनकाती गोरी कवि का व्यापक राष्ट्र प्रेम अथवा जन्म भूमि 'डुग्गर' का स्तुतिगान। इन के अतिरिक्त डोगरा क़ौम की वीरता और उस के सास्कृतिक गौरव के स्वरों को भी बार-बार दुहराया जाता रहा है। ये ऐसी बातें हैं जिन्हें न जाने किस व्यामोह में नया कवि अवश्य दुहराता है।

पाचवें दशक में कुछेक कवियों ने ग़ज़ल शैली में क़लम आजमाने का प्रयास किया था। लोगों ने चौंक कर इस की उपेक्षा की थी किन्तु धीरे धीरे स्थिति यहाँ तक पहुँच गई कि आज का डोगरी कवि ग़ज़ल कहने को कवि-कर्म का आवश्यक अग मानता है। प्रख्यात कवि दीनूभाई पत डोगरी भाषा में ग़ज़ल के उद्गम का श्रेय पाँचवें दशक की सामाजिक राजनीतिक परिस्थितियों को देते हैं। उन के कथनानुसार उस दौर का राजनीतिक वातावरण कुछ अस्पष्ट था। जम्मू-कश्मीर राज्य के भारत में पूर्ण विलय के लिए चलाया गया आदोलन तेज़ होता जा रहा था। (कश्मीर के) राजनीतिक कर्णधार अपनी वफ़ादारियाँ बदल रहे थे। कवियों के मन कुछ कहने को तड़प रहे थे। वातावरण में घुटन थी खुल कर बात करने की हिम्मत न थी। तूफ़ान से पहले का भयावह सन्नाटा था। कवि महसूस कर रहे थे कि जो कुछ होना चाहिए, वह नहीं हो रहा। दुविधा और असमंजस की इन्हीं परिस्थितियों ने ग़ज़ल को जन्म दिया।

बाद के वर्षों में यह विधा तमाम डोगरी कवियों की मनपसन्द शैली बनती गई है। पद्मा सचदेव और कुछ अन्य कवि ही अपवाद रहे हैं जिन्होंने सामर्थ्य होते हुए भी ग़ज़ल क्षेत्र में अनधिकार प्रवेश का प्रयत्न नहीं किया। इन वर्षों में यह स्थिति यह रही है कि प्राय हरेक कवि ग़ज़ल लेखन को कवित्व की निकष मान बैठा है। इस में सन्देह

नहीं कि ग़ज़ल में आवश्यक गहराई मौजूद है। डोगरी गजल में सामाजिक राजनीतिक वस्तुस्थिति मानवीय नियति विडंबना और व्यंग्य के अतिरिक्त मानसिक उद्वेलन के प्रसंगों को पूर्ण सफलता से व्यक्त किया गया है। गज़ल के रचना विधान में आवश्यक परिवर्तन किए गए हैं। मुख्य बात यह है कि इस के कवि-सत्य उपमा उपमान न तो फ़ारसी भाषा से लिए गए हैं और न ही उर्दू से, बल्कि इन्हें वस्तुनिष्ठ सत्य के अनुरूप गढने का प्रयास किया गया है।

ग़ज़ल गो शायरों में ओ पी शर्मा 'सारथी' सम्प्रदाय के शायरों का एक विशिष्ट मुकाम है। इन में वीरेन्द्र केसर और शाम तालिब अपनी विशेष पहचान बना चुके हैं। 'सारथी' सम्प्रदाय के अनेक कवियों यथा—प्यासा अंजुम, दीपक आरसी चमनलाल परवाना आदि ने अपनी रचनात्मक प्रतिभा का सफल प्रदर्शन किया है। नरसिंहदेव जम्वाल को अपने आप में एक पूरी संस्था होने का श्रेय जाता है। मूर्तिशिल्प एवं चित्रकला के अतिरिक्त इन्होंने परंपरागत और आधुनिक शैली की कविताएँ भी लिखी हैं। ग़ज़ल के वे पुराने खिलाडी हैं। 'सारथी' और जम्वाल की ग़ज़लें मुहावरे और प्रसादत्व (प्रसाद गुण) की दृष्टि से उर्दू गज़ल का मुक़ाबला करती हैं। गज़ल द्वारा अपनी अभिव्यक्ति की सामर्थ्य को नए पुराने अनेक कवि प्रकट कर रहे हैं परंतु यदि गजल का संदर्भ हो और पद्मदेव सिंह 'निर्दोष' तथा दर्शन दर्शी की बात न की जाए तो ग़ज़ल की बात अधूरी रह जाती है। निर्दोष की गज़लें सौष्ठव और सुकुमारता की दृष्टि से अपना सानी नहीं रखतीं। दर्शन दर्शी सूक्ष्म भावों का चितेरा है। इन दोनों ने डोगरी ग़ज़ल को ताज़गी प्रदान की है।

कवियों की प्रिय शैली होते हुए भी डोगरी गजल को उर्दू जैसा या शऊर और ज़बानदान श्रोता नसीब नहीं हुआ। इसलिए सफल प्रयोग होते हुए भी गजल विधा लोगों से कटी हुई है। अधिकांश कवियों के कविता छोड कर गज़ल की दिशा में चले जाने से छंदोबद्ध और स्वच्छंद दोनों कविता शैलियों का प्रणयन लगभग रुक सा गया है। इस से लगता है जैसे कविता का उद्यान उजड कर श्मशान में बदल गया हो। इस उद्यान के किन्हीं कोनों को पद्मा सचदेव कुंवर वियोगी मधुकर, रामलालसिंह भडवाल ज्ञान सिंह पगोच आदि ने हरा भरा बना कर रखा हुआ है।

यश शर्मा ने भी गजल विधा में क़लम को सफलता से आजमाया है परंतु मूल रूप से उन की पहचान एक सुललित गीतकार के रूप में की जाती है। उन के पथ पर चलते हुए डॉ चंपा शर्मा और ज्ञानेश्वर ने रसाल गीत डोगरी को दिए हैं। राष्ट्रीय भावना को भी इन के द्वारा उद्बोधन प्राप्त हुआ है। प्रद्युम्न सिंह जिन्द्राहिया गीतकार होने के साथ-साथ सुप्रसिद्ध लोक-गायक भी हैं। उन के गीतों में डुग्गर धरती की सोंधी महक भरी पडी है। कवि मानस में प्रकृति का अनिंद्य सौन्दर्य भरा हुआ है। शिवराम 'दीप' राम सन्यासी हमत सोठ कृष्णलाल मस्त डॉ अरविन्द प्रभृति कवि भाव पक्ष के धरातल पर नए-नए प्रयोग कर रहे हैं तो कुँवर वियोगी और अभिशाप क्रमशः 'सॉनेट्स' और 'लांगर पोयम' की अंग्रेज़ी में अप्रचलित हो चुकी शैली को डोगरी में जीवनदान देने के लिए सन्नद्ध दिखाई पडते हैं।

समग्र रूप से आज की डोगरी कविता का स्तर तसल्लीबख्श नहीं है विशेषतया पाँच दशक पूर्व शुरू हुए साहित्य आंदोलन के संदर्भ में आज की रचनाशीलता दिशाहीन दिखाई पड़ने लगी है। इस अरसे में वे कविताएँ चर्चित हुई हैं जिन्होंने समय की धडकन को पहचाना है। यशपाल 'दीप' की 'काला माह्नू' और मोहन दानूभाई पंत की 'आदमी दे हत्थ' और 'खंडहर' पद्मा सचदेव का 'तवी ते चन्हाँ' और 'गंगा नियां मंडियां' चरण सिंह की 'दो कींगर' तथा 'इक भुआगड़ इक कडियाली' सरीखी कविताएँ आधुनिक दौर की महत्त्वपूर्ण कविताएँ रही हैं।

युगीन सत्य ही मानवता की साँझी धरोहर है—इस वैचारिकता को उन्होंने भारतीय और इस्लामी उपमेय-उपमानों क सुचारू प्रयोग से उघाड़ा है। तमाम कविताओं में जीवन के किसी मार्मिक तथ्य अथवा गहन अनुभूति को सधे हुए सुर प्रदान किए गए हं। नए विश्वास और आशावाद स भविष्य की ओर बढ रही आज की डोगरी कविता की नैया में तीन चार पीढ़ियों के कवि शामिल हैं।

डोगरी में सृजनात्मक गद्य का उद्गम आज से छह दशक पूर्व हुआ था। यद्यपि डोगरी का पहला एकांकी 1935 ई में मचित हो चुका था तो भी गद्य लेखन की निरतर परपरा भारतीय स्वतत्रता के वर्ष 1947 ई से ही प्रारम्भ होती है। 1946 47 ई में भगवत् प्रसाद साठे का कथा सग्रह *पैहला फुल्ल* छपा और इस स कहानी विधा का प्रवर्तन हुआ। इस सग्रह में सग्रहीत कहानियाँ लोक-कथा क 'मोटिफों' (आशयों) से प्रभावित हैं परतु इस क उपरात कहानी विधा जिस तेज़ी से आगे बढी वह आश्चर्य का विषय है। कवल सख्या की दृष्टि से नहीं श्रेष्ठ साहित्यिक प्रतिमानों की कसौटी पर भी खरा उतर कर यह विधा समकालीन भारतीय कहानी के बराबर आ कर खड़ी हो जाती है। आज की कहानी जीवन का यथार्थ प्रस्तुत कर रही है। आरभिक कहानी का भावुकतावाद अब विचारवाद में परिवर्तित हो चुका है। प्रो मदन मोहन तथा नरेन्द्र खजूरिया की कहानियाँ लगभग तमाम भारतीय भाषाओं में अनूदित प्रकाशित हो चुकी हैं। वेद राही डोगरी के साथ-साथ हिन्दी में भी नाम कमा चुके हैं। परवर्ती कहानीकार कहानी को अभिव्यक्ति एव भाषा के धरातल पर काफ़ी आगे ल आए हैं। चमन अरोडा डॉ ललित डॉ मनोज तथा कृष्ण शर्मा की कहानियाँ आधुनिक कहानी को दृढ़ नींव पर स्थापित करती कहानियाँ हैं। इन कहानियों में अपने वक्त का दर्द पूर्ण ईमानदारी एव सन्नद्ध-प्रतिबद्धता के धरातल पर सही तेवरों में उरेहा गया है। ओ पी शर्मा 'सारथी' की प्रारभिक कहानियाँ जीवन के आसपास की एव भीतर की कहानियाँ हैं। इधर उन की कहानियों में गहन प्रतीकात्मकता जोर पकड रही है। बधु शर्मा तथा देशबधु डोगरा 'नूतन' भी डोगरी की कथा-यात्रा में विशिष्ट स्थान रखते हैं। बंधु शर्मा अपनी भाषाई सामर्थ्य से एक चमत्कार की रचना कर देते हैं जबकि देशबधु मानवीय मानस को चमत्कृत करने वाले सालम कथा प्रसग हू-ब हू शब्दों में ढाल देते हैं।

कहानी से जुड़ और भी कई नाम हैं। इधर ललिता मेहता के वर्षों बाद डोगरी कथा-रचना में महिलाओं के एक वर्ग ने अपनी विशेष शिनाख्त क़ायम की है। सुदेश राज निर्मल विक्रम, उषा व्यास और शशि पठानिया के नाम इस सदर्भ में उल्लेख योग्य हैं। इस वर्ग ने कहानी का अतरग स्पर्श देने क अतिरिक्त महिला जीवन का मनोवैज्ञानिक चित्राकन अपनी कहानियों में किया है। यहाँ यह बात उल्लेखनीय है कि ऐसा महसूस किया जाने लगा है कि डोगरी साहित्य की अन्य विधाओं को पछाड़ कर कहानी आगे निकल गई है। एकाकी उपन्यास नाटक निबध आदि तमाम विधाएँ चाहे कहानी से उत्कृष्टता की दृष्टि स किसी तरह कम नहीं हैं फिर भी विकास यात्रा में व उस उत्कर्ष बिन्दु का फ़िलहाल छू नहीं पाईं जिसे कहानी ने कब का छू लिया हुआ है। एकाकी विधा क ग्यारह वर्ष बाद पनपने वाली कहानी विधा कहीं अधिक समृद्ध हुई है और निरतर आगे बढती जा रही है। जबकि सभवतया दृश्य-श्रव्य होने क कारण एकाकी को विकास की वह गति प्राप्त नहीं हो सकी। कथाकारों की युवा पौध में शिवरत्न सुशील और आम विद्यार्थी ने कुछेक अच्छी कहानियाँ लिखी हैं। भविष्य में उन से कुछ यादगार रचनाओं की अपेक्षा की जा सकती है।

गद्य की विभिन्न विधाओं का राज्य की कला संस्कृति तथा भाषा अकादमी की पत्रिका *शीराज़ा* (डोगरी) द्वारा निरतर प्रोत्साहन मिला है। इस के अतिरिक्त डोगरी संस्था की पत्रिका *नमीं चेतना* न भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। इन विधाओं के परिवर्धन में रेडियो कश्मीर जम्मू क साहित्यिक कार्यक्रमों न भी सराहनीय कार्य किया है।

डोगरी गद्य के नवोत्थान काल में उपन्यासों की रचना भी हुई है। कुछ विशेष उपन्यासा के नाम य हैं *धारा ते धूड़ा शानो फुल्ल बिना डाली साझी धरती बखले माहनू कैदी मकान त्रेह् समुदर दी नगा रूक्ख प्योकै भेजो* आदि। देशबधु डोगरा 'नूतन' का उपन्यास *क़ैदी* जिस पर उन्हें 1982 ई का साहित्य अकादेमी पुरस्कार प्रदान किया गया डागरी गल्प की मार्काखेज उपलब्धि मानी जा रही है। कुछ दूसरे उपन्यासों में स्थानीय जीवन की प्रामाणिक झलकियाँ बड़ा सफलता से क़लमबद की गई हैं।

परतु प्रकाशित उपन्यासों की सख्या पर्याप्त नहीं है। हालाकि लेखकों के पास पाडुलिपिया का अभाव नहीं किन्तु वे प्रकाश में नहीं आ पा रहीं। यह एक चिन्तनीय स्थिति है। इस का एक मुख्य कारण है डोगरी में प्रकाशन व्यवसाय का नदारद होना—यही वजह है कि अधिकाश पुस्तकों को उद्यमी लेखक स्वय प्रकाशित करते ह और बेचने के झझट में अपनी रचनात्मकता को दाँव पर लगा देते हैं।

इस क बावजूद जैसा कि पहले कहा जा चुका है कहानी और उपन्यास का समग्र रूप स आकलन करन पर आधुनिक डागरी गद्य साहित्य में इन का पलड़ा भारी दिखाई देता है। आज तक साहित्य अकादेमी नई दिल्ली द्वारा डागरी भापा को दिए गए तेइस इनामा में से नौ पुरस्कार उपन्यासा अथवा कथा सग्रहों पर मिले हैं जबकि शष चौदह कविता सहित अन्य विधाओं पर। इसी तरह बहुत स श्रेष्ठ उपन्यासों एव सग्रहों पर जम्मू-कश्मीर राज्य की अकादमी द्वारा पुरस्कार प्रदान किए गए हैं।

डागरी गद्य के उत्थान की बात कहानियों या उपन्यासों पर आ कर खत्म नहीं होती बल्कि यहीं स शुरू होती है क्योंकि इन विधाओं की आड में अन्य विधाएँ भी आग बढ़ी हैं। गद्य की दूसरी विधाओं क तमाम लखक प्राय स्थापित कहानीकार ही हैं। बहुमुखी प्रतिभा से सपन्न कहानीकार ही डोगरी के निबंध लेखक नाटककार अथवा व्यग्य लेखक की भूमिका निभाते नज़र आते हैं। नाटक लेखन में दीनूभाई पत तथा रामनाथ शास्त्री के बाद प्रो मदनमाहन नरसिहदव जम्वाल तथा जितेन्द्र शर्मा न नाम अर्जित किया है। नई पीढ़ी में माहन सिह नाट्य लखन क अतिरिक्त अभिनय क्षत्र में भी सफल रह हं।

1935 ई में लिखा गया प्रथम डागरी एकाकी *अछूत* अछूतोद्धार एव पहाडी राग (सिफलिस) की समस्या क बार में लिखा गया सुधारवादी एकाकी था। इस पर आर्य समाज की हरिजनों को अपनाने की विचारधारा का सदश हावी दिखाई देता है। परतु उस समय क कट्टरपथी पहाड़ी समाज ने इस क लेखक विश्वनाथ खजूरिया का सामाजिक बहिष्कार कर दिया था। 1944 ई में प्रिंस ऑफ वल्स कालिज जम्मू में बख्शी बलवतराय द्वारा लिखित *शाहनी जी* नामक हास्य एकाकी मचित किया गया। 1947 ई में जम्मू में रडियो स्टशन स्थापित हान पर रडियाई नाटकों का प्रचलन बढा। पाठ्य एव मचीय एकाकी के अतिरिक्त नाटकों का लखन भी हाने लगा। कुछक नाटकों को तो पाँचवें दशक में सैकड़ों बार मच पर प्रदर्शित किया गया। आधुनिक दौर के प्रारभिक नाटक आदर्शवादी विचारधारा के थे। बाद में सहसा यथार्थवाद की प्रवृत्ति पनपने लगी। *जनौर, जाने दा क़ैद* तथा *काला सूरज* प्रयोगवाद क अलावा मचीय प्रतिमानों पर पूर्णतया सफल सिद्ध होने वाले नाटक हं। समृद्ध भाषाओं क नाटक से डोगरी नाटक की तुलना तो नहीं की जा सकती परतु अल्प परिमाण में जो कुछ स्तरीय लिखा जा रहा है—उस स भविष्य क प्रति आशा जरूर बँधती है। इसी तरह निबध क प्रति आशावान हुआ जा सकता है। रखाचित्र यात्रा निबध तथा विवरणात्मक लख भी लिखे गए हैं।

डोगरी में समालोचना विषयक कार्य अभी प्रारभिक अवस्था में है। जम्मू विश्वविद्यालय में डोगरी भाषा का स्नातकोत्तर विभाग खुलन स प्राध्यापकीय आलोचना पनपने की सभावनाएँ बढ़ गई हं। रचनात्मक समालोचना क द्वार पर दस्तक दी जा रही हं। परतु आलोचना क नाम स अभी भी धुरधर लखकों का टाँगें काँपने लगती हं।

समालाचना के क्षेत्र में बहुत कुछ किए जाने की सभावनाएँ बरक़रार हैं।

समीक्षा एव समालोचना की अनुपस्थिति में निर्वयक्तिक परख की परपरा को गहरा धक्का लगा है। इस स माना और पीतल एक हो गए हैं। प्रखर और बेबाक आलोचना के होने पर ही रचनात्मक साहित्य सोने की चौंध दिखाता है। इस क न होने पर अवसरवाद को खुल खेलन का अवसर मिल जाया करता है। आलाचना के नाम पर ठिठकन की नहीं इस का मामना करने की आवश्यकता है। सही सम्मति का स्वागत करने से ही डोगरी साहित्यकार सही दिशा में क़दम उठा पाएगा।

युगबाध की दृष्टि स डोगरी का रचनात्मक साहित्य दूसरी भाषाओ के सग क़दम मिला कर चल रहा है। डोगरी भाषा क लेखकों का स्व भाषा प्रेम जुनून की सीमा को छूता दिखाई देता है। आर्थिक लाभ की किसी सभावना के न होत हुए भी अपनी जेब से पर्याप्त धन व्यय करक पुस्तकें छापने और वितरित करने की परपरा इन पक्तियों क लखक न अन्यत्र कहीं नहीं देखी और यह भी एक तथ्य है कि जिस तजी से लिखा जा रहा है उस तेज़ी से छप नहीं रहा। लखका क पास पाडुलिपियाँ छापेखाने की प्रतीक्षा में पड़ी हुई हैं। उधर लेखकों क नए रेले लगातार इस रचनात्मक जुलूस में शामिल होत जा रह हैं और जो कुछ छप रहा है वह पाठकों तक कम ही पहुँच पा रहा है।

नवास्थानवादी साहित्यिक आन्दालन की उपलब्धियाँ बडी स्पष्ट हैं, परन्तु इस के साथ ही साथ कुछ प्रश्नचिह भी स्वत उभरने लगे हैं। जैस क्या आधुनिक डोगरी साहित्य अपनी ज़मीन वातावरण तथा इस की सामाजिक-आर्थिक समस्याओं को सीधे और प्रामाणिक रूप स रूपायित कर पा रहा है? विज्ञान द्वारा जीवन में प्रस्तुत किए गए विस्तृत परिवर्तन क्या साहित्य में उसी तरह परिभाषित हो पा रहे हैं? यह प्रश्न अन्य भाषाओं के सामने भी है। और यह भी सत्य है कि इलेक्ट्रॉनिक साधनों में क्रातिकारी विकास के बाद सब स बडा ख़तरा मुद्रित साहित्य क ही सामने खडा है। डोगरी में एक और बड़ी विचित्र बात यह है कि यहाँ प्रत्यक लेखक आधुनिकता का अनन्य दावेदार है। पाठकों के न होने पर भी भाषा ज़िन्दा ह और साहित्य रचा जा रहा है—तो एक प्रश्न और उभरता है कि क्या राजनीति द्वारा बोई गई अड़चनों को भाषाई समर्पण या जुनून द्वारा हटाया जा सकता है?

इस प्रश्न का उत्तर तो बाद में मिलगा। फ़िलहाल इस विकासशील भाषा की प्रयोगशाला में यह तजुर्बा कुछ-कुछ सफल होता लग रहा है और नए आशावाद को जन्म दे रहा है।

वेद राही

शवयात्रा

अर्थी के साथ सिर्फ सात लोग चल रहे थे। ऐसी उजड़ी हुई शवयात्रा कभी न देखी थी। राह चलने लागों की नजरों में शर्म झाँक रही थी। वो भी सोच रहे होंगे ये किस लावारिस की शवयात्रा है। टेढ़ी मेढ़ी बँधी हुई बदसूरत सी अर्थी जिस पर दो चार फूल भी न थे। न ही आगे कोई मटकी ले कर चल रहा था जिस में से कम से कम धुआँ तो निकल रहा होता। 'राम नाम सत्य है' की रोती सी आवाज़ सुनाई दे रही थी। जिस तरह सडक पर कूडा बुहारा जाता है उसी तरह हरिश्चंद्रजी की अर्थी को हम श्मशान घाट ले जा रहे थे।

आज श्मशान घाट पर काफी चहल पहल थी। तीन चार चिताएँ जल रही थीं। लागो की भीड में हमारी गिनती कम होने का किसी को आभास तक न हुआ। बस इज्जत बच गई। हम ने जल्दी से चुपचाप अर्थी को रस्सी खाली और हरिश्चंद्रजी को चिता पर रख दिया। मंत्र पढने के लिए कोई पंडित साथ न था न चंदन की लकडियाँ न घी के डिब्बे, न कोई फूल मोरपंख या दूसरी सामग्री। श्मशान घाट के इंचार्ज को मुर्दे के ऊपर डालने वाला कफन तक न मिला। वो ज़रूर समझ गया होगा कि इस नामुराद मुर्दे के पीछे रोने वाला कोई नहीं है। उस ने हम से कोई सवाल नहीं किया खुद ही दाह दे दिया।

आग को तेज़ होने में कुछ समय लगा। घी और दूसरी सामग्री न होने की वजह से चिता बीच में जलती-बुझती रही। जब आग की लपटें उठीं तब मुझे यूँ लगा जैसे ये किसी राक्षस की लपलप करती जिव्हाएँ हैं। उन की तरफ़ देखते हरिश्चंद्रजी के जीवन की सभी घटनाएँ मुझे याद आने लगीं। मेरा मन उन के प्रति श्रद्धा से भर गया।

मैं उन का मित्र न था। उम्र में उन से छोटा था। पर हमारे बीच मित्रता के क्षण भी आते रहते थे। ट्रेड यूनियन के दफ़्तर में मैं ने उन के नीचे तेरह वर्ष तक काम किया था। वो सैक्रेट्री थे और बिना तनख्वाह के काम करते थे। मैं तनख्वाह ले कर क्लर्क के तौर पर काम करता था।

हरिश्चंद्रजी के मातहत काम करना आसान नहीं था। वो निहायत ईमानदार व्यक्ति थे। अपने आप को लोगों का सेवक समझते थे। यूनियन का पैसा जनता का पैसा समझ कर किसी को हाथ भी न लगाने देते थे। ऑफ़िस के खर्च से वो सिर्फ़ चाय भर लेते थे। दूसरों को भी सिर्फ एक प्याली चाय ही पिलाते थे दूसरी बार पूछते तक न थे। वो एक समर्पित व्यक्तित्व थे। ट्रेड यूनियन के हलक़ों में उन का बडा आदर था। सियासत में उन की कोई दिलचस्पी न थी। उन का नाम लीडरों में शुमार न होता था पर भीतर ही भीतर तंज़ाम के मुआमले में उन के सलाह मशविरे के बगैर कोई काम सिरे न चढ़ता था।

अपने गुजारे के लिए उन के पास एक मामूली बिल्डिंग के एक कमरे में रहने और किसी मामूली होटल में दो समय का खाना खाने जितने पैसे होते थे। बस या रेल में जाने का किराया भी वो दे सकते थे। उन्होंने कभी मुझे अपने बारे में नहीं बताया पर इतने बरस साथ-साथ काम करने के कारण उन की बातों से मैं ने अन्दाज़ा लगा लिया था कि जब वो फ़िल्मों के लिए लिखते थे तब के कमाए कुछ पैसे बैंक में रखे थे जिन के ब्याज पर वो गुजारा कर रहे थे। वो सही मायने में साम्यवादी थे। मार्क्स की फ़िलासफ़ी उन्होंने घोंट कर पी रखी थी। वो इस दुनिया में

समता लाने वाले व्यक्ति थे। इस के लिए उन्होंने अपना सर्वस्व दे दिया था। लोकशक्ति में उन्हें पूरा भरोसा था। उर्दू के एक मशहूर शायर का ये शेर वो अक्सर गुनगुनाते रहते थे

मैं अकेला ही चला था जानिबे मंज़िल मगर
लोग साथ आते गए और कारवाँ बनता गया।

उन का कोई घर परिवार रिश्तेदार है या नहीं इस बारे में उन्होंने कभी कोई बात न की। अगर कोई दूसरा इस विषय में बात करता तो वो फ़ौरन बात को घुमा देते थे। फिर भी इसान तो इसान ही है न बग़ैर नाते रिश्तेदारों के वो कैसे रह सकता है। मेरा विश्वास है कि इस बात की कमी को वो ट्रेड यूनियन की तहरीक में काम करते हुए पूरी कर लेते थे। वो इतने सच्चे मन से काम करते थे कि मज़दूरों के कारवाँ में वो सगे-संबंधियों की निकटता महसूस कर लेते थे। वो बहुत बड़ी बिरादरी के सदस्य थे। मुमकिन है इसीलिए उन्होंने शादी भी नहीं की। अंत तक अकेले ही रहे। पर मैं समझता हूँ उन का जीवन कुछ इतना नीरस भी न था। जवानी में जरूर उन पर भी बहार आई होगी। उन की शक्ल सूरत अच्छी खासी थी और व्यक्तित्व में एक आकर्षण और मिठास थी। काम करने वाली स्त्रियाँ उन के पास मँडराती और हँस हँस कर बातें करती रहती थीं। बहुत दिन पहले एक बार उन्होंने बातों बातों में बताया था 'चाहे मैं अकेला ही हूँ पर इस का मतलब ये नहीं कि मेरी जिन्दगी में कोई औरत आई ही नहीं। जब उन्होंने ये बात कही तब मेरे और उन के बीच दोस्ती का एक आरज़ी पल जन्म ले चुका था। मैं ने मौक़े का फ़ायदा उठाते हुए पूछा

'तो फिर आप ने शादी क्यूँ नहीं की?

उन्होंने कहा 'शादी ज़िम्मेवारी और समझौते की चीज है। मेरे स्वभाव के साथ ये दोनों बातें मेल नहीं खातीं। इन मुसीबतों में मेरे जैसा आदमी बँध नहीं सकता। आजाद पंछियों के लिए भी संसार में खाने पीने का प्रबंध होता ही है।

हरिश्चंद्रजी बुद्धिमान प्रतिभावान और उच्च कोटि के साहित्यकार थे। स्क्रीनप्ले और डायलॉग लिखने का काम भी उन्होंने किया था। उस क्षेत्र में उन के यार बेलियों का बड़ा लंबा चौड़ा सर्किल था पर ट्रेड यूनियन की तहरीक में आ कर उन से वो सभी कुछ छूट गया था। उन्हें महसूस होता था कि उन का असली कार्यक्षेत्र यही है। यहाँ उन्हें अपनी सार्थकता अधिक उजागर लगती थी। लाखों करोड़ों लोगों के कारवाँ में मिल कर उन के सुख दुख में शामिल हो कर उन्हें अपना अस्तित्व अधिक ठोस अधिक उपयोगी और अधिक मूल्यवान लगता रहा। जब वो काम करते थे तो मानो नशे में चूर होते थे। खाना पीना सोना सब ग़ायब हो जाता होशोहवास भूल जाते थे। उन के इस स्वभाव से मैं काफ़ी नाराज होता पर उन्हें क्या कहता।

इसी तरह कई बरस बीत गए। मेरे देखते देखते हरिश्चंद्रजी ज़िन्दगी की ढलान पर आ गए। अचानक उन के साथ ऐसा बुरा हुआ जैसे पहाड़ की चोटी से नीचे लुढ़क गए हों। पहला झटका उन्हें तब लगा जब वो सात सालों के बाद यूनियन का चुनाव हार गए। चुनाव वो पहले भी हार थे पर इस बार जीतने वाले मौक़ापरस्त बेईमान और स्वार्थी लोग थे। वो मज़दूरों के हितचिन्तक नहीं थे। पूँजीपतियों का साथ देते थे। उन का जीतना तहरीक के लिए एक खतरा था। उन्होंने मज़दूरों को ग़ैरजम्हूरी तरीक़े के साथ आश्वासन दिए और उन के वोट खींच लिए। हरिश्चंद्रजी हैरान हो कर देखते रह गए।

इस के बाद उन्हें दूसरा झटका तब लगा जब सोवियत यूनियन का शीराज़ा बिखरा। लेनिन का बुत टूट गया। उन की क़ब्र खुद गई और हिन्दोस्तानी कम्युनिस्ट पार्टी के क़दमों के नीचे से ज़मीन निकल गई। इन धमाकों ने उन्हें तोड़ कर रख दिया। मुझे कहने लगे

'मार्कसिज्म का ये अजाम देख कर अब मैं जीना नहीं चाहता। मैं न कभी सपने म भी नहीं सोचा था कि अमेरिकी साम्राज्य की चालें इस हद तक कामयाब हो जाएँगी। येल्तिसन उन का एजेंट है। हरामजादे ने दुनिया भर के गरीबो मेहनतकश मजदूरो की जड खोद कर रख दी हैं। अब इस दुनिया का क्या होगा। मुझे कोई उम्मीद नजर नहीं आती। अपनी सारी उम्र की साधना का ये अत देखने के लिए मैं जिन्दा क्यूँ रहा।

उन्हीं दिनों हरिश्चद्रजी को एक और मुसीबत ने भी घेर लिया। वो जिस मकान में रहत थे उस का मालिक बहुत दिनों से उन्हें वहाँ से निकालना चाहता था। वो मकान कैसे छाड़ते और फिर बबई जैसे शहर में मकान छोड कर कहाँ जाते। मकान मालिक ने उन पर मुकदमा ठोंका हुआ था। दो चार बरसो से केस लटक रहा था। जिन दिनों हरिश्चद्रजी पहाड की चोटी पर से ढुलक रहे थे उन्हीं दिनों ये केस भी हार गए। मालूम हुआ इन के वकील ने मुद्दई के वकील से मिल कर जज का खुश कर दिया था और फैसला मकान मालिक के हक में हो गया। हरिश्चद्रजी बेघर हो गए। बड़ी मुश्किल से बबई शहर के बाहर बनने वाली एक बस्ती में उन्हें सिर छुपाने के लिए एक कमरा मिला। वहाँ जा कर वो अपने वातावरण से कट गए। मैं कई बार उन्हें वहाँ जा कर भी मिला था। अब उन का स्वास्थ्य ठीक न रहता था। यूँ लगता था जैसे अचानक ही उन की उम्र की साँझ घिर आई है। वो अकेले-अकेले से लगने लगे। मैं ने उन्हें कहा अगर कभी मेरी जरूरत पडे तो मेरे दफ्तर में फ़ोन करवा दीजिएगा।

एक दिन उन्हें मेरी ज़रूरत पड़ गई। उन के पड़ोसी का फ़ोन आया कि हरिश्चद्रजी को दिल का दौरा पडा है और वो हिन्दुजा अस्पताल में दाखिल हैं। मैं उन्हें वहाँ देखने गया। बडे कमज़ोर हो गए थे। मुझे कहने लग 'हमारा दिल पक्का यार है हमार साथ-साथ ये भी कमजोर हो गया है। उन क कहने पर मैं उन के एक पुराने दोस्त कामरेड शिवपुरी को बुला लाया। शिवपुरी उन की बडी कद्र करता था। वो ज़बरदस्ती उन्हें अपने घर ले गया। कुछ दिनों बाद मैं हरिश्चद्रजी को मिलने शिवपुरी के घर गया। तो पता चला कि एक दिन पहल वो किसी को बिना बताए वहाँ स चले गए हैं। शिवपुरी उन को खोजते उन के घर पर गए तो वो वहाँ मौजूद थे। कहन लगे 'मैं ने सारी उम्र अकेले ही काटी है घर गृहस्थी की कोई जिम्मदारी नहीं उठाई। अकले रहने का आनद लिया। अब उम्र के अंतिम चरण में उन यारो को तकलीफ क्यूँ दूँ, जिन्होंने सारी उम्र गृहस्थी की चक्की में पिसत हुए काटी। आप का तकलीफ देने का मुझे कोई हक़ नहीं। मैं जिस तरह अकेला जिन्दा रहा हूँ, उसी तरह मरना भी चाहता हूँ।

हरिश्चद्रजी में पता नहीं कैसा चुबक था। मैं हमेशा उन्हें मिलता ही रहा। उन्होंने चुनावों में हिस्सा लेना बद कर दिया था फिर भी यूनियन की मीटिंग में उन की ज़रूरत होती तो वो आ जात थे। वो जब भी ऑफ़िस में आते मैं चाय पीन के बहाने उन्हें बिठाए रखता। वो मुझे अपने बारे में तफसील स बतात थे। उन्होंने बाज़ार में खाना बद कर दिया था। डॉक्टर ने उन्हें तेल घी खाने की मनाही कर दी थी। वो सब्जी खुद सफोला में बनात थे। सफोला में चिकनाई नहीं होती। बने बनाए फुलके पडोस से आ जात थे। उस क बदले वो उन क घर पूरा आटा ला के रखते थे। एक दिन मैं उन के घर गया तो उन्होंने मुझे भी खाना खिलाया। उन के साथ बातें करते-करते रात के ग्यारह बज गए। वो बता रहे थे अब उन्होंने अखबार पढ़ना बद कर दिया है। खबरें पढ कर उन का खून उबलने लगता है। वो किसी का ग़लत बात करते हुए देखते हैं तो उन्हें गुस्सा आ जाता है और अब वो अपने गुस्से पर कन्ट्रोल नहीं कर सकते। फिर वो इस बात पर मजाक करते हुए बोले 'ये सारे आमार बुढ़ापे के हैं।

जिस ज़माने में वो यूनियन के सेक्रेट्री थे तब से दो यूनियन के लोगों में झगडा चलता आ रहा है। उस का फैसला करवाने के लिए उन का वहाँ जाना जरूरी था। फिर दफ्तर की तरफ से ही मुझे उन के साथ जाना पडा था। वहाँ एक दिन में काम खत्म नहीं हुआ तो हम दोनों को रात में भी वहीं रुकना पडा। हम ने यूनियन के दफ्तर में ही डेरा जमा लिया। रात को लौटने से पहले उन्होंने कमीज उतारी तो मैं ने देखा—उन का बनियान छलनी हुई

पड़ी थी। मैं टकटकी लगा कर देखने लगा तो वो समझ कर बोले 'मैं अब कोई भी नया कपड़ा नहीं खरीदता। मैं न पूछा 'क्यूँ?' तो वो बोले मुझे महसूस होता है अब कभी भी जाने का समय आ सकता है। मैं फ़िज़ूलखर्ची क्यूँ करूँ? उन की ये बात सुन कर मेरा मन उदास हो गया। मैं ने सोचा क्या आदमी यहाँ तक निराश हो सकता है?

आधी रात को झटके से मेरी आँख खुल गई। हरिश्चंद्रजी मुझे हिला हिला कर जगा रहे थे। मैं ने जल्दी से उठ कर बिजली जलाई और देखा उन का चेहरा सफ़ेद हो गया था और वो पसीने से भीग गए थे। मैं ने घबरा कर पूछा 'क्या बात है? उन्होंने काँपती हुई आवाज में कहा

'बहुत पसीना आ रहा है।

मैं ने कहा 'पंखा तेज कर दूँ।'

'नहीं लगता है मुझे दिल का दौरा पड़ने वाला है।

मैं ने घबरा कर कहा 'आप लेटे रहिए, मैं टैक्सी ले आता हूँ फिर आप को अस्पताल ले चलूँगा।

'नहीं मैं भी साथ चलता हूँ।

मैं समझ गया—उन्हें डर लग रहा था। मैं उन की बाँह पकड़ कर उन्हें धीरे धीरे बाहर ले आया।

हम बहुत देर सड़क पर खड़े रहे। कोई टैक्सी या स्कूटर नहीं दिखाई दिया। मैं ने कहा आप यहीं बैठिए, मैं अस्पताल जा कर टैक्सी ले आता हूँ।

'नहीं नहीं, रहने दो पसीना कम हो गया है। यहां हवा भी बह रही है मुझे लगता है दौरा टल गया है।

मैं ने उन की तरफ़ देखा। घबराहट कुछ कम हो गई लगती थी। मेरी साँस में साँस आई। वो धीरे धीरे कमरे की तरफ जाने लगे। मेरे कानों में आवाज़ आई वो अपने आप से बातें कर रहे थे।

अच्छा किया हरिश्चंद्रजी बहुत अच्छा किया।

मुझ से रहा न गया। मैं ने पूछा 'महाराज! आप ने क्या अच्छा किया? उन्होंने उत्तर दिया 'मैं चालीस बरसों से लगातार डायरी लिख रहा था। कोई दस बड़ी-बड़ी डायरियाँ हैं। पिछले दिनों मैं वो सारी डायरियाँ समुद्र में बहा आया। मेरा कोई भरोसा तो है नहीं कब लुढ़क जाऊँ क्या पता? उन डायरियों में बहुत लोगों के बारे में बहुत कुछ लिखा हुआ था। वैसे ही किसी की मिट्टी पलीत करने का क्या फ़ायदा?

कमरे में आ कर हम फिर लेट गए। पर नींद नहीं आई। अचानक मुझे ख़याल आया बाहर का दरवाज़ा बंद नहीं किया। मैं दरवाज़ा बंद करने उठा तो हरिश्चंद्रजी बोले 'रहने दो दरवाज़ा खुला ही रहने दो मुझे दरवाज़ा बंद करके सोने की आदत नहीं है।

मैं वापस आ गया और लेट गया पर मन में एक संशय उठ गया था। मैं ने पूछा 'क्या घर में भी आप दरवाज़ा बंद करके नहीं सोते?

'नहीं। उन्होंने उत्तर दिया।

'वो क्यूँ। मैं ने पूछा।

उन्होंने कहा 'जहाँ मैं पुराने मकान में रहता था वहाँ बरसाती में एक मद्रासी अकेला रहता था। किसी को उस की मृत्यु का पता ही नहीं चला। तीन दिन बाद जब सारे मुहल्ले में बदबू फैली तो लोगों को उन का ख़याल आया। कमरे का दरवाज़ा खोल कर लोगों ने देखा—उस की लाश में कीड़े पड़ गए थे उसे उठाना भी मुश्किल था। मैं तो वहाँ खड़ा भी न हो सका। वो बदबू मेरी नाक से कभी अलग न हुई। तब से मैं रात को दरवाज़ा बंद करके नहीं सोता। मुझे कीड़ों से बड़ा डर लगता है। उन की ये बात सुन कर मेरे रोंगटे खड़े हो गए थे और मन में एक

अजीब तरह का भय समा गया था। उस रात मैं फिर एक पल भी न सो सका।

आज सुबह दफ्तर का एक आदमी जो वहीं रहता था। सुबह सात बजे ही मेरे पास आ कर कहने लगा 'हरिश्चंद्रजी के पड़ोसी का टलीफोन आया था। रात उन की मृत्यु हो गई आप का बुलाया ह।

मैं साढे आठ बजे वहाँ पहुँच गया था। दो-तीन पडोसी मिल कर अर्थी बना रहे थे। पता नहीं उन में से किस ने बाँस वग़ैरह लाने के लिए पैसे खर्च किए थे। उन के हाथ जल्दी जल्दी काम निपटा रहे थे। वो चाहते थे शीघ्रता से श्मशान घाट जा कर काम खत्म हो और वो अपने-अपने घर जाएँ। मैं भीतर गया। हरिश्चंद्रजी जमीन पर चित्त लेटे हुए थे। उस कमरे में नितांत अकेले। उन का अकेलापन किसी फंदे की तरह मुझे अपनी छाती में कसता सा लगा। मैं उन्हें अंतिम बार नमस्कार करना चाहता था पर कर नहीं सका। भाग कर उस दमघोंटू कमरे से बाहर आ गया।

बाहर अब पाँच सात लोग इकट्ठे हो चुके थे। पडोस की दो चार स्त्रियाँ अपने-अपने दरवाज़े पर खडी हो कर अर्थी बनती देख रही थीं। नौ बजे तक सारी तैयारी हो गई। हरिश्चंद्रजी को अर्थी पर बाँध दिया गया। कुल मिला कर हम सात लोग थे। चार लोगों ने अर्थी उठा ली। बाक़ी तीन रास्ते में कँधा बदलते रहे। कोई न जानता था वो ये फर्ज क्यूँ निभा रहे हैं। ये कोई फ़र्ज़ है या बेगार। सभी को यूँ लगता था जैसे वो कोई ऐसा क़र्ज़ चुका रहे हैं जो उन्होंने कभी न लिया था।

चिता आधी जल चुकी थी। कपाल क्रिया की आवाज आई तो सब ने एक-दूसरे को देखा। सब की नज़रों में एक ही बात थी— अब चलना चाहिए।' श्मशान की उस भीड में ये देखने वाला कोई न था कि इस चिता का कोई पूछने वाला है या नहीं। धीरे धीरे सब वहाँ से निकलने लगे मैं भी उन के साथ था।

डोगरी से अनुवाद पद्मा सचदेव

ओम गोस्वामी

जीवन-युद्ध

उस अघोषित युद्ध के दो पक्ष थे—मास्टर राँझूराम बनाम दुनिया। और मास्टरजी निरंतर जीत पर जीत दर्ज किए जा रहे थे। मगर एक दिन अचानक एक धमाके ने उन्हें बेबस बना डाला था। एकाएक सारी बाज़ी उलट गई थी। वे टकटकी बाँधे सहदेव की ओर देखे जा रहे थे।

न जाने स्वयं को वे अपने ही बेटों का अपराधी क्यों मानने लगे थे। सहदेव उन की आखों में आँखें डाले तर्क-वितर्क किए जा रहा था। उन के पराजय बोध की सीमा रेखा यहीं से शुरू होती थी। उस की इतनी हिम्मत कि पाँव पर खड़े होते ही उस रिश्ते को धता बता दे जिसे बरसों तक उन्होंने अपने खून से सींचा था! बाप और बेटे के रिश्ते को प्रेम की डोरी से बाँधे रखने में उन का विश्वास नहीं था। शायद इसी का फल था कि उन के जीवन युद्ध में आज किसी दूसरे की जगह उन का अपना बेटा प्रतिपक्ष बन कर सामने डटा हुआ था। पाँचों बेटों से उन्होंने सदा एक निश्चित दूरी बनाए रखी थी। उन के क़दमों की आहट पाते ही घर में श्मशान की-सी चुप्पी छा जाया करती। अपनी-अपनी किताबें ले कर बच्चे घर के किसी कोने में दुबक जाया करते। ज़रा-सी किशोर सुलभ हरकत देख कर वे बादलों की तरह फट पड़ते फिर हाथ की छड़ी को वे युद्ध में मारकाट करती तलवार की भाँति चलाने लगते। किसी एक की ग़लती पर चारों पाँचों को पिट जाना पड़ता। अपनी मौजूदगी के दौरान घर में मुर्दनी छाई देख कर वे फूल कर कुप्पा होने लगते। खुद को अनुशासन और आतंक का पर्याय मान कर उन के अंतस् में विचित्र सी तृप्ति भर जाती।

जीवन के संबंध में उन का दृष्टिकोण कई दिशाओं में छितरा रहा था। उन के जीवन दर्शन में 'मैं' सब से ऊपर था। प्रत्येक बिंदु पर वे स्वयं को केन्द्र में रख कर चलते। वे सदा खुद को देने वाला और परिवार-जनों को लेने वाला मानते रहे थे। जीवन की इन्हीं व्याख्याओं ने अपने ही परिवार में उन्हें अजनबी बना डाला था। बरसों के व्यवहार से अपने परिवार पर उन्होंने यह प्रभाव छोड़ा था कि वे आम क़िस्म के आदमी नहीं हैं। वे ऐसा व्यक्तित्व हैं जिस के पास विशेष बुद्धि और सफलता की विशेष युक्तियाँ हैं। अपने पाँचों बेटों पर उन्होंने अपनी ज़िन्दगी का यह तथ्य बार-बार प्रकट किया था कि वे जो कुछ सोचते हैं—वही जीवन का सत्य है—अनुभवों का निचोड़। ये ऐसे तथ्य हैं जिन्हें विश्व के बड़े-बड़े बुद्धिजीवी किसी ईश्वरीय प्रेरणा से प्रकट करते हैं। ऐसे ही लोगों की कथनी को सूक्ति मान कर सुनहरे अक्षरों में लिखवा कर रखा जाता है।

मास्टरजी जब से 'रलाराम पब्लिशर्ज़' के लिए हिन्दी और डोगरी में गाइडें और कुंजियाँ बनाने लगे थे, तब से वे खुद को लेखक कहने लगे थे। अपने आप को बुद्धिजीवी सिद्ध करने के लिए उन्होंने डोगरी पंजाबी और हिन्दी उर्दू के कुछ शेर भी रट लिए थे। मौक़ा मिलते ही वे शेर सुना कर वाहवाही की भूखी निगाहें फैला दिया करते। पहली बार जब सातवीं कक्षा की कुंजी पर उन का नाम प्रकाशित हुआ तो वे कई दिनों तक हवाओं में उड़ते रहे थे। उन्हें लगता वे एक ख़ास आदमी हो गए हैं। हज़ारों लोगों में उन का नाम एक लेखक के तौर पर पहुँच गया है। हो सकता है किसी दिन उन का नागरिक अभिनंदन किया जाए। तब आँखों के सामने एक सपना तैरने

लगता। गले में फूल मालाएँ पहनाते लाग सरोपे भंट करने के लिए क़तारें लगाए उतावले लोग उन के साथ खड़ हो कर फ़ोटो खिचवाने को उत्सुक भीड। किसी परिचित व्यक्ति को दखते ही उन्हें लगता अभी उन पर बधाइयों की बौछार की जाएगी। परतु कई दिन इतजार क बाद भी जब ऐसी घटना नहीं घटी तो एकाएक उन क अतस में कुढन घनीभूत हो आई। वे मित्र मडली से पूछने लगे, आप ने मेरी किताब पढ़ी या नहीं? लोग तो यही कहते कि नहीं पढी पर उन्हें यह बात तो पता चल ही जाती कि रँझूराम आजकल सिर्फ़ मास्टर नहीं रहे बल्कि पुस्तक लेखक भी हो गए हैं। चाह अपनी डौंडी खुद पीटनी पड रही थी पर दूसरों की नज़रों में अपना स्थान ऊपर उठाने का इस से बढिया दूसरा क्या उपाय हो सकता था।

उस दिन स्टाफ़ रूम में सेकेंड मास्टर रामलाल ने बात छेड़ी—'रँझूरामजी सुना है आप ने कोई पुस्तक वुस्तक लिखी है।

रँझूराम का चेहरा खिल उठा अजी उस का तो पहला सस्करण भी बिक गया और आप को आज पता चला है।

'किन्तु, आप ने लिखा क्या है?

भाई साब, सातवीं जमात का खुलासा है।

रामलाल ठहाका लगा कर हँस पडे और बोले भइया इस म आप का क्या है? सरकारी टेक्स्ट बुक में लेख कहानियाँ और कविताए ता दूसरे लेखकों की छपी हुई हैं। आप ने उन के सवाल जवाब बना कर लिख डाले। एक खुलासा बना कर आप लखक कैस हा गए?

रँझूराम ने तपाक से उत्तर दिया भाई साब जितनी जानकारी हो उतना ही बोलना चाहिए। आप पर कहीं फिरगी भाषा की वह उक्ति फ़िट न हा जाए कि 'लिटिल नॉलज इज़ ए डेंजरस थिंग।

स्टाफ़ रूम में बैठ अध्यापकों का ठहाका गूँजा। रँझूराम को जैसे किसी न पीठ थपथपा दी हो। अपनी बात को आगे बढाते हुए बोल 'सस्कृत में लिखे गए ग्रथों पर परवर्ती विद्वानों ने बडी-बड़ी टीकाएँ लिखीं जिन में उन ग्रथों की व्याख्या की गई थी। वे टीकाकार क्या किसी से कम बुद्धिजीवी थे। किसी रचना की टीका टिप्पणी उसी दशा में हो सकती है जब टीकाकार मूल लेखक स अधिक ज्ञान रखता हो।

सस्कृत की बात थी इसलिए सस्कृत के अध्यापक शास्त्रीजी रँझूराम की सहायता के लिए प्रवृत्त हुए, आप ने सोलह आने सत्य कहा रँझूरामजी।

रामलाल ने व्यंग्य में कहा 'तो इस का मतलब यह हुआ कि हमें कुछ भी मालूम नहीं।

रँझूराम न उन की ग़लती का सुधार 'इस का अर्थ तो यह ह कि चाहे हम ने टेक्स्ट बुक की कुजी लिखी है मगर कोई माई का लाल हमें बुद्धिजीवी होने से नहीं रोक सकता।

शास्त्रीजी न रँझूराम स कहा अजी जाट क्या जाने लौंग किस भाव बिकत हैं।

पुन स्टाफ़ रूम में ठहाका गूँज उठा।

अपने उलटे-सीध तर्कों से खुद को लेखक मनवा कर ही माने रँझूराम। ग़लत हो कर भी उन्होंने कभी खुद को ग़लत नहीं माना। उन का तो विश्वास था कि व ग़लत हो हा नहीं सकते क्योंकि ग़लत वही होता है जो दूसरों से अपनी बात मनवाना नहीं जानता। इसलिए व हर बात पर अड जाते जोर डाल देते। ऊँचा ऊँचा और जोर-जोर से बोलते। कहीं दूसरा उन्हें क़ायल न कर ले इसलिए उस की सुनते ही न थे। अपनी जिन्दगी के गुनतारे उन्होंने उलटी सीधी दलीलों से सुलझाए थे।

जीवन को उन्होंने एक युद्ध मान रखा था। ऐसा युद्ध जिस का उद्देश्य है—अपना मतलब साधना और दाड़

के नियमो की परवाह किए विना चोटी पर जा पहुँचना।

पाचों बेटों को वे अपन युद्ध के मोहरे मान कर चल रहे थे। प्यार से उन्हें वे पाँच पाडव कह कर पुकारा करते। पर यह प्यार उन्हें कभी-कभार ही आता था। अक्सर वे उन्हें ललकार भरी आवाज़ में बुलाया करते जैसे सनापति सैनिक दस्ते स मुखातिव हो। उन से हँस कर बोलने को वे अनुशासन ताड़ने का न्योता देने क बराबर मानते थे। अपन पाडवों को उन्होंने यह तथ्य पूरी तरह आत्मसात करवा रखा था कि उन के बिना उन पाँचों का एक कौड़ी मूल्य नहीं है और यह कि उन की एकमात्र इच्छा है कि उन का परिवार इजीनियरों के परिवार के रूप में प्रसिद्धि पाए।

पाँचो बेटे प्रसिद्ध इजानियर बनें—इस सपने को साकार करने क लिए व बरसों एक ही पट और कुर्ते में गुजारा करत रह थ। बार-बार धुलने स कपड़ की चमक उड जाती सिलाई क धाग उधड़ जाते किन्तु वे नया वस्त्र सिलवाने के बजाए उधडे कपड़ा पर ही सिलाइ डलवा कर दुबारा उन्हें पहनन लगते। परिचित लाग जब उन की कजूसी की बात छडते तो व तपाक स उत्तर दत 'महात्मा गाधी क्या इसलिए लँगोटी पहनते थ कि वे रुपए बचाना चाहते थ? दूसरे को निरुत्तरित करके वे पुन कहत भाई त्याग भी कोई चीज़ है।

वे जानते थे उन क तर्क का दूसरों पर कोई प्रभाव नहीं होना। परतु लोगों की परवाह किस थी। व मन ही मन सतुष्ट थे कि पाँचो पाडवों को उन्होंने अपन सपनों की राह पर डाल दिया है।

कभी-कभार अपनी गृहस्थी का सम्मेलन करक व कहते 'सुनो, मर भोल पाडवो! मेरा ज़िन्दगी क सपनो मर प्यारे बेटो!! तुम न कभी सोचा है कि मैं ने तुम पर डॉक्टर, वकील प्राफ़सर या वैज्ञानिक बनने का ज़ार क्यों नहीं डाला। क्यों तुम सब को इजीनियरी की लाइन म डाल दिया क्यों?

पाँचो पाडव एकटक उन की आर दखत रहते, बालते कुछ नहीं थे क्योंकि उत्तर दन वाले को मास्टर रौंझूराम जी जार स डपट दिया करते। यह साचे बिना कि लडक बड़ हो चुके हैं उन्हें मूरख उल्लू डफर तक कह देते। लड़क उन क सामने बुद्धिमता का प्रदर्शन करें या वाद विवाद म उलझें यह उन्हें फूटी आँख नहीं सुहाता था। वे आँखें मूँद कर उन के निर्देश का पालन करें—यह उन का अभ्यास बन चुका था। वे न सुनने क अभ्यस्त नहीं थ। एक बार छोटे न पूछा था 'डैडी मैं सोचता हूँ कि सिविल का बजाए इलेक्ट्रॉनिक इजीनियरी की पढ़ाइ करना ठीक रहेगा।

सुनत ही उन का पारा सातवें आसमान को छूने लगा था अच्छा तो अब तू ने साचना भी शुरू कर दिया ह। अभी बहता नाक को पोछना तो तू न सीखा नहीं और अब तू अपना भला-बुरा सोचन लगा है। भूलो मत कि तुम्हें वही सब कुछ करना होगा जो मैं चाहूँगा।

लड़कों ने जान लिया था कि बाबूजी अपन द्वारा पूछ गए प्रश्नो क उत्तर सुनना पसद नहीं करत। इसलिए वे उन क अपन प्रश्नों क उत्तर सुनन की प्रतीक्षा करते रहे थ। मास्टरजी बोले 'तुम्हें इजानियर इसलिए बना रहा हूँ कि तुम पसा और रुतबा दोनो हासिल करो। तुम्हारे पास कार और बगले हों नौकर चाकर हों। तुम अमीर आदमी कहलाओ। तुम्हारे पास जीवन की व तमाम सुविधाएँ हों जो धन से खरीदी जा सकती हैं और मैं समझता हूँ भारत जैस दश में इजानियरी स बड़ी सान की खान कोई दूसरी नहीं है।

नकुल न झिझकत हुए पूछा 'बाबूजी यह अमीरी तो दश को धोखा द कर आना ह।

सुनत ही रौंझूराम क्रोध स भर गए 'देशभगत की औलाद! जो लाग दशप्रेम का राग अलापते हैं वे गरीबी की रेखा में ढेर रहत हैं। देश म पहल से क्या भिखमगों की कमी ह जो तू भी दश की चिन्ता में दुबला हुआ जा रहा ह। भिखमगा न बन कर जो आदमी अमीर बनता ह वह मरी नज़रों म सब स बड़ा देशप्रेमी है क्योंकि गरीबों की रेखा लाँघ कर वह दश को मज़बूत करता है।

इस अटपटे तर्क का उत्तर लडको क पास था तो मगर सुनात किस! राझूराम उन्हे दुनियादारी क मामल में निपट अनाडी मानत थ। उन का एक मात्र तर्क था यदि मैं मिट्टी को सोना कहूँ तो तुम्ह सच मानना चाहिए।

उन क अह का याझ उठाए दिन महान और वर्ष वीतते रह। लडकों की नौकरियाँ लगती रहीं शादा-व्याह हात रहे। एक-एक करके लड़क विदशों में नौकरियाँ ढूँढत रह। युधिष्ठर अमेरिका पहुँचा तो उस ने भाम आर अर्जुन का भी वहीं वुला लिया। नकुल और सहदेव अरब-अमीरात की किसी निर्माण कपनी म चले गए। लडका क विदश प्रवास को राँझूराम अपनी विशेष कामयावी समझते रहे थ। परिचित लागा स भेंट हाते ही वे अपन अपन बेटों का उपलब्धिया की रामकथा वयान करने लगत। गर्व से छाता फुला कर कहते 'मरा नाम गिन्नाज वुक ऑफ़ वर्ल्ड रिकार्ड्स में आना चाहिए, क्योंकि मं एसा वाप हूँ जिस के पाँच वट इजानियर ह और पाँचों विदश म हैं।

काई उन से उन की सफलता क इस रहस्य के विषय में पूछता तो उन क होठों पर रहस्यमय मुस्कान खिल उठती भाई वुद्धिजीवी होन का यहा ता एक लाभ है कि आम आसत लागा से ज्यादा वुद्धिमान हात हैं ।

सुनने वाला उन की वात का उत्तर दता 'आह! मैं तो भूल हा गया था कि आप एक लेखक भी हैं।

अजी अव छह महने वाद रिटायर हा जाऊँगा। फिर फुरसत म किताव लिखूँगा। एक किताव ता क्वल अपनी जीवन कथा पर आधारित हागी। इस म मैं अपनी कामयावा का सारा दास्तान वयान करूँगा जिस स पढ़न वाले लाभ उठा सकें।

'ता क्या हम आप का सफलता का राज़ जानने के लिए तव तक प्रतीक्षा करना हागी?

'आप स प्रतीक्षा कराना क्या उचित ह। आप मरा कामयावी का कुजी मुझ स अभी स ल लाजिए। मैं न जावन को एक जग मान कर जिया है। ऐसी जग जहाँ आप का अपन प्रत्यक शब्द प्रत्येक वात तक का दूसरा स वहतर सिद्ध करना ह। अपनी डगर पर चलत हुए अपन सपनां का साकार करना है। जिन्दगा का जातन क लिए जाना है हारन क लिए नहीं। यह सब वात मैं इसलिए साच पाया क्योंकि मैं आम लागा स अलग एक वुद्धिजावी था।

रिटायर हान क कुछ माह वाद उन्हें लगा था—उन का गर्व कितना सतहा है! जिसे व अपन सपना का समाग मानत आए हे कहीं वह वक्त का मजाक ता नहीं था। उम्र क इस सिरे पर पहुँच कर व निपट अकला क्यों महसूस कर रह हैं। जावन का युद्ध मान कर अतत उन्हें क्या मिला। जा मिला क्या वह उन का अपना ह? घरवाला एक साधा मादा औरत ह जा सारा उम्र दाल-राटा वनान भाँडा-वर्तन माँजने या कपडा लत्ता धान म व्यस्त रहा। वच्चों क विदश जाने क वाद आ जा कर वहा उन्हें अपन आसपास मडराती दिखाई पडता। प्रात छाक म धूप फूल आर वत्तियाँ ल कर मदिर जान वाला उस स्त्री का उन्होंने कभा भी अपन सपनों आर युद्धा का भागादार नहीं वनाया था। घर में पड मूक फ़र्नीचर का भाँति वह एक वस्तु वन कर रह गइ था। इस घर म प्रवश क साथ हा उन्होंने डाँट डपट कर उस की वालने-वहसन का सामर्थ्य का नाच डाला था। अव रिटायर हान के वाद किस स मन की वात कह। वुढ़ाप क अकलपन का पाडा किस स वाटा की जाए?

वच्चा का लिख तमाम पत्र अनुत्तरित रह। कितन स्वार्थी वच्च ह! चिट्ठा का उत्तर तक दना उन्हें भारा लगता ह। दिन व दिन कुढन वढ़ता जा रहा था। क्या यहा उपेक्षा पान क लिए उन्होंने एक दिन अपन शात जावन का युद्ध क्षत्र का सना द दा था। आज जा सामन ह उस अपना हार मानें या जात। मन म खाझ का एक चिनगारा चिटक उठी। वरसा आर क्राध स उफनत हुए उन्होंने कलम उठाइ आर लिखन लग 'मर पाच पाडवा! अपन जावन में म न जा कुछ कमाया सव तुम्हार भविष्य क निमाण म लगा दिया। खुद तगी सह कर तुम्ह खुश रखा। मर त्याग का लागों न कभी कहा 'मं न हँस कर तमाम तान सह'। क्या इसलिए कि वढ़ापे में तुम मुझ एकाकीवास

उषा व्यास

बाकी सूरज

अहाते के अदर गाड़ी पार्क करके मैं ने दरवाज़ा खाला। बाहर निकलत ही नाक की फुनगी पर बूद गिरी—
तिप्प! मैं न चौंक कर ऊपर दखा, मार फुटकी फुल्की बदलियों क छितरी रुई की रजाई हा रहा था आसमान। अदर जलती हुई रोशनियाँ लिए कुहासे म डूबे घर थे। घर. ? नहीं अधेरे में झूलता कदीलें। कोने वाल घर क चबूतर पर कबल में गठरी बना बैठा चौकादार जहीर चिलम पी रहा था। ठड में चिलम से उभरती मरियल सी लौ उस की दबी घुटी खाँसी क साथ बतरह लड़ रही थी। ईशा की अज़ान का वक्त था। तालाब खटीकों वाला मस्जिद की आर स आत 'हा ऽऽऽ अल्ला ऽऽ हा ऽऽऽ अकबर अल्ला ऽऽ के बाल उठ-उठ कर हवा में सिहरन सा भर रह थ।

तासरी मज़िल की सीधी सत्ताईस साढ़ियाँ चढ़ कर आई मैं अब जालीदार दरवाजे के सामने खड़ी थी। खुले दरवाज़ क आग लोहे का झिर्रीदार पायदान आर धूल पर आत-जात जूतों क निशान हा निशान थे। हर तरफ़ एक धारदार सन्नाटा पसरा हुआ था और अदर बिछी थी मातमी सफ।

'जावद , जावद नहीं रहे थ।

मैं चुपचाप अदर जा कर मसनद पर बैठ गई। बगम मीर पलग की पाटा क सहार टिका घुटना में मुँह छिपाए बैठी थीं। सरापा काले लिबास में ढँकी हुई। कबल के नाचे सलवार के पाँयचे में स उघड़ा हुआ उन के बाएँ पैर का नन्हा सा गारा अँगूठा बीच बाच में या हा हिल उठता। कान म कौसर आपा मुसल्ला बिछाए नमाज़ पढ़ रही थीं।

मैं स्तब्ध देखती रहा—दीवान क नीचे सरकाई हुई ट्र में औंध पड़े प्याले बिखरी हुई बाकरखानिया कुर्सी की ऊँचा पुश्त पर बतरतीब लटकी हुई कश्मारी कढाई की चौड़ी पाटदार मटियाल रंग की मर्दानी शॉल। काँगड़ी प्याल में सुलग रह लोबान क धुएँ की इधर उधर मँडराती हुई महान लकीरें। मदीना मुनव्वरा की बड़ी सी ऑयल पेंटिंग क नीच दावार क साथ-साथ टिक हुए झक झालरदार चोकोर तकिया का रग मद रोशनी और एसे डूबे हुए माहौल में और भी खासा बुझा हुआ लग रहा था। आतिशदान क ऊपर रख फ्रोटो फ्रेम के भातर फ़ौजी वर्दी में जावेद अभी भी उसी तरह मुस्करा रहे थे। उन की टापी पर लगे बज स फूटती बिंदु भर कौंध जब मेरी आँखा में चुभ आई ता पानी के वग से वाझिल मेरी फडफड़ाती पलकों में पर्द पर दाना हाथ रखे सहमी हुई नौशीन का चहरा डबडबा उठा।

पर्दे के कोन स झाँक कर भद्रवाही मुद्दू 'सुब्हाना' न छाटा सा हाथ उठा कर सलाम कहा आर फुर्ती स लपक कर ट्र उठाए बाहर हो गया। कौसर आपा न नमाज पढ़ चुकन क बाद मुसल्ला तहा कर एक ओर रख दिया। सिर पर बँधा हुआ पाच खाला और दावारा गाठ कसत हुए सिर पर लपट लिया। काँगड़ा उठाइ उस क साथ बँधी चिमटा पकड़ कर, हल्के हाथ स उस की आँच कुरदा और फिर जैस माथ पर हाथ रख कर कुछ गौर से दखती हुई बाँहें पसार कर मेरी ओर लपकीं।

'लगे ऽऽ बलाय ऽऽ। त्स कर आयख '

(मैं वारी जाऊँ तुम कब आईं?)

'तस्लीम! आपा ' मैं उठने लगी।

अल्लाह! बेटी सब लोग आए थ। तुम तुम्ही नहीं आईं। अरे, जावद नहीं रहा और मं इस बुढ़ाप में दुआओं पर कहर टूटता देखती रही। रहम कर, मेरे मौला! रहम। फिर वे बगम मीर की आर बढ़ीं।

'जेवा!

'खोदायि सदि खातर, व्याथ त्‌च्य दवा वुछुन ह्यस कर. (जरा उठो दवाई खा लो खुदा के लिए। होश करो) आपा न समूचे लाड और भवदना से भरा अपना नीली नसों वाला काँपता बूढा हाथ उन की जवान पीठ पर रख कर कहा।

'देखो न इस का क्या हाल हो गया है? बुत के माफ़िक। हर वक्त दीवानावार कहती रहता थी कि 'कश्मीर जाना है। वहाँ पर जुम्मे क राज घर मं शुकराने की महफिल करानी है। शाह हमदान क मजार शरीफ़ पर फूलों की चादर नजर करनी है। जावद फ़ौज मं बडा अफ़सर बन कर पहली बार घर आया है। अल्लाह ने दुल्हन की गोद को पहली औलाद का अतिया फ़रमाया है। उस का अक़ीका होगा। मैं ज़रूर जाऊँगी बारामूला । अब कोई क्या कहे कि हमारी नेक बख्ती के दरवाज़े पर कैसा कुफल पड गया है। मेहर फरमा मरे मौला सब्र अता कर। कहते-कहते वे फिरन मं कांगड़ी लिए लिए बाहर चली गई।

'मुझे देखिए, अम्मी! मैं हू। मैं ने बेगम मीर के घुटन पर हल्के-से हाथ रखते हुए आहिस्ता से कहा। नरम सी छुअन पा कर वे हिलीं और जैसे हिलते पैर के अँगूठे स ले कर सिर तक सरापा एक सिसकी हो आई। फिर सिर उठा कर उन्होंने यों ही अपनी अर्थहीन दृष्टि मुझ पर टिका दी।

उन की आँखों में पतझर के चिनारों की तमाम सुर्खी उतरती रात क आखिरी पहर का तमाम अँधेरा और तपते रेगिस्तान का तमाम निचाटपन पसरा हुआ था ऐसा कि मैं उस नजर की ताब नहीं ला सकी।

साथ वाले कमरे स टी वी पर लोकल खबरें आने लगी थीं। सहसा पुकार कर कुछ माँगने की ऊँची आवाज सुन कर लगा शायद नमाज़ क लिए मस्जिद गए हुए मीर साहब लौट आए है।

मुझे पुरखू नगराट्य के शरणार्थी कैंपों को देख कर लौटन क बाद बाहर से आए पत्रकारों का एक मीटिंग थी। फ़ोन पर आज शाम कुछ दर स घर लौटन क लिए कह कर मैं 'ज्वेल' की तरफ मुडी। रस्तराँ क मूविंग शटर में झूल गए हाथ क साथ अदर घुसते ही जून की चुनचुनाती तपिश सचमुच 'ठंड' जसी ठंड मं बदल गई थी।

पाँच बज रहे थे। अभी उन लोगों क आने में वक्त था। काउटर पर खड खड़े मैं ने देखा भीड़ थी। सब मेजें भरी हुईं। पूरे हाल की बीचोबीच पाम्ता 'रिब्बन ग्रास' और 'हंड पाम' क छतनार पौधों स सनी हरियाली दीवार। जिस क आर पार चेहरे ही चेहरे थे।

खासे इश्तिहारी किस्म क रंगारंग लिबासों में सजे ञ्ड-चढ़ लबे गिलासों मं ठफनते झागदार पेय में स्ट्रा लगाए, वर्गाकर कुतरते युवा लड़के लड़कियाँ। डेक पर उभरते माइकल जैक्सन क आरनुमा बालों पर थिरकते हुए, मेजों के नीचे आपस में उलझ अंट लयबद्ध हिलते पर। ताज़ा पक रहे खाने की गरमा गरम महक पसीने टेल्कम और इत्र की महीन लपटों मं घिरा हुआ अन्दर का खुनक माहौल। बड़-बड़ आईनों क आग तरह तरह की शक्लें बनाते खिलखिलाते हुए आईसक्रीम चुभलाते बच्चे। बार-बार गर्दन झटक कर बिखरे बालों को उलटा माथा चूड़ा लपटती औरतें। पारदर्शी जालियों मं फ़ास्टफूड ला ला कर सजाते झुके खानसामे और मानू पैनल क आगे सज

जार बार जेबों में हाथ डालते रूमाल से पखा झलते मर्द। आते-जाते खुल रहे पीतल के गुबदनुमा दरवाज़ के नीच और कई लोग थे। विदेशी पर्यटक गले में कलावा सिर पर लाल गोटेदार चमकीला पटका, माथे पर सिंदूर का तिलक पोते पैर घसीटते हुए वैष्णो देवी के तीर्थ यात्री।

मैं ने देखा दूर सब स पीछे की आखिरी मेज पर बैठा फ़ौजी उठ कर चला गया था। सीट ख़ाली दख कर, म जल्दी से एक पप्सी ख़रीद कर उस ओर बढ़ी।

'क्या मैं यहाँ बैठ

फिलहाल आप बैठ जाइए, मेर मियाँ ज़रा बाहर गए है। कहते हुए उस मुस्लिम कश्मीरी युवती ने सामन की सार पर रखी फौजी टापी उठा कर गाद में रख ली और उस क बैज पर खुदे हुए 'वीर भोग्या वसुधरा के चमकते हुए अक्षरों स खेलन लगी।

गौर करती हूँ। खूब खुलता हुआ रग। कजी आँखों में भरी हुई सुरम की खुली स्याही। भिंच हुए चटख सुर्ख़ हाठो पर उभर हुए रोयों की पतली लकीर। सिर और कान दुपट्ट स पूर ढक हुए। दाएँ कान में हिलत हुए बड-मे बुदे के बीच उलझा जा रहा बालों का छोटा सा स्याह घुँघरू। लबी उठी हुई नाक। गालों की चौडी हड्डिया पर फली मद्धम सी झाँई और फिरन के नीचे मुकम्मल औरत हो जाने के आसार दर्शाता हल्का-सा उभार। टापी को एक ओर रख कर उस ने जूस के खाली गिलास को एक तरफ़ सरकाया और बोतल का ढक्कन खाल कर ढेर सारी मिर्च की हरी चटनी प्लट में उँडेली। फिर सलाद के बीच सजे हुए गर्म स्नैक्स के ऊपर सींक मे खुसी नीबू की फाँक खींच कर चूसन लगी।

सहसा सडक पर नारों का शार बुलद हो गया। सब ने चौंक कर गर्दनें घुमाई। बैनर उठाए हुए कश्मीरी हिन्दू शरणार्थियों का जुलूस था। म्यान से निकल रही तलवार सा खिचा हुआ जुलूस। फिर, एक विस्फोटक धमाका! अफ़रा तफ़री गिरते हुए शटरों की धड़धडाहट पुलिस लाठी चार्ज आँसू गस और पथराव।

दुकानों क अदर सजी मिठाइया पान और वाईन का स्वाद सब्जियों फलों की खुशनुमा ताज़गी ढाबा में भुनते ममाला की गध थिएटर के आग कुल्चे वालों के खोमचे पॉलिश हो रहे जूतों की चमक लद रहे ठेले और घोड़ों का हिनहिनाहट वेल्डिग की चिगारियाँ ऊँचे सुर में बजती भोंडी कैसेटों की रिरियाती चिचियाहट और इन सब के बीच बदहवास भागती हुई वह नगी पागल औरत। सब कुछ बारूद क धुएँ में बदल गया था।

घबराहट में वह युवती उठ कर खड़ी हो गई। सहमत हुए उस ने अपने दोनों हाथ पेट क उभार पर रख लिए थे।

अल्लाह्! अब य पता नहीं कहाँ चल गए?

आप घबराइए नहीं ऐसे में कहीं रुक गए होंगे। आ जाएँगे। मैं न सहारा सा देत हुए उस का हाथ पकड़ कर बिठाना चाहा।

आफ्फ़ओ दखो तो यार, कैसी परशानी में चीख रहे है लाग। पर वहाँ म आए ही क्यों है? साथ वाली टेबल पर म किसी न कहा।

'सुनत हैं वहाँ साम्प्रदायिकता नाम की काई चीज़ नहीं है। मुस्लिम लाग अपन हाथ का निवाला तक पहल इन्हें खिलाते हैं। यहाँ आ कर भटकने, बिलबिलान स ता अच्छा था वहीं रहत। आखिर और लोग भी ता रहत हगि यहाँ। नई?

'हा यार, पिछल साल हम लाग जब देवी दर्शन क लिए आए थे तो चीज़ों क दाम इतन ऊँचे नहीं थे। इस बार तो क्या गरमा अखरोट, बादाम और क्या शाल और लकडी के दूसरे सामान सब कुछ अईसा महँगा हो गया है गुरु कि कुछ ठिकाना नईं।

'महँगाई भी शायद इन्हीं के विस्थापन के कारण इतनी बढी है। नेई? पान पग्ग का फकी हथेली पर उँड़लत हुए दूसरा कह रहा था।

तभी एकाएक टेबल पर मुक्का मार कर तनते हुए कोई उठ खडा हुआ और जैसे फट पडा 'हाँ जी किम्प को पडी है अपना घर बार अपनी जमीन-जायदाद छोड कर इदर ग्बदर होने की? धक्के खाने की? पता है आप का बीस बीस जन एक फटे हुए टेंट में रह कर गुज़ारा कर रहे हैं हम लाग! अँधेरे में पडे घडे में हाथ डालते हैं ता पानी का जगह साँप होता है। कितन लोग मर गए हैं। गर्मी प्यास और साँप के काटने से । कभी दखी है वर्फ! पता है घर की छत्त क्या होती है? हम ने अपनी ज़िन्दगी, अपनी रूह छोडी है उधर. मैं देता हूँ पचास हजार रुपए आप को आप एक रात वहाँ गुज़ार कर मुझ दिखा आओ है हिम्मत! तुम को उधर नानी याद आएगी। वस वातें करत हो आप लोग तो टूरिस्ट हो, आज आए, कल गए, आप को क्या है?

भई माफ करो झगड़ा मत करो, हम तो ज़रा यों ही बात कर रहे थे। यात्री ने उस लडके के कध पर हाथ दबाते हुए उसे बिठाना चाहा।

ओ जी ज़रा आप भी सुन लो न हमारी बात! पता है आज हमारी हालत क्या है? परसों यहाँ हमारा एक भाई बम धमाके में मारा गया। अब वो बेचारा गुमराह हो गया था। मजबूर था। आप देखो जी जब पट में रोटी नहीं जाएगा ता वो कुछ भी करेगा वहाँ हमारे लिए आसमान पराया हो गया और यहाँ ज़मीन सौतेली निकली। भगवती की क़सम कहते हुए वह गेट की तरफ हो लिया।

अजीब लोग हैं भई, यह तो गल पड़ जाते हैं। वैसे अख़बारा में क्या-क्या छपता था। उस क मुड़ते ही फिर जैसे उन की बात काटता सा एक दूसरा लड़का बीच में बोल पडा 'आप नहीं जानते? भाई इधर जम्मू वालों न आडे वक्त में इन की भरपूर मदद की। घर दिए काम दिए, अपनी थाली उठा कर इन के आगे रख दी। इन के आँसू पोंछे पैरा तले हथेलियाँ बिछाईं और ये फिर भी इसे 'सौतेली जमीन ही कहत रहे अब इस का कोई

'अमाँ यार उठो इन का मसला है ये जानें। अभी रिज़र्वेशन के लिए भी जाना होगा। अब यहाँ क्या पता कहीं कर्फ्यू न वे लाग अपने अपन पैकेट उठाए काउटर के साथ वाली सीढियों की तरफ़ मुड़ गए। मेरी दृष्टि सीढिया की आर बढते उन लोगा से पलट कर फिर उस युवती पर आ टिकी।

आप के मियाँ कहाँ गए हैं?

'डॉक्टर के पास। नम्बर की पर्ची लानी थी। कल मुझे वापस कश्मीर चले जाना है जाने से पहले एक वार चकअप ।

आऽ! मेरा ध्यान उस के पेट पर जा टिकता है।

मेरे मियाँ फ़ौज में मेजर हैं। कल वा भी ड्यूटी पर आसाम चल जाएँगे। छुट्टी पर घर आए थे।

'यहाँ!

'हा यहाँ हम वज़ारत राड पर रहत हैं के सी रेजीडेंसी स आगे। वारामूला में मेरी ससुराल ह। मैं वहाँ उस्तानी हूँ। वैसे मैं मायके में रहती हूँ, सुत्थु बरबरशाह में आप भी काई टूरिस्ट हैं?

'नहीं हम लोग तो यहीं रहते हैं त्रिकुटा नगर में। मेरे मियाँ क्यूरटर हैं और घर में दो छोटे-छोटे बच्चे भी हैं। मैं जर्नलिस्ट हूँ, यहीं काम करती हूँ।

'आप गई हैं कभी कश्मीर?

'हाँ कई वार, मैं तो वहीं से पढ़ी हूँ। कॉलेज हास्टल में थी ता वहाँ सैय्यद फ़ज़ल मीर अब्बास साहब थे पापा के दास्त और मेरे लाकल गार्जियन। अक्सर उन के यहाँ जाना हाता था वज़ार बाग़ में बहुत गर्मी

न यहाँ? जम्मू में? आप लाग तो आदी नहीं हैं।

'हाँ हैं तो नहीं पर 'इन को अब बिलकुल फ़र्क़ नहीं पड़ता। फ़ौजी हैं न सो जगह-जगह जाना हाता है। अब करेंगे भी क्या कोई चारा नहीं है? सिर नीचा किए मुस्कराते हुए वह मेज़ पर छलके हुए पानी की बूंदा को उँगली से इधर उधर मिलाने लगी। 'व हर साल छुट्टियाँ बिताने यहाँ जम्मू तक ही आ पाते हैं। कश्मीर तो उन के लिए अब वह उदाम हा आई थी।

'जम्मू तक!

'हाँ एक ज़मान स व अपने घर नहीं जा पाए। मरी माँ ने मन्नत मानी थी कि ख़ैर से जब भी मैं उम्मीद स होऊगी ता सब साथ चल कर 'चरार ए शरीफ़' पर चाँदी का चिराग रौशन करेंगे। मेरी बहन की शादी थी तो भी व नहीं आ पाए थे। मर वालिद फ़ौत हो गए, व नहीं आए और ईद पर तो कभी ऽऽऽ नहीं ।

मैं ने देखा, उस के होठों की नाव अलगाव के दर्द का हिलकोरा लेती डोल उठी है।

वैसे वहाँ अब जाना क्या और न जाना क्या?' उस ने सँभलते हुए आगे कहा रोज़ बद, आगजनी हड़तालें मार धाड, क्रॉस फ़ायरिंग क़त्ल और जानलेवा तलाशियाँ। मस्जिद में नमाज़ तक पढने कोई नहीं जा पाता। कई कई रोज़ बत्ती गुल रहती है। रात का जब बम धमाके उठते हैं तो लगता ही नहीं कि थाली में रखे भात का अगला निवाला नसीब हागा। घरों में अपना गुमशुदा बचपन लिए बच्चे मारे डर के ज़र्द पड़ जाते हैं। मगर अब करेंगे क्या मत कोई चारा है? दफ़्तर बद स्कूल बद अस्पतालों में नाम की हाज़िरी। रोज़मर्रा की चीज़ों की किल्लत ज़ोर ज़बर और ज़ुल्म उफ़ । हमार लिए ता वहाँ, दुआओं की रात और सदक़े की सहर होता है। अँधरी गार में क़ैद हमारा ज़िन्दगी तो अपने आदाब भूल गई है वल्लाह! मेरे चचा और मामूजान का मेव कालीन और हाउस बाट का बहुत बडा कारोबार था। वे भी नहीं रहे और कारोबार भी तबाह हो गया।

आप के मियाँ घर क्यों नहीं जा पाते? उस की सारी बाता पर ग़ार करते हुए मेरे भीतर का पत्रकार और उत्सुक हो उठा था।

उस ने एक क्षण मुझे टिक कर देखा। फिर दाएँ बाएँ। फिर पेपर नैपकिन मुट्ठी में कसते हुए दबी ज़बान में कहा 'वा दरअसल वो न उन के अपने ही दोस्तों ने उन को 'खत' भेज रखा है। उन्होंने न तो उन का साथ ही दिया और न फ़ौज की नौकरी ही छोड़ी। अब अपनी छत के नीचे सोना हमारे लिए हराम है मगर. अब करेंगे क्या मत कोई चारा है!

अनजान हाते हुए भी आहत-सी वह जब मरे आगे किसी बेतरतीब तह की तरह खुल पड़ी तो मैं माहौल की तपिश के बावजूद अंदर ही अंदर कहीं बर्फ़ हो आई थी।

बाहर सड़क पर उठे तूफ़ान के कुछ छींटे ही रूमाल स चहरा पोंछता वह फ़ौजी हमारा टबल की ओर लपका।

'तुम बहुत घबरा गई होगी न? मैं उधर ज़रा भीड़ में फँस गया था। डॉक्टर ने टाला कल सुबह आओ। उस ने अपना सीट पर मुझ बैठा देख कर साथ वाली कुर्सी घमाटते हुए कहा।

अर, जावेद! ग़ौर स दख कर पहचानत हुए अचानक मर मुँह से निकला। हर बार कान में उँगली घुमा कर मिमियान वाला नन्हा सा जावेद, कितना बड़ा हो गया था एक मुकम्मल मर्द। एक ख़ास तरह के फ़ौजी डिसिप्लिन और रज़मेंटल वर्दी में कसा हुआ ऊँचा लम्बा गठा हुआ उस का रौबीला व्यक्तित्व चेहरे पर पकी फ़स्लों की

सुनहरी रंगत लिए कैसा दमक रहा था।

आऽ नन्हीं बाजी! सलामालेकुम। आप? यहाँ?'

'बस यहाँ एक मीटिंग थी।'

'ह्वाट ए स्वीट सरप्राइज? कहाँ हैं आजकल आप?

'यहीं हूँ, वैसे कुछ सालों से बाहर थी सरकारी डेपुटेशन पर। ''इन की नौकरी लेह में है और दोनों छोटे बच्चे अब स्कूल जाने लगे हैं। आप अपनी कहिए।

'बस, अल्लाह का शुक्र है। महनाज बाजी सऊदी में हैं। अब्बू यहाँ नौकरी की वजह से जिलावतनी भुगत रहे हैं। उन की वजह से अब तो अम्मी भी यहाँ मुतकिल हो गई हैं। मैं आसाम में पोस्टेड हूँ और ये नौशीन हैं मेरी बीवा भई, ये हमारी बहुत अजीज मोहतरमा नंदिता बाजी हैं। जवाब में नौशीन ज़रा सा मुस्करा दी।

आप की ग़ैर मौजूदगी में ये बहुत घबरा गई थीं और हम लोग बहुत बातें करते रहे।

ओऽ। अच्छा-अच्छा।' जावेद नौशीन के आगे से टोपी उठा कर पहनने लगे तो मैं ने देखा पतंग उड़ाते हुए उन की दाईं हथेली में तेज माँझा लगी डोर से खिंचा हुआ लंबा गहरा कटावदार निशान अभी भी था। हाथ की लकीरों में घुला मिला सा। मैं ने कहा, 'तुम्हें याद है जावेद' छुट्टी के रोज तुम अब्बू के साथ अक्सर मुझे कालिज हास्टल से अपने घर लिवाने आते थे। हम बगीचे में बेंत की कुर्सियाँ बिछाए शगूफ़ों से लदे पेड़ों पर उड़-उड़ कर चहकते गाते पोशनूल को देखते रहते थे। वह सुस्त सा बहरा बूढ़ा सुलेमान दिन भर हमारे लिए चाकू से कच्चे हरे अखरोट की गिरियाँ छीलने और चाय कहवा ढाने में ही लगा रहता था। खाने की तमाम लज़ीज़ दूसरी चीज़ों के साथ अम्मी बाजान की शाही फ़िरनी ज़रूर बनाती थीं और क्या खूब बनाती थीं। ताश के खेल में हारे हुए तुम पीठ पर लद कर मेरी चोटी खींचते दनादन मुक्के मारते चले जाते थे?

'जी हाँ, जी जी!' वह हँस पड़ा। आप अक्सर हमारे यहाँ आते वक्त मेरे लिए पद्मलोखुर (कमल गट्टा) के गुच्छे और पतंगें जरूर ख़रीदती थीं। ईद पर आप ने मेरे लिए टोपी और खरगोशों वाला पुलोवर भी बुना था न!

'देखना अब मैं तुम्हारे बच्चे के लिए भी एक वैसा ही फ़्रॉक बुनूँगी।

'इंशा अल्ला बीवी की ओर देखते हुए जावेद ने कहा तो वह शरमा गई। 'दरअसल वो ज़माना ही और था। वाकई। अब तो वहाँ का ख़्वाब देखते हुए भी आँखें पत्थर की होने लगती हैं। एक भावुक सी तरलता उन के चेहरे पर बिछ आई थी। 'अच्छा, कभी घर आइएगा सब लोग आप को अक्सर याद करते हैं। हमारा यहाँ और कोई तो है नहीं, आप के आने से उन को बड़ा सहारा मिलगा। मैं तो बस अब वापस जा रहा हूँ। छुट्टी पर घर आया था अरे, आप कुछ ठंडा लीजिए न। मैं तो भूल ही गया था। वह उठने लगा।

अरे नहीं बस शुक्रिया। अब जाऊँगी बस

सात बज गए। शायद वे लोग आ गए थे। शीशे के बड़े गेट में से हाल की ओर बढ़ते कंधे पर झोले डाले शुभंकर दास, सी चिदंबरम प्रभजोतसिंह और कैमरा सँभाले अफ्ज़ल शाह की पीठ दिखाई दी।

'हाँ हाँ मैं घर ज़रूर आऊँगी सब से मिलूँगी। सब को मेरा आदाब कहना।

अच्छा खुदा हाफ़िज। अपना खयाल रखना। जाते ही ख़त देना यह पता रखो। मैं ने पर्स में से विज़िटिंग कार्ड निकाल कर उसे थमाया और एक अतिरिक्त पुलकन से भरा अपना हाथ नौशीन के हाथ पर रखा कर उठ पड़ी।

बाहर हवा में हल्की बारिश की सनसनाहट फैलने लगी थी। तभी पर्दा हिला। पर्दे के साथ बँधी घंटियाँ टुनटुना कर अदब के साथ एक ओर थम गईं।

आदाब अर्ज़! मीर साहब के अंदर पैर रखते ही मैं ने ज़रा उठना चाहा।

ओह! नहीं आपा? बैठिए, बैठिए, तशरीफ रखिए। वे हरे किनारे की दोहरी गर्म चादर की बुक्कल में काँगड़ी लिए, आ कर चुपचाप दीवान पर तकिए से धाक लगा कर बैठ गए। सीमा सुरक्षा बल क डिप्टी कमांडेंट जनाब सैय्यद फज़ल मीराँ अब्बास साहब यानी—'मीर साहब'।

मझोला कद कुछ लम्बोतरा भराबदार चेहरा फुनगी पर से कुछ दबी हुई सुतवाँ नाक। स्टील के चश्मे से परे सुरमे से अँजी हुई गहरी सवेदनशील अनुभवी आँखें। दोनों हाथ मस्ती में लहरा कर मलग से दिखने वाले दबंग मीर साहब जब चलते थे तो मारे रोब के आसपास की दीवारें हिलने लगती थीं। बोलते तो हवा थम जाती। शायरी के शौक़ीन मीर साहब लॉन में कुर्सी बिछाए जब अखबार पढ़ते या कुछ लिख रहे होते तो परिंदा तक जैसे उड़ना भूल जाता था। कड़क होने के बावजूद आवाज़ में एक अलग तरह की नरमी मिठास और नफ़ासत। लहजे में जैसे अपनाप का ज़ाफ़रान घुला रहता था। सिर के हल्के स्लेटी हो आए छल्लेदार बालों से ले कर सलवार के खुले पाँयचा में उलझे पैरों तक सरापा फ़ुरसत ही फ़ुरसत—एक सादा सा ठहराव।

उन की बहादुरी के कारनामों की दास्तानें कहते बंद अल्मारी में सजे सोने चाँदी के कई पदक पुरस्कार अब भी अपनी उसी शान-बान के साथ चमचमा रहे थे।

ध्यानस्थ अडोल बैठे हुए मीर साहब इस वक्त एक नमक खुर्दा दीवार से लग रहे थे जिस पर टँगी उन की महत्त्वाकांक्षाओं और उपलब्धियों की सारी तस्वीरें रंग धुँधले हो जाने से अपनी पहचान खो रही थीं।

सुल्ताना दस्तरख्वान बिछा कर ट्रे में क़हवे के बारीक नक्काशीदार बिना डाँडी के दो कश्मीरी प्याले रख गया। प्यालों से उठती भाप से कमरे की सर्द चुप्पी पल भर के लिए महमहा उठी।

आप तो कहीं टूर पर थीं शायद ? हाथ से प्याला उठाने का संकेत करते हुए वे मुझ से बोले।

'जी बस कल ही लौटी और आते ही खबर हुई कि जावेद मियाँ आखिर कैसे हो गया यह सब ? निहायत अफ़सोस अभी पिछली गर्मियों में 'ज्वेल' में उन से मुलाक़ात हुई थी। तब नौशीन भी साथ थीं।

'बस जी क्या कहें? अल्लाह की मर्ज़ी । भाव विह्वल उन्होंने लंबी साँस ली।

'करीब माह भर हुआ नौशीन को बेटा पैदा हुआ है। इसीलिए वे आसाम से यहाँ घर आए थे कि चलो कम-अज़-कम फ़ोन पर ही अपने बच्चे के रोने की आवाज़ सुन कर बाप बन जाने की खुशी की तसदीक़ कर सकें। इस बार तो बर्फ़बारी भी शदीद हुई है। सो गड़बड़ की वजह से जब फ़ोन का भी कोई चारा नहीं हुआ तो फिर वे हमारे लाख मना करने पर भी आख़िर कश्मीर चले ही गए, और फिर उन की वापसी गुनाह हो गई। ओह, अल्लाह उन्हें अपनी पनाह में रखे सुख-दुख सब उसी के अतिए हैं । उन्होंने आँखें पोंछी। टोपी को ज़रा हटा कर बालों में उँगलियाँ घुमाईं फिर सिर सहला कर दोबारा उसे पहन लिया।

'देखो बेटी। और तो सब कुछ है यहाँ—अल्लाह के फ़ज़ल से। मगर परदेस में होना इसलिए दुख देता है कि हम किसी अच्छे-बुरे वक्त में अपनों के साथ नहीं हो सकते। आप को पता है मेरे वहाँ जाने पर पाबंदी है। 'पाबंदी' पर ज़ोर दे कर वे एकदम चुप से हो गए।

घुटनों में दबी काँगड़ी के बुझते अंगारों पर फूँक मारते हुए उन के चेहरे पर एक धुँधली सी सुर्ख रोशनी फैल गई थी। रोशनी नहीं थी जैसे झरते हुए चिनारों का कोई मौसम था जो उन के चेहरे की वीरानी में आ कर ठहर गया था। रोशनी नहीं थी जैसे नंगे पेड़ों के जंगल में कुहासे में घुलता एक विध्वंसी संताप लिए कोई साँझ—अभी घम अभी अभी डूबी थी।

'नहीं बेटा इन नामुराद ज़हरीली फ़िज़ाओं ने मुझ से मेरी बर्फ़ छीन ली। मुझ से मेरे डल और जहलम छीन

लिए। मुझ से मेरी खुशियों के तमाम शगूफे छीन लिए. मुझ से मेरे घर की छत छीन ली? मेरे आँगन में झरते हुए चिनारों के पत्तों की मासूम सरगोशियाँ छान लीं और मुझे ज़िलावतनी की आग में झोंक दिया। मैं मैं फिर भी ज़िन्दा रहा पर हारा नहीं। मैं हमेशा बाज़ आया। मैं न अपन जमीर का सौदा नहीं किया मैं ने अपन घर की मिट्टी का सौदा नहीं किया ।

उन क बोल बेतरह गीले हो आए थे।

'ऊँह अँऽऽ अल्लाह! मेरे परवरदिगार!' घुटने पर हाथ रख कर वे दीवान पर से उठे। बुक्कल में से काँगड़ी निकाल कर फ़र्श पर रखी और ओढी हुई चादर का नीचे लटक आया सिरा पूरी ताक़त से फिर पीठ पर डालते हुए बेगम मीर के पास आ कर बैठ गए।

तह के नीचे रिसाव लिए यह कैसा घोर कठोर क्षण था? एक विचित्र सी मोहाविष्टता में डूबे अपनी थरथराती उँगलिया के पोर आकुल, अवाक् स्थिर—पत्नी की पलकों पर रखते हुए उसे जैसे अपने में समेट रहे थे मीर साहब।

'जेबा! ज़ेबा!! देखो मेरी तरफ हौसला रखो नमाज का वक्त है रोते नहीं मैं राशिद साहब से कहलवा भेजूँगा इशाअल्लाह वे शोपियाँ से खुद आ कर किसी तरह नौशीन और बच्चे को बाहिफ़ाज़त जल्द यहाँ जम्मू पहुँचा जाएँगे। देखो, मेरा घर तो तुम्हीं से है न? वहाँ जा कर ही अब तुम क्या कर लोगी? खुदा न करे वहाँ तुम्हें कुछ हो गया। नकबख्त, चला कम-अज़-कम अब यह तो हा कि हम जम्मू में रहें या कश्मीर में कहीं काई एक घर तो बच जाए. कहीं कोई एक घर। जहाँ हम ज़िन्दगी की बाक़ी साँसें अल्लाह पाक का सिजदा उस का शुक्र करने में गुज़ार सकें। जहाँ हम नौशीन और उस के बच्चे को उन की ज़िन्दगी का बाक़ी सूरज दिखा सकें। बाक़ी सूरज आमीन ।'

नौ बज रहे थे। खाली प्याला वापस ट्रे में रख कर मेरा हाथ अब खुले बटुए में गाड़ी की चाबी टटोल रहा था।

डोगरी से अनुवाद स्वय लेखिका

छत्रपाल

कहानी डॉक्टर मेहरबान की बतर्ज क़िस्सा तोता मैना

किसी गाँव के किसी बाग़ के किसी दरख़्त पर, किसी वक्त एक तोते ने अपनी चोंच के साथ मैना के पंख सहलाते हुए बडे अपनपन से एक पुराना सवाल पूछा, 'क्यों आज सरकार कुछ मेरे साथ नाराज़ है?'

मैना ने मुँह फुलाया और पर खिसक गई। फिर बोली 'मर्दों की करतूत देख कर कलेजा भुन गया है। तुम भी तो उसी जाति के हो जिस जाति का डॉक्टर मेहरबान।'

तोता श्रद्धा के साथ बोला 'डॉक्टर मेहरबान तो राजधानी के प्रख्यात हार्ट सर्जन हैं। उन्होंने सैकडों मरीज़ों के दिल के द्वार खोल दिए हैं। बाईपास सर्जरी में उन की कोई मिसाल नहीं। आज तक कोई भी मरीज़ उन से निराश नहीं हुआ।'

'पर मैं बडी निराश हूँ।' मैना ने एक दीर्घ नि श्वास लिया।

'तुम को कौन सी सर्जरी करवानी है। तुम्हारे पास तो दिल ही नहीं है।' तोते ने उलाहना दिया।

'परमेश्वर मुझे तुम्हारे बस न करे। नहीं तो मेरा भी वही हाल होगा जो मिसकीन गूजर का डॉक्टर मेहरबान के हाथों हुआ।'

'अच्छा पहेलियाँ न बुझाओ और कहानी कहो सभी लोग इंतज़ार कर रहे हैं।'

मैना की काली आँखों में दुख के पीले रंग की लपटें उठने लगीं। वह बोली

'लो बेईमान सुनो! तुम्हें याद होगा। दो बरस पहले बरसात की बाढ़ में हम जहाँ रैन बसेरा करते थे वह वृक्ष जडों समेत उखड गया था। तब हम ने बरसात में मिसकीन गूजर के घर आसरा लिया था। उस का घर भी बरसात में खासा ढह गया था। मवेशियों के कमरे में ही सब रहते थे तो भी हमारा कितना ख़याल उन लोगों ने रखा था।'

तोते को उफनती और मूसलाधार बारिश में अपने पानी से भीगे पंख याद आ गए। 'अगर आज़ाद पंछियों का ये हाल था तो गरीब परिवारों पर कैसी विपत्ति बनी होगी। पर सुना मिसकीन गूजर ने सरकारी रिलीफ़ मिलने के बाद नया घर बनवा लिया है।'

मैना चमक कर बोली 'नया घर किस की माँ का बना है गूजर को तो किसी ने पूछा भी नहीं। कैसा अंधेर है। घर गिरा ग़रीब मिसकीन का और रिलीफ़ ले गया पक्के मकान वाला चौधरी कर्मदीन।'

'पर क्या सरकार अंधी है? उसे दिखाई नहीं देता किस का सिर फटा है और वो टाँके किस के सिर में लगा रही है! अच्छा तुम कहानी सुनाओ सरकार को रहने दो। उस ने तो कौरवों की माँ की तरह आँखों पर पट्टी बाँधी हुई है।'

मैना बोली 'पिछले जुमा को मिसकीन गूजर मर गया।' यह डायलॉग बोल कर मैना चुप हो गई और तोते के चेहरे पर अपनी बात का असर देखने लगी।

पाठको आप की तरह तोते ने भी ये न सोचा था कि कहानी का धागा इस तरह टूट जाएगा। उस ने मैना से कहा 'गूजर को इतनी जल्दी खत्म करके तो तुम ने कहानी का ही अंत कर दिया।'

घूँट भर कर मैना सुनाने लगी 'कहते हैं रोग और भूत कमजोर आदमी का ही चिपकते हैं। मिसकीन गरीबी के साथ साथ दिल का रोगी भी था। उस के दिल की कोई रग बद होती जा रही थी। ऑपरेशन बगैर कोई चारा न था। दिल क बद द्वार क स्थान पर बाहर की तरफ से जाने वाला दूसरा रास्ता खोला जाता है। इसे बाईपास कहत हैं। मैना ने तोते को अपनी सामर्थ्य के मुताबिक समझान का प्रयत्न किया।

तोते ने अपनी समझ के मुताबिक समझते हुए कहा, 'मैं समझ गया हूँ। जैसा कश्मीर जाते समय नसरी नाले के पास बाईपास है उसी तरह। यह रास्ता पस्सियाँ गिरन के कारण सड़क बद होने पर खोला जाता है। उसी तरह ये दिल का बाईपास भी होगा।

मैना बोलती जा रही थी।

घर गिरने पर अगर मिसकीन को सरकारी रिलीफ़ नहीं मिली तो सरकारी हस्पताल में इलाज भी कहाँ होता। उस के रिश्तेदार उसे राजधानी म डॉ मेहरबान के पास ले गए। उस का हस्पताल देख कर मिसकीन की आँखें फट गई। डॉक्टर ने कई टैस्ट किए और उसे ऑपरेशन की तारीख दे दा। कई हज़ार रुपयों का इतज़ाम करने को भी कहा। मिसकीन के पास इतना पैमा कहाँ था। हाँ उस ने हज पर जाने के लिए कुछ रक़म जोड कर रखी हुई थी। कुछ भैंसें भा थीं और थाडी जमीन भी। ये बेच कर भी पैस पूर न पड़ते थे। अगर सभी बिक गया ता बाद में खाएगा क्या और परिवार को क्या खिलाएगा। उस का बेटा भी मैट्रिक कर के बेकार बैठा था। उस ने सोचा चौधरी करमदीन स कर्ज़ लेना पडेगा। फिर वो साचता जान रही तो जीन के सार सामान आ जाएँगे। इस वक्त मत्र से बड़ा काम जान बचाना है।

दिल को बचाने की चिन्ता में दिन-रात घुलता उस का दिल और भी कमजोर हाना जा रहा था। कमज़ोर पा कर उसे कई और रोग भी लग गए। पैसे का इतज़ाम करने के लिए जिस दिन ठस न अपनी भैंसें बेचीं, उस दिन भीतर ही भीतर कई चीज़ें उठीं और दिल की नाडियाँ पतग के तनावा की तरह फँस गईं। जिस दिन ज़मीन वाला तनावा में एक के ऊपर एक कई गाँठें उभर आईं और वो चक्कर खा-खा कर जमीन पर गिरने लगा तो उम के परिवार ने उस सरकारी हस्पताल में पहुँचा दिया पर डॉक्टरों न उस का इलाज करने स इकार कर दिया। क्लर्कों की तरह उस की फाइल पर चिड़िया बना कर उमे दूसरे हसपताल में जाने को कह दिया। जैसे दफ़्तर में कोई फ़ाइल एक टेबिल स दूसरे टेबिल तक जाती है उसी तरह मिमकीन गुज़र हस्पताल में दरबदर होन लगा। अत मं उसे डॉक्टर मेहरबान के हस्पताल में पहुँचाया गया जहाँ उसे वैस ही डेढ महीने के वाद आना था।

मिसकीन वहुत सीरियस था। डॉक्टर ने उस का जाँच करक फ़ौरन ऑपरशन करने की सलाह दी और साथ ही फीस के हज़ारों रुपए जमा करवाने के लिए कहा। मिमकान क घर के लोग वहुत घबराए हुए थ। उन्होंने झट फ़ीस जमा करवा दी। डॉक्टर ने महरवानी करके फौरन ऑपरेशन की तैयारी की। पर भगवान की इच्छा ऑपरशन थिएटर में पहुँचत पहुँचते मिसकीन का अचानक दिल का दौरा पडा और वो खत्म हो गया।

ये कहत-कहते मैना की आवाज़ रोने राने का हा आई।

'बेचारा मिमकीन कहाँ पहुँच कर मौत आई। इतनी ही आयु रही हागी। लम्बा नि श्वास ल कर तात न अफ़सोस जाहिर किया और कहा अब इस में डॉक्टर महरबान का क्या दोष उम ने ता मिसकान का नहीं मारा न!

मैना बिसूरते हुए बोली 'मैं मिसकीन की मौत पर इतनी दुखी नहीं जितनी डॉक्टर की करनी पर। डॉक्टर का फ़ौरन पता चल गया कि उस का मरीज़ मर गया है पर उस न ये बात छुपा कर रखी। फिर उम न अपना टाम क साथ ऑपरशन करन का नाटक किया। मिसकीन क मृत शरार की छाती पर कई चीरें लगाए और उम का लाश सी कर ऑपरेशन क सार कर्तव्य पूर करक उमे इटन्सिव कयर यूनिट में भज दिया। किसी का भी मरीज़ का

डिस्टर्ब करने की इजाज़त नहीं दी। छह घंटे सारा परिवार सूली पर टँगा रहा।

अब उन के सब्र का पैमाना भर चुका था। डॉक्टर ने उन का ध्यान दूसरी तरफ़ लगाने के लिए किसी को इंजेक्शन लाने किसी को दूसरे काम के लिए दौड़ा दिया।

जूनियर डाक्टर एक दो बार कह गया कि ऑपरेशन कामयाब रहा है और बीमार आई सी यू में रिकवर हो रहा है। पाँच सात घंटे बाद आप मिल सकेंगे।

मिसकीन की बीवी के सब्र की इन्तिहा हो चुकी थी। वो डाक्टर से मिन्नतें कर रही थी। डॉक्टर उसे दिलासा दे रहा था। कह रहा था 'मिसकीन कुछ घंटों में होश में आ जाएगा अब वो बिल्कुल ठीक है।' मिसकीन की बीवी की ज़िद पूरा करने के लिए डॉक्टर ने जूनियर डॉक्टर को एक तरफ़ ले जा कर कुछ समझाया और मिसकीन की पत्नी मेहरी को उस के साथ भेज दिया। कई बरामदे पार करके वो एक कमरे के बाहर पहुँची। जूनियर डॉक्टर ने उसे दरवाज़े से शीशे के भीतर इशारा किया और कहा "वो है तुम्हारा शौहर। भीतर बँधा मिसकीन कई नालियों और मशीनों में फँसा हुआ था। मुँह के ऊपर कोपा सा लगा हुआ था। मेहरी पूरी तरह पहचान न सकी। सभी बीमार बेहोशी में थे और सभी के मुँह ढके हुए थे। सभी ने एक जैसे कपड़े पहने थे पर मेहरी को साँस में साँस आई। चाहे वो अपने गुज़र को पहचान न सकी थी पर वो वहाँ था।

तोते के पंख ऐंठने लगे और वो तड़प कर बोला 'तेरे कहने का अर्थ ये हुआ कि डॉक्टर मेहरबान ने अपनी फ़ीस की ख़ातिर एक लाश का ऑपरेशन किया?'

'दिन ढलते ही डॉक्टर ने मेहरी को अपने दफ्तर में बुलाया और बड़ी शोकभरी आवाज़ में कहा कि ऑपरेशन तो ठीक हो गया था पर उस के बावजूद मिसकीन को अचानक फिर दिल का दौरा पड़ गया और वो खत्म हो गया। पूरी कोशिश के बाद हम उसे बचा नहीं सके। मेहरी ने पूरी ताक़त से रोना शुरू कर दिया तो डॉक्टर उसे समझाने लगा। सैकड़ों मरीज़ों में से सिर्फ़ किसी एक के साथ ही ऐसा होता है। मेहरी डॉक्टर से कुछ न पूछ सकी। डॉक्टर के पास भी बात करने का समय नहीं था। वह यह कह कर उठ गया "लाश ले जाने का इंतजाम करो अगर हमें कहो तो हम कर देते हैं पर उस में हस्पताल की कमीशन देनी पड़ेगी। '

मैना की बात सुन कर तोते के दोनों पंजे टहनियों को कसने लगे। गुस्से के साथ उस की देह काँपने लगी। हृदय में बेचैनी चाबुकें मारने लगी और दिमाग़ फुलाए हुए गुब्बारे की तरह तन गया। वह टहनी पर बैठ ही न सका। 'इतनी नीचता? डॉक्टर को एक मोटी गाली दे कर उस ने उड़ान भरी और खुले आकाश के बीच पहुँच गया। अपना गुस्सा उतारने के लिए वो कितनी देर हवा के साथ भिड़ता रहा। मैना उसे कलाबाज़ियाँ खाते देखती रही और अफ़सोस करती रही।

अंत में थक कर निढाल साँस चढ़ी हुई और बेहोश सा तोता टहनी पर उतर गया। उस का सारा गुस्सा अब थकावट में बदल गया था। कुछ देर वो चुप रहा। सोचता रहा फिर दो बार हँसा और मैना के पास जा कर बैठ गया।

मैना ने हैरान हो कर तोते से कहा 'क़लमरखा पहले तुम लोक कथाओं के पक्षी की तरह एक बार हँसते थे और एक बार रोते थे आज दो बार क्या हँसे?

तोते ने उत्तर दिया 'पहली बार तो मैं यह सोच कर हँसा कि तुम मुझे पत्थर दिल कहती हो इसलिए मुझे बाईपास सर्जरी की ज़रूरत ही नहीं पड़ेगी। दूसरी बार मैं यह सोच कर हँसा कि डॉक्टर मेहरबान सिर्फ़ इंसानों में होते हैं परिंदों में नहीं।

डोगरी से अनुवाद पद्मा सचदेव

बधु शर्मा

साहू

उस ने लोगों से सुना था अगर किसी को बद्दुआ देनी हो तो उसे इस तरह फटकारो—जाओ तुम अपना मकान बनवाओ। यह सुन कर वो सोचता था ये सब खाते पीते लोगों के चोंचले हैं। इस में कोई सार नहीं। पर अब वो स्वयं गारे, ईंटें सीमेंट और रेत के ढेरों में बुरी तरह से फँसा हुआ था। हाल बुरा और बाँके दिन। दिन भर की दौड़ धूप और भटकन के बाद मुँह का रंग भी बेरंग हो रहा था। उसे महसूस होता उस में से सत्ता बहती जा रही है। किसी का उस से जरा सी हमदर्दी या संबंध नहीं है। मर या जिए। यहाँ तक कि उस की अपनी पत्नी को भी उस से कोई हमदर्दी नहीं जिस की फ़रमाइशें और तक़ाज़े शैतान की अँतड़ियों की तरह लम्बी और कठिन होती जा रही थीं। बच्चे तो खैर अनजान थे। उन्हें कैसे पता होता कि उन जैसे लोगों के मकान कैसे खड़े होते हैं। वो तो दिन भर अपने साथियों के साथ बजरी रेत मिट्टी और मसाले के ढेरों पर नाचते-कूदते और आसमान सर पर उठाए रहते। रेत के घरौंदे बनाते मिटा देते। लकड़ी चारने से निकले छिलके और बुरादा उठा उठा कर एक-दूसरे के सर पर न्यौछावर करते। लकड़ी के छोटे छोटे टुकड़े इकट्ठे करते और चुप रहने पर इधर उधर बिखरते रहते।

उसे यह भी बहुत बुरी तरह से पता था कि मिस्त्री यहाँ तक कि मजदूर भी जो उस से पैसा लेना चाहते थे सारे हरामखोर हैं। बस शाम को अपनी धियाड़ी लेते समय जरा सा मुस्कराते हैं। उस की तरफ़ सूखी हमदर्दी के कुछ बोल उड़ा देते हैं जिन में ये बोल मुख्य रहता 'बाबूजी आप का काम तो हम घर का काम समझ कर कर रहे हैं। आप से कहीं जरूर कोई संबंध रहा होगा।

वो अपने जिस्म से मिट्टी और धूल की परत तौलिए से झाड़ता—पाँव धरती पर पटकता ताकि उँगलियों में फँसी रेत निकल जाए। नाक से धूल और मिट्टी निकालता फिर आँगन में नलके के नीचे लगे ड्रम का पानी निकाल कर नहाने लगता। नहाने के बाद वो आँगन में एक कोने पर पड़ी कुर्सी में आ कर धँस जाता। उसे लगता धूल उस के जिस्म पर गोंद की तरह चिपकी हुई है। उसे बहुत बेचैनी होती। वो जोर-जोर से खाँसता नाक साफ करता पर ठीक उसी वक्त सात फेरों के बाद जिन्दगी से जुड़ी उस की पत्नी एक हाथ में चाय का प्याला दूसरे में प्लेट थामे जिस में दो पुराने बाकरखानियाँ पड़ी होतीं आ कर खड़ी हो जाती। बाकरखानियाँ वो सयानी स्त्री मजदूरों मिस्त्रियों को चाय के साथ देने के लिए खुद खरीदती थी। पुरानी रसोई में से सूर्य की पहली रश्मियों की तरह रेत के ढेर से उतरती उस के पास आ कर खड़ी हो जाती। बस आजकल यही क्षण उस की जिन्दगी के मधुर क्षण बन कर रह गए हैं। इन की प्रतीक्षा उसे पूरे दिन रहती है। बाकी के मधुर क्षण मकान में चलते कारोबार के शोर में खो गए हैं। लगता है जैसे वो शरणार्थी हो गए हैं। घर में जगह कम होने की वजह से उस की पत्नी और बच्चों को पड़ोसियों के घर पर रैन बसेरा करना पड़ता है। वो खुद आँगन में सोता है। सो भी कहाँ पाता है। वो गली और घर में सामान की चौकीदारी करता है। जरा-सी आहट होते ही कान खड़े हो जाते हैं।

सुबह हो रही थी कि एक बाईस तेईस बरस का साँड उस के सामने आ कर खड़ा हो गया। उस का भोला सा चेहरा बड़ी बड़ी भूरी आँखें जिन में बेचारगी और संकोच घुला हुआ था माथे और गर्दन पर लंबे लंबे धुंघराले

बाल दह का रग एसा मानो हरे अखरोट स रगीन छिलके पूरे शरीर पर मल हुए हा। नज़र नीची किए हुए वो वाला मिस्त्री न भेजा है।'

वो आन वाले को टकटकी लगाए देखता जा रहा था। उस ने उसे छत पर जाने के लिए कहा। आँगन में अभी तक ठडक थी। कारीगरा और मज़दूरों के आने में अभी आधा घटा था। वो लाग नौ बजे आते और अपन औज़ार तथा ममाला तैयार करन क बाद आध घटे तक पान तबाकू करत हुए साढ़े नौ बज तक काम शुरू करत थ।

उसे याद आया, कुछ साल पहले उस ने एसा ही जवान गबरू देखा था जो उस की गला में पिटारियों के ढक्कन हटा हटा कर छोटे बड़ा को काले नाग दिखाया करता था। सिर पर ढीली सी पाग कानों में बड़ी-बडी बालिया उस खास आदिवासी रूप देती थीं। उस याद आया कि उस ने भा अपना नाम अमरसिह नाथ बताया था। हाँ यही नाम तो था उस का। उस सपेरे का रूप-रग भी इस छोकरे स मिलता था। उस की भूरी आर पनी आँखें और उस के नागा की चमकती तेज़ आँखें कितनी देर उस याद रही थीं। वो यादा क गलियारा म गुम था कि उस क कान में मिस्त्री क बोल पड़े बाऊजी क्या कोई उडिया छाकरा आया था?

आ हाँ छत पर धूप सक रहा है। क्या नाम है उस का? उस न मिस्त्री से पूछा।

'साहू'

किशोर साहू—उस के मन में ये नाम गेंद सा उछला। साचा साहू तो जाति होगी नाम कुछ और होगा।

'बाऊजी वो बिलासपुरिया आज अपन गाँव जा रहा है। इस उड़िया लड़क का अपने स्थान पर लाया है—अच्छा कमरा है ये। उस लगा अपन कमीशन का जाड बिठान के लिए वह तयारी कर रहा है।

वह मन हा मन खुश हाता है—चलो अपने गाँव जा रहा है। अपन लोगों मे पहुँच जाएगा। पता नहीं बचारा कब स यहाँ फँसा है। महीन से ता ऊपर उसे यहाँ ही काम करत हो गया है।

साहू सच में ही बहुत फुर्तीला है—कामकाज में तज—पाँव में जैस पहिए लग हा। हर समय काम के लिए तैयार, *खिला खिला-सा रहता है अपने में मस्त।* दोपहर को जब अपने सफेद चमकाले डिब्ब स भात खा रहा हाता है तब कभी-कभी वो भी उस के पास जा कर खड़ा हो जाता है।

वह उमे कहता है 'साहू थाड़ा और खा लो मैं भजूँ?' 'खा लिया —वा हँसते हँसत अपन प' पर हाथ फिराते हुए कहता ह। फिर अपना डिब्बा धो कर उस म पानी भर कर पी लता है। डिब्बा सँभाल कर थैल म रखता है—गमछे क साथ अपन हाथ मुँह साफ़ करता है और फिर गमछा झाड कर सधे हुए मज़दूर का तरह सिर पर मुँडासा लपट लता है। वह उस स बहुत सी बातें पूछना चाहता ह। उस का घर गाँव सबधी खता-बाड़ी आदि।

वा कहता 'खती कमता । उस न बताया था माँ बाप व बहन गाँव क मुखिया क खेतों में काम करत हैं। मुखिया उन्हें उधार दता है जो चावल पैसा सूद क साथ वापस करना पडता है। इस बार बहन का शादी पर उधार लेना पड़ेगा—उसी ने उस बताया था—यह सुन कर वा बड़ा दुखी हो गया था। पर साहू का चहरा एकदम कोरा-कारा था जिस पर दुख की कोई परछाई उस ढूँढने पर भी न मिली थी।

घर कब जाओगे? उस का य सवाल सुन कर साहू हँस पड़ा था पर उस की आँखें भाग गई थीं। हो सकता है धा रो रहा हो। या शायद उस की आँखों म आडाशा क उस गाँव की धान वाली उन खेतिया क पानी की कुछ बूँदें उस का आँखा में आ गिरी थीं जहाँ उस की माँ बाप व बहन घुटन घुटन पानी में दाटर हुए धान रोप रहे थ। उस ने यह भा बताया था किसी आहजा नाम के ठकेदार क पास उस क तीस दिना क पैस फँस हुए हैं। ठकेदार का मुशी पेमेंट न मिलन का बहाना करक उस टालता रहता है। बारह सौ की रक़म एक गरीब के लिए क्या अर्थ रखती है शायद ठकेदार का इस बात का एहसास या पास न हो—उस ने साचा था।

साहू उस के घर में खून हिल मिल गया था। छुट्टी के बाद भी उस की पत्नी बहुत बार उस छोटे मोटे काम के लिए रोक लेती थी। वो सारे काम हँस कर करता था। अपनी स्त्री की फ़ायदा उठाने वाली आदत उसे ज़रा भी पसंद न थी। कई बार उस ने टोका भी था। कई बार तो उस की इच्छा होती कि साहू उस के पास बैठ कर चाय पी ले। ज्यादा काम करने पर कुछ पैसे ही ले ले पर वो इस बात को हँस कर टाल जाता था। उस का मानना है कि मज़दूरों को बहुत दिलेर नहीं होना चाहिए। वो यह भी जानता है कि साहू को सच, समय की मार समझा देगी।

अपनी सारी जमा पूँजी एक दिन उस ने मेरी पत्नी के पास रख दी। पूरे छह सौ चालीस रुपए थे।

'वापसी पर लूँगा' उस ने कहा था।

किसी काम के लिए वो बाहर गया हुआ था। वापस आ कर उस ने पाया कि इमारत का काम रुका पड़ा है। गली में खून बिखरा हुआ था। वो सीधा छत की तरफ़ भागा। बढ़ई अपना काम कर रहा था। छिली हुई लकड़ी की खुशबू छत पर बिखरी हुई थी। 'बाऊजी गजब हो गया। साहू बुरी तरह जख्मी हो गया है। मजदूर और मिस्त्री उसे सरकारी शफ़ाखाने ले गए हैं।' बढ़ई ने उस को देखते ही बता दिया। 'ये सब कैसे हुआ?' डरते डरते उस ने पूछा और भीतर तक काँप गया।

'वो नीचे ईंटें रख रहा था ज़रा सा ध्यान बँटते ही—शायद मिस्त्री ने उसे आवाज दी थी। एक ईंट सीधी उस के माथे पर आ कर लगी बेचारा लड़खड़ाता नीचे गिर गया।' बढ़ई ने उसे बताया और उस के सहमते हुए कहने लगा, 'बच तो जाएगा पर मुँह माथे पर खूब चोटें आई हैं। लगता है कोई हड्डी पसली भी जरूर टूटी होगी—अपने पैरों पर खड़ा नहीं हो सकता था।'

वो सुन कर डर गया।

साहू का इलाज ठीक हो रहा है। माथे और ठोडी पर टाँके लगे हुए हैं। मुँह पट्टियों में लिपटा हुआ है जिस में से निकलती उस की आँखें बड़ी-बड़ी और वीरान लगती हैं। दाईं टाँग पर पलस्तर चढ़ा है बहुत दर्द और कष्ट है पर चुपचाप बिस्तर पर पड़ा रहता है। डॉक्टर और नर्सें उस का ख़याल रखते हैं। पर वो सभी से कटा-कटा सा रहता है। शायद कुछ-कुछ डरा सा सहमता सा भी। पता नहीं वो कब ठीक होगा? तब तक उसे अस्पताल में रहने भी देंगे या नहीं? पता नहीं ग़रीब चुपचाप पड़ा मन में क्या दलीलें करता रहता है।

वो तक़रीबन हर रोज उसे देखने जाता है। उस के लिए फल और बिस्कुट ले जाता है। कभी कोई छोटी मोटी दवा भी लानी पड़ती है। रोटी तो उसे अस्पताल से ही मिल जाती है। उस की पत्नी और बच्चे भी कभी कभी उसे देखने जाते हैं। उन्हें देख कर साहू बड़ा खुश होता है। मकान का काम चालू करने के बारे में भी पूछता रहता है। शाम को कोई न कोई उस का साथी मजदूर उस के पास जा बैठता है।

एक बार उस ने एक मजदूर को देख कर साहू से पूछा था 'क्या ये तुम्हारे गाँव का है।'

'नहीं साब भाषा एक' साहू का उत्तर था।

कोई पंद्रह दिन तक अस्पताल में रहने के बाद लाठी का सहारा ले कर रेलवे स्टेशन के पास बिछी झापड़पट्टी में अपने मजदूर साथियों के साथ रहने चला गया था। टाँग अभी पलस्तर में ही था।

संयोग से एक लेबर इन्स्पेक्टर उस का अच्छा दोस्त था। उस ने आहूजा ठेकेदार के पास ग़रीब साहू के फँसे पैसों की बात की था। उन से अपना असर रसूख़ लड़ा कर पैसे निकलवाने का ताकीद था। इन्स्पेक्टर ने बताया कि आहूजा एक नेक आत्मा है। पुराना और तगड़ा ठेकेदार। ऐसा बात वो नहीं कर सकता। हाँ उस का मुंशी बेईमान आदमी है। चलो देखते हैं क्या हो सकता है।

झापड़पट्टी में साहू का अता पता ढूँढने उसे थोड़ी कठिनाई हुई फिर गंदे नाले पर बनी पुलिया पर बैठे एक

छोकर ने बताया कि वा गेलवे स्टशन पर निखाई देगा। प्लेटफार्म पर जा कर उस न इधर उधर साहू को ढूँढ़ना शुरू कर दिया। थाडी दर बाद एक हाथ जिस में चमकता हुआ डिब्बा था और जिस मं कुछ छुट्ट पैस पड थे उस की तरफ़ बढा। उस ने मुड़ कर देखा साहू ही था। भला चगा हात हुए भी ठस ने अपने भीतर अत्यत दर्द और ग्लानि का अनुभव किया था। उस न सोचा ठीक ही कहते है—किसान टूटे ता मज़दूर बनता है और मज़दूर टूट तो भिखारी।

दोनो कितनी दर बेंच पर बैठ बातें करते रहे। चाय पीते रहे। साहू अपने गाव वापस जान के लिए बड़ा उतावला और बसन्न हो रहा था।

उस न साहू का समझाया 'कल ही जा कर आहूजा क मुशी से अपन पैमे ले आओ। बीवीजी के पास रख पैस भा ले ला। यह सुन कर साहू खुशी क मारे पागल जैसा हो गया।

रात खासी ढल गई थी। चारों ओर सुनसान था। दानों ठठ खड़ हुए। साहू के साथ साथ वह भी उस की बस्ती तक चला गया। विदा हाते ममय ठस न साहू से कहा 'मैं खुद तर लिए परसों की तिनसुखिया ट्रेन की टिकट ल आऊँगा। तुम प्लटफॉर्म पर मरा इतजार करना।

बच पर बैठा साहू उस का इतज़ार कर रहा था। एक नया छोटा सा ट्रक उम क पास पड़ा था जिस की कीला कब्जा पर नाला रग चमक रहा था। उम क ट्रक पर एक नई छतरी भी पडी थी।

साहू का विदा करन उस का पत्नी आग बच्च भी आए थे। उस न साहू का रेल का टिकट पकड़ा दी। उम की पत्नी ने साहू का एक थैला दिया जिम मं ठस क लिए और उस की बहन के लिए कुछ कपड़ थे। बच्चों ने हँसते हँमत उम का राह मं खान क लिए कुछ सामान दिया। वह बड़ा प्रसन्न और कृतज्ञ था। साहू क पास कुछ कहन क लिए शब्द न थ पर उस की आखें जस सभी कुछ कह रही थीं।

तिनमुखिया धीर धीर प्लटफॉर्म छाड रहा थी। वह खिडकी स सिर जाड कर उन्हें दखत हुए रोता जा रहा था जैस काई लड़का विदा हा कर पालकी मं बैठा ससुराल जा रही हा।

डागरी से अनुवाद पद्मा सचदव

जितेन ठाकुर

सर्दखाना

उस दिन मैं अचानक ही उसे ढूँढता-ढूँढ़ता अदालत में पहुँच गया था। पिछले दस-बारह बरसों से न तो मुझ कभी उस की याद आई थी और न ही उम का ज़िक्र कहीं सुनने में आया था। उस से मेरी घनिष्ठता कभी नहीं रही पर सबध मधुर थे। उस की सादगी और ज्ञान हमेशा मुझे प्रभावित करत थे। पढाई समाप्त करने के बाद कुछ देर हम ने इकट्ठे ही सडका की धूल फाँकी थी। वो उम्र में मुझ स छोटा होने पर मेरा सम्मान भी करता था। शायद इसालिए वो मुझे अच्छा लगता था।

कुछ दिन पहले ही मुझे किसी ने बताया था कि वो अदालन में क्लर्क है। पर जिस ने मुझे ये खबर दी थी उस ने कुछ छुपाते हुए ये भा जोडा था कि 'रावत कुछ सौदाई-सा लगता है।

वो कैसा लगता है सौदाई होने पर, यह मैं अपनी आँखा से देखना चाहता था। वैसे उम के बाबू बनने पर भी मैं हैरान था। उसे अग्रज़ी हिन्दी व सस्कृत का बडा अच्छा ज्ञान था। मास्टर तो वो कभी भी लग सकता था। वैस उस न वकालत भी की हुई थी और अगर उसे अदालत में ही काम करना था ता फिर वकालत क्यों नहीं की। उसे साहित्य लिखने पढने का भी खूब शौक़ था।

इतने बरसों के बाद उस क बारे में ये सब सुन कर मैं बहुत हैरान हुआ था। कालिज क दिना में गाँव स आया वो शर्माया-सा लड़का मरी यादों की दहलीज खटखटा रहा था। आज अचानक ही मैं उस से मिलने पहुँच गया।

पर्दा उठा कर मैं कमरे में दाखिल हुआ तो जैसे किसी और ही वातावरण में पहुँच गया। अदालत की भीड़ और शोर से इस कमर का कोई सबध न था। कमरा बहुत ही ठडा अँधेरा सीलन भरा और खामोश था। अदालत की इमारत और दूसर कमरों की तरह इस कमरे की छत भी अच्छी ख़ासी ऊँची थी। छत में एक खास किस्म का रोशनदान था जहाँ स छन कर धूप का एक छोटा सा टुकडा द्वार के ऊपर बैठा हुआ था। इस के बावजूद कमरे में अँधेरा था और उस में बहुत स बल्ब जल रहे थे।

कमरा ऊँची ऊँची लोहे की अलमारियों से भरा हुआ था। इन अलमारियों में कपडा में लिपटा हुइ वो हज़ारों लाखों करतूतें भरी हुइ थीं जिन में इसान क राक्षस बनन का इतिहास लिखा हुआ था। पुलिस के झूठ मुकदम और सच्चे गुनाहा के बाद भी झूठ के सहारे बचे हुए मुलजिमा के लबे-लबे अदालती सिलसिल इन में दफ्न थे। फ़र्श स ले कर छत तक लाहे की बडी-बड़ी अलमारिया के बाचोंबीच और गुनाहों के दस्तावेज़ा में दबा हुआ वो कहाँ था मैं उसे ढूँढने लगा।

दा अलमारियों क मध्य पडी एक मेज के पीछ स दा जाडी आँखें मुझ ताड रही थीं। मैं उसी ओर बढ़ा। वो रावत हा था। खराब सहत और पीले रग के बावजूद मैं न उस पहचान लिया था। मैं जैसे-जैस मज के पास हाता गया वो धीरे धीरे खड़ा होता गया। मरा विचार है कि वो मुझ पहचानन की कोशिश कर रहा था और मुझ अचानक वहाँ दख कर हैरान था।

'मुझे पहचाना? उस क क़रीब आ कर मैं न मुस्करा कर पूछा। मेरी हँसी वैसा ही थी जैसे कोई जासूस छिपाए

हुए ख़ज़ाने को ढूँढ़ कर मुस्कराता है।

अब तक वो अपनी पूरी लम्बाई के साथ मेज़ के पीछे खड़ा हो गया था और उस की आँखों में पहचान के पक्षी अपने पंख फड़फड़ाने लगे थे। कमरे की तरह ही उस की अँधेरी आँखों में अचानक रोशनी जल उठी थी। उस ने मेरा दायाँ हाथ अपने दोनों हाथों में दबा लिया। 'आप... आप यहाँ?' उस की आवाज़ में अविश्वास था पर वो खुश भी दिखाई दे रहा था। उसे इस तरह अचानक मेरे यहाँ आ जाने की कोई आशा न थी।

'तुम्हारा तो कोई पता ही न लगा। इतनी देर तक अपने आप को कहाँ छुपाया हुआ था।' मेरी आवाज में गहरा अपनापन था।

उस की आँखों में ख़्वाब तिरने लगे थे। हम बैठ कर पुरानी बातें करने लगे तो जैसे बारह बरस का वो समय सिकुड़ कर एक बिन्दु पर आ टिका। पुराने दोस्तों की बातें—कौन अब कहाँ-कहाँ है इस की चर्चा होने लगी। इन बातों के दौरान मैं देख रहा था कि रावत के हाव भाव में पागल इंसान होने का कोई लक्षण न था। हमारी बातें पढ़ने लिखने और साहित्य पर आ कर रुक गईं। रावत कुछ परेशान-सा हो गया और कहने लगा 'आप को क्या बताऊँ। यूँ लगता है जैसे मैं खुद ही अपना क़ातिल बन गया हूँ। लिखना पढ़ना तो दरकिनार यहाँ तो साहित्य का नाम लेने की इच्छा भी नहीं होती। दिमाग़ में हर समय इतना तनाव रहता है कि एक-एक दिन एक-एक वर्ष-सा लगता है।' उस की आवाज़ में छुपे दर्द को बूझ कर मैं काँप गया।

'तुम ने वकालत क्यूँ नहीं की?' मैं जानता था कि इस जैसे भावुक मनुष्य से आज के समय में वकालत करने की उम्मीद रखना कोई अक्लमंदी नहीं है। उस के भीतर आज भी अपने स्वभाव के अनुसार कुछ हासिल करने की चाह थी पर वो इस माहौल के ताप में झुलस गया था।

मुझे उत्तर देने के बजाए उस ने मुझे चुभती हुई नज़रों से देखा और फिर अपना सिर मेज़ पर रख कर आँखें बंद कर लीं। उस के इस व्यवहार से मैं चौंका। मैं ये न जान सका कि मेरे सवाल से वो इतना परेशान क्यूँ हो गया था। अचानक मैं सोचने लगा कि ये कहीं पागलपन के शुरू के आसार तो नहीं हैं। मैं चला जाऊँ या बैठा रहूँ ये फ़ैसला कर पाना मेरे लिए मुश्किल हो रहा था।

काफ़ी देर बाद रावत ने गर्दन उठाई और किसी को चाय लाने के लिए कहा। 'चाय रहने दीजिए, अभी पी है।' उस ने मेरे मना करने पर भी मेरी तरफ़ कोई ध्यान नहीं दिया।

'सभी मुझ से पूछते हैं। अब आप खुद ही देख लें अदालत में वकीलों के बैठने की कोई जगह नहीं बची है। रास्तों पर अधिकार करके लोगों ने मेज़-कुर्सियाँ लगा ली हैं। एक एक मुवक्किल को दस दस वकील टटोलते हैं। ग़रीब आदमी सच्चा हो कर भी मुकदमा हार जाता है। रुपए पैसे वाले हार कर भी जीत जाते हैं। जो वकील ग़रीबों के घर-बार छीन लेते हैं वो भला कैसे सुखी होंगे। मैं यहाँ से सिर्फ़ तनख़्वाह लेता हूँ और ग़रीबों की बद्दुआओं से अपने आप को और अपने कुटुंब को बचा रहा हूँ।'

उस के भीतर दबा गुस्सा उस की बातों में साफ़ झलक रहा था। पता नहीं मैं यह क्यूँ सोचने लगा कि उस का ये गुस्सा कहीं असफल मनुष्य का लक्षण तो नहीं। उस के साथ मैं फिर साहित्य की बातें करने लगा वो ऐसे खिल उठा जैसे सूखा वृक्ष बारिश की बूँदों से खिल उठता है।

मैं ने महसूस किया कि अदालत की बातों से वो यूँ बच रहा था जैसे सड़क पर चल रहा आदमी अपने आप को कीचड़ से बचाता है। बातों-बातों में उस ने कितनी ही बार कहा होगा 'आप आए हैं तो मन का कुछ बोझ हो गई है नहीं तो इस माहौल में... आप खुद समझदार हैं।'

मुझे महसूस हुआ कि उस के भीतर उजाड़ महल का एक बहुत बड़ा खाली सर्दख़ाना है। अभी भी टूटन से बचे

सगमरमरी फ़र्श के ऊपर अँधेरा तो है पर चमक भी है। जब भी रोशनी इस के ऊपर पडेगी ये जगमगा उठेगा।

चाय खत्म होने के कुछ समय बाद ही मैं उठ खडा हुआ। उसे अपना नया पता दिया और साहित्य की बैठकों के बारे में बताया। रावत मेरे साथ अदालत से बाहर तक आया फिर मेरे दोनों हाथों को अपने हाथों में ले कर कमजोर सी आवाज़ में बोला, 'यहाँ किसे बताऊँ मैं क्या चाहता हूँ। लोग समझते हैं मैं पागल हो गया हूँ। ऊपर की कोई आमदनी नहीं चाहता और ऐसी बातों में दख़ल भी नहीं देता। कुछ तो मुझे पागल ही समझते हैं और पीठ पीछे कहते भी हैं। आप ही बताएँ मैं

पागल हूँ। उस ने मुझ से यही पूछना चाहा था। पर मैं उस की बात पूरी होने से पहले ही चल दिया। मेरे पास और कोई चारा न था। मैं उस की चुभती और सच्चाई पूछती नज़रों का सामना नहीं कर सकता था।

कुछ आगे जा कर मैं अचानक मुड़ा। मैं ने सोचा था वो अपने कमरे में चला गया होगा। पर वो वहीं खडा था जहाँ मैं उसे छोड़ आया था। मुझे मुड़ते देख कर वो अपना हाथ उठा कर धीरे धीरे हिलाने लगा। मुझे लगा वो गुनाहों से भरे अपने दफ्तर में जाने से बचना चाह रहा है। जितनी देर भी बच सके बच ले।

पागल होना इसे ही कहते हैं? यह सोचते सोचते मैं धीरे धीरे अपनी राह चल दिया।

डोगरी से अनुवाद **पद्मा सचदेव**

सुदेश राज

कण-कण फिसलती रेत

मैं क्या करूँ कहाँ जाऊँ मुझे कुछ भी समझ नहीं आता। मुझे कुछ भी नहीं सूझता। मेरे चारों ओर घुप अंधेरा है जिस ने मुझ बेहोश कर दिया है। मैं इस अँधेरे से बाहर निकलना चाहती हूँ। पर यूँ लगता है जैसे किसी ने मुझे पक्की रस्सियों से बांध दिया है। मेरे मन में अनेक विचार उठते हैं। हर नया विचार नया तूफ़ान लाता है।

ये रोज़ रोज का अँधेरा आँधी तूफ़ान मुझे अच्छा नहीं लगता। मैं छोटी-छोटी बातों से उदास हो जाता हूँ। ये जब ज़रा सा नाराज हो कर बात करते हैं तो सारा दिन मैं सोचती रहती हूँ। फिर सारी रात मैं सो नहीं पाती।

ये मुझे क्या हुआ है। मैं तो कभी न खत्म होने वाली खुशियों में जीना चाहती हूँ। उमगों के हार पहन कर खुशियों के साथ नाचना चाहती हूँ। पर मेरी हर साँस घुट क्यों रहा है? क्यों मुझे हर बार तोड़ा मरोड़ा जाता है। मैं टूट-टूट कर टुकड़े-टुकड़े हो गई हूँ। मैं अपने इस अकेलेपन से दया की भिक्षा माँगती हूँ। मेरे ऊपर दया करो। मैं हर समय विचारों की भट्ठी में तपती रहती हूँ। ये विचारों की राख क्यों मेरे भीतर ही भीतर सुलगती रहती है।

मैं ने भगवान से बहुत कुछ तो नहीं माँगा था। एक छोटे से हँसते-खेलते खुशियों की महक बिखरते घर संसार की कल्पना की थी। रेत सीमेंट सरिए व ईंटों से बना घर तो मिला पर जिस से घर घर बनता है वो घर मेरा हो कर भी मेरा न हुआ। पर क्यों

मैं ने कभी भी किसी का कुछ नहीं बिगाड़ा। कभी किसी को ठेस नहीं पहुँचाई। तो फिर मेरे साथ जिन्दगी ने इतना बड़ा मजाक़ क्यों किया।

मैं क्यों अँधेरे में रोशनी की एक किरण के लिए तरस रही हूँ। मन करता है किसी की गोद में जा कर मन पर पड़े मनोबोझ का उतार आऊँ। जिस ने मेरा जीना हराम कर दिया है। पर—मैं अपने आप से डरती हूँ, अपने सहारे से डरती हूँ। मुझे यों लगता है जैसे अँधेरा मेरे अस्तित्व का एक हिस्सा बन चुका है। जिस चाहते हुए भी मैं छोड़ नहीं सकती।

पलंग की किड़ किड़ व चर र र र र की आवाज़—गर्म गर्म साँसें। दो शरीर एक होते हुए एक जान बन जाते हैं। एक जान नहीं-नहीं वो एक जान नहीं हो सकते। ये तो दोनों पति पत्नी का धर्म निभा रहे हैं। ये भी तो बाकी कामों की तरह ही एक काम है। काम

उस वक़्त मैं अपने पति की बाँहों में होते हुए भी वहाँ नहीं थी। मेरी सोच बिखर रही थी—सोचों को इकट्ठा करते हुए मेरी देह में दर्द के रोंगटे उभर आते हैं—हे भगवान ये मुझे क्या हो गया है—औरत तो अपने मर्द की बाँहों में आ कर अपने आप को संसार की भाग्यशाली औरतों में गिनती है। पर. मैं । मुझे ये सब अच्छा क्यों नहीं लगता। मेरा साँस रुक रही है। मन करता है इस घर में से निकल जाऊँ। मन घिनौना सा हो जाता है—पर फिर भी मैं एक लाश की तरह पड़ी रहती हूँ।

मुझे वो पहला दिन याद है जब इन्होंने मुझे पहली बार देखा था तो कहा था—कितनी गोरी हो तुम कितनी

कोमल—मरे जैसे खुरदरे मनुष्य के साथ लग कर तुम भी कहीं काली और खुरदरी न हो जाना। उन का ये कहना था कि मैं ने उन्हें चुप करवाने क लिए उन के होठों पर अपनी उँगली रख दी थी। वैसे मैं उन्हं चुप कहाँ कराना चाहती थी। उन के इन शब्दां ने मेरे तन मन में एक मीठी सी खुशी की लहर बिछा दी थी।

मुझे पता है मैं बड़ी सुदर हू। मेरा गोरा गुलाबी रग, तीखी नाक गुलाबी हाठ और चचल बालती आँखें—हँसता हँसता चेहरा इस बात का प्रतीक है कि मैं इद्रलोक की अप्सरा से कम नहीं हूं। पर मरा विश्वामित्र तो मिट्टी का बना है। उन की बेसब्री तो कुछ दिनो की थी—शादी के दस बारह दिनों में वा तप्त हो गए—पर मैं । जब भी उन का जी चाहता था वो अपनी भूख मिटा लेते—मेरा उन्हें कभी कोई खयाल न था।

अपने जीवन में एक-दूसरे को साझीदार बनाना ये हमारा साझा फ़ैसला था। हम इस के लिए समाज स भी लडे। मैं ने खुशियो की सतरगी पेंग पर झूला झूलते हुए इस राह पर फूँक-फूँक कर क़दम रखे थे। पर मैं न जानती थी प्रेमिका का रूप कुछ और होता है और पत्नी का कुछ और। पत्नी बनने पर मैं यथार्थ की धरती पर आ खडी हुई थी क्योंकि अब मैं उन की व्यक्तिगत जायदाद थी।

उन क अनुसार मुझे उन की जरूरत है उन्हें मेरी नहीं। आज के युग में बराबरी के दर्जे की दुहाई दी जाती है पर ये बराबरी का दर्जा कहाँ है? कई बार इन की नजर में अपने लिए मैं छोटेपन का भाव देख कर डर जाती हूं। मुझ देख कर इन का मुँह बनाना मुझ नज़रअदाज करना—दूसरों के सामने किसी न किसी बहाने मेरा अपमान करना—उस वक्त मैं क्रोध से काँपने लगती ये कपन थोड़ी देर रहता फिर धीरे धीरे मं शात हो जाती।

शादी स पहले मैं इन के लिए विश्व सुदरी थी। बडी सलीक़ेदार और निपुण। इन का कहना था—तुम्हार आन से पहले तुम्हारी महक मुझ तक पहुँच जाती है। मर उठने-बैठने तैयार होने—हर चीज़ स ये बड प्रभावित थ। मं जा पहनती उस की सराहना इन की आँखां में पढ लती। मुझ स मिलने की उम्मीद में ये सारा दिन टेलीफोन करत रहते थे—और मिलने के बाद बिछड़ने का दर्द इन की आँखों में झलकता रहता था। पर अब

अब मैं इन्हें सुदर नहीं लगती। इन्हें आजकल मुझ में कई नुक्स नज़र आते हैं। मुझ स इन्ह बदबू आती है। इन का कहना है—न मुझे खाना बनाने का ढग आता है न खाने का। मुझ उठना बैठना सँवरना नहीं आता। मं इन के घर में एडजस्ट नहीं करती। इन की सोसायटी के मुताबिक उठती बैठती नहीं। पिछले कुछ महीनां स य मुझ पर रोब डाल रहे हैं कि मैं दूसरी शादी कर लूँगा। इन का कहना है—शरह के मुताबिक मैं चार शादियाँ कर सकता हूँ। मैं साचती हू, ये सिर्फ धमकी है और कुछ नहीं।

कभी कभी साचती हूं कहीं ये सब मर माँ-बाप बहिन भाई का शाप तो नहीं। उन की इजाजत क बगैर मैं न दूसर धर्म मं शादी कर ली।

उस वक्त मुझे मेरे माँ-बाप सहेलियों भाई-बहना न बहुत समझाया था कि तुम हिन्दू सस्कार में पली बनी हुई हो—तुम्हारी जड़ें अपने धर्म में हं उन का धर्म अलग है। उन का खाना पाना पूजा पाठ दिन-त्योहार सब हम से जुदा है—तेरा य फैसला—ये प्यार नहीं तेरी तबाही है।

मैं ने प्यार क नश में किसी की भी बात न मानी। घर स समाज स बग़ावत करके धर्म बदल कर मैं न निकाह कर लिया।

दिन चढ़ने पर मैं घबरा गई। डॉक्टर न कहा—तुम माँ बनने वाली हा

माँ मेरा अग-अंग पुलकित हा गया। जहाँ मुझे अपने वजूद स बदबू आती था वहाँ अब मुझ सुगधि आन लगा। मैं अब उन की बदली हुई नज़र की तरफ देखती भी न था। अपना पूरा वजूद मुझ सपूर्ण लगन लगा। मुझ लगता मैं इस सब स बहुत बड़ा हूँ। अपने गर्भ मं पलत शिशु के कारण मुझे अपन आप स मुहब्बत हान लगी।

ये मुहब्बत मेरी कल की खुशियो का प्रतीक थी—वा कल जा शायद हम दोनों के बीच पुल का काम करेगा। हमें जोड़ दगा। मरी आशाओं और उम्मीदों का कल।

घर का माहौल कुछ शांत-सा लगने लगा। ये शात माहौल आने वाले तूफ़ान की शुरुआत थी। ईशान के पैदा होने के बाद एक दिन मेरे घर पर वकील का नोटिस आ गया। नोटिस इस तरह था

'तुम मरे मुवक्किल के घर पिछले आठ महीने से ग़ैर क़ानूनी तौर पर रह रही हो। मेरे मुवक्किल ने आज से आठ महीने पहल जुलाई की 8 तारीख को *टाइम्स ऑफ़ इंडिया* क सफ़ा नबर 2 पर तुम्हें तलाक़ का नोटिस दिया था। तुम ने मरे मुवक्किल के घर बिना कारण क़ब्जा किया हुआ है। जिस की वजह से वो दिमागी तौर पर हैरान हो रहा है। इसलिए जल्दी से जल्दी उस का घर खाली कर दो। ऐसा नहीं होने पर अदालत का सहारा लिया जाएगा। तलाक़ का वजहें नीचे दी जा रही हैं

1 तुम धर्म नहीं मानतीं नमाज़ नहीं पढ़तीं। इस्लाम को तुम ने क़बूल नहीं किया।

2 तुम ने मरे मुवक्किल के घर का होस्टल समझा।

इस के आगे दो लाइनें मैं पढ़ ही न सकी। मेरी आँखा के आगे अँधेरा छा गया। अपने आप पर क़ाबू न रहा। मैं बिलख बिलख कर रोने लगी। पता नहीं मैं कितनी देर रोती रही। ईशान के रोने की आवाज़ सुन कर मैं होश म आई। वो पालने में अपन छोटे छोटे हाथ व पाँव चलाते चलाते मेरी ओर आना चाह रहा था। उस का मेरी ओर उमगना मरे आँसू पोंछ गया। मैं ने उस पालने से उठा कर अपने कलेजे से लगा लिया। मन को ये दिलासा देते हुए—क्या हुआ जो वो मरा न बन सका य तो मेरा अपना है मेरा खून मरे जिस्म का अंग। किसी को ज़ोर जबर्दस्ती से अपना नहीं बनाया जा सकता। ये साच कर मैं ने अपने आप को सँभाला। जुलाई माह का *टाइम्स ऑफ़ इंडिया* अख़बार देखने के लिए मैं अपने क्लब की लाइब्रेरी में गई। आठ जुलाई का अख़बार निकला। उस मं दो लाइनों में तलाक़ का नाटिस था 'मैं बशीर अहमद वल्द नसीर अहमद नीना को तलाक़ देता हूँ।'

ये लाइनें अख़बार क उस पन्ने पर थीं जिस में मरने वाला की तसवीरें दी जाती हैं।

मैं अख़बार की कतरन और तलाक़ का नोटिस ले कर अपनी उस सहेली के घर गई जो वकील थी। उस न नोटिस पढ़ा और मुझ से सभी अगली पिछली बातें तफ़सील के साथ पूछीं। सभी बातें पूछने के बाद उस ने मुझ समझाया कि बशीर ने सोची समझी स्कीम के मुताबिक तुम स तलाक़ लिया था—उस का वकील बड़ा ही काँइया और सयाना है। उसे मालूम था किसी और वजह से वो तलाक़ नहीं माँग सकता—क्योंकि वो वजहें होती हैं जैसे *पत्नी का पागल होना, काई ख़ास बीमारी होना या फिर चरित्रहीन होना*। इन में स काई भी बात तुम पर लागू नहीं होता थी। कोई भी बात साबित करने में कई पेचीदगियाँ थीं पर धर्म का सहारा ले कर उसे बड़ी आसानी से तलाक़ मिल सकता था।

उस ने जान-बूझ कर राष्ट्रीय अख़बार में नोटिस दिया था ताकि उस पर किसी की नज़र न पड़े। अगर तुम इस नोटिस को छह महीने के अंदर पढ़ लेतीं और पैरवी कर दतीं तब तलाक़ मंजूर न हो सकता था। इस नोटिस का समय पर उत्तर न देने का यही अर्थ है कि तुम ने तलाक़ मजूर कर लिया है। वो तुम्हें पहले भी तलाक़ द सकता था पर उन क धर्म मं गर्भावस्था में तलाक़ मजूर नहीं हाता।

वो मुझ समझा रही थी। आग अब क्या करना चाहिए और ईशान भी तुम्हारे पास सात बरस तक ही रह सकता है। उस क बाद इस पर इस के बाप का हक़ है।

वो मुझे समझाती जा रही थी पर मुझ कुछ भी समझ न आ रहा था। मैं अर्धविक्षिप्त उसे देखे जा रही थी। ईशान का ज़िक्र आने पर मैं अपन आप पर क़ाबू नहीं रख सकी और बिलख बिलख कर रोन लग गई—रोते रोते

मैं सोचने लगी—ये औरत भी क्या है जिस का अपना कुछ नहीं। पैदा होती है तो पिता के साए के नीचे पलती है। ब्याह के बाद पति और बुढ़ापे में पुत्र का साया उस पर रहता है। बेटी का घर न तो माँ-बाप का घर है न पति का घर उस का अपना है—उस का अपना घर कहाँ है—वो कहाँ जाए। जहाँ उसे कोई भी ये न कह सक कि तुम मेरे मुवक्किल के घर ग़ैर-क़ानूनी तरीक़े से रह रही हो। उसे हैरान कर रही हो। पता नहीं कौन हैरान हो रहा है।

ईशान को देख कर उस ने सोचा नारी जो जननी है—माँ है। नौ महीने अपने गर्भ में शिशु को रखने के बाद मातृत्व की पीड़ा सहते समय ख़ुद जीने-मरने के झूले में झूलती हुई शिशु को जन्म दती है। माँ कहला कर गर्व का अनुभव करती है। यही शिशु कल उस के मातृत्व को कलकित करता है।

वैसे कौन पिता पीड़ा से गुजरता है। कब रातों जाग कर शिशु को सूखे में सुला खुद गीले में सोता है। कौन मल मूत्र सँभालता है—फिर भी ये सच है कि सामाजिक परिवेश में पिता कहलाना गर्व का, खानदान की बढ़ोतरी का प्रतीक है। पर माँ तो बलात्कार का शिकार होन वाली स्त्री भी बनती है। बलात्कारी ये भूल जाता है पर जिस वो अपनी हवस म औरत बना जाता है वा माँ बनने पर समाज की ठोकरा का शिकार होती है। माँ बनने और बाप बनने में बहुत अतर है। बलात्कारी पिता बनने पर ये जान भी नहीं पाता वो बाप बन गया है। कुछ पलों का छोटा सा सुख। उस की ये घिनौनी हरकत उसे बाप बना देती है। य चर्म आनद सामाजिक बधन में उन्हं सुख की प्राप्ति का क्षण—खुद तो वो मीठी तृप्त निद्रा म सा जाता है—पर वो स्त्री

वा अपने उस साँझे गौरव और कलक को अपने भीतर अपन अस्तित्व में शामिल करके अपने रक्त मास से उस की सिरजना करती है और उस सृजन को ये क्यो अपना नहीं कह सकती? उसे अपना नाम क्यों नहीं दे सकती? उस का हाल वैस ही है जैस बद मुट्ठी म से कण कण फ़िसलती रेत।

डोगरी से अनुवाद **पद्मा सचदेव**

ये मुहब्बत मेरी कल की खुशियों का प्रतीक थी—वो कल जो शायद हम दोनों के बीच पुल का काम करेगा। हमें जोड़ देगा। मरी आशाओं और उम्मीदों का कल।

घर का माहौल कुछ शात सा लगने लगा। ये शांत माहौल आने वाल तूफ़ान की शुरुआत थी। ईशान के पैदा होने क बाद एक दिन मेरे घर पर वकील का नोटिस आ गया। नोटिस इस तरह था

'तुम मेरे मुवक्किल के घर पिछले आठ महीने से ग़ैर क़ानूनी तौर पर रह रही हो। मेरे मुवक्किल ने आज से आठ महीने पहले जुलाई की 8 तारीख़ का *टाइम्स ऑफ़ इंडिया* के सफ़ा नवर 2 पर तुम्हें तलाक़ का नोटिस दिया था। तुम ने मेर मुवक्किल के घर बिना कारण क़ब्ज़ा किया हुआ है। जिस की वजह से वो दिमाग़ी तौर पर हैरान हो रहा है। इसलिए जल्दी से जल्दी उस का घर ख़ाली कर दो। ऐसा नहीं होने पर अदालत का सहारा लिया जाएगा। तलाक़ की वजहें नीच दी जा रही हैं

1 तुम धर्म नहीं मानतीं नमाज़ नहीं पढ़तीं। इस्लाम को तुम ने क़बूल नहीं किया।

2 तुम ने मर मुवक्किल के घर को होस्टल समझा।

इस के आगे दो लाइनें मैं पढ़ ही न सकी। मरी आखों के आगे अँधेरा छा गया। अपने आप पर क़ाबू न रहा। मैं बिलख बिलख कर रोने लगी। पता नहीं मैं कितनी देर रोती रही। ईशान क रोने की आवाज़ सुन कर मैं होश में आई। वो पालने में अपने छोटे छोटे हाथ व पाँव चलाते चलाते मेरी आर आना चाह रहा था। उस का मरी ओर उमगना मेरे आँसू पाछ गया। मैं ने उस पालने से उठा कर अपने कलेजे से लगा लिया। मन को ये दिलासा देते हुए—क्या हुआ जो वो मेरा न बन सका ये तो मेरा अपना है मेरा ख़ून मेरे जिस्म का अंग। किसी को ज़ोर जबर्दस्ती से अपना नहीं बनाया जा सकता। ये सोच कर मैं ने अपने आप को सँभाला। जुलाई माह का *टाइम्स ऑफ़ इंडिया* अख़बार देखने के लिए मैं अपने क़रीब की लाइब्रेरी में गई। आठ जुलाई का अख़बार निकाला। उस में दो लाइनों में तलाक़ का नोटिस था 'मैं बशीर अहमद वल्द नसीर अहमद नीना को तलाक़ देता हूँ।'

ये लाइनें अख़बार के उस पन्ने पर थीं जिस में मरने वालों की तसवीरें दी जाती हैं।

मैं अख़बार की कतरन और तलाक़ का नोटिस ले कर अपनी उस सहेली क घर गई जो वकील थी। उस ने नोटिस पढ़ा और मुझ से सभी अगली पिछली बातें तफ़सील के साथ पूछीं। सभी बातें पूछने के बाद उस ने मुझे समझाया कि बशीर ने सोची समझी स्कीम के मुताबिक तुम से तलाक़ लिया था—उस का वकील बड़ा ही काँइया और सयाना है। उस मालूम था किसी और वजह से वो तलाक़ नहीं माँग सकता—क्योंकि वो वजहें होती हैं जैसे पत्नी का पागल होना, कोई ख़ास बीमारी होना या फिर चरित्रहीन होना। इन में से कोई भी बात तुम पर लागू नहीं होनी थी। कोई भी बात साबित करने में कई पेचीदगियाँ थीं पर धर्म का सहारा ले कर उसे बड़ी आसानी से तलाक़ मिल सकता था।

उस ने जान-बूझ कर राष्ट्रीय अख़बार में नोटिस दिया था ताकि उस पर किसी की नज़र न पड़े। अगर तुम इस नोटिस को छह महीने के अंदर पढ़ लेतीं और पैरवी कर देतीं तव तलाक़ मजूर न हो सकता था। इस नोटिस का समय पर उत्तर न देने का यही अर्थ है कि तुम ने तलाक़ मजूर कर लिया है। वो तुम्हें पहले भी तलाक़ दे सकता था पर उन के धर्म में गर्भावस्था में तलाक़ मजूर नहीं होता।

वो मुझे समझा रही थी। आगे अब क्या करना चाहिए और ईशान भी तुम्हारे पास सात बरस तक ही रह सकता है। उस के बाद इस पर इस के बाप का हक़ है।

वो मुझे समझाती जा रही थी पर मुझे कुछ भी समझ न आ रहा था। मैं अर्धविक्षिप्त उसे देखे जा रही थी। ईशान का ज़िक्र आने पर मैं अपने आप पर क़ाबू नहीं रख सकी और बिलख बिलख कर रोने लग गई—रोते-रोते

मैं सोचने लगी—ये औरत भी क्या है जिस का अपना कुछ नहीं। पैदा होती है तो पिता के साए के नीचे पलती है। ब्याह के बाद पति और बुढापे में पुत्र का साया उस पर रहता है। बेटी का घर न तो माँ-बाप का घर है, न पति का घर उस का अपना है—उस का अपना घर कहाँ है—वो कहाँ जाए। जहाँ उसे कोई भी ये न कह सके कि तुम मेरे मुवक्किल के घर ग़ैर-क़ानूनी तरीक़े से रह रही हो। उसे हैरान कर रही हो। पता नहीं कौन हैरान हो रहा है।

ईशान को देख कर उस ने सोचा नारी जो जननी है—माँ है। नौ महीने अपने गर्भ में शिशु को रखने के बाद मातृत्व की पीडा सहते समय खुद जाने मरने के झूले में झूलती हुई शिशु को जन्म देती है। माँ कहला कर गर्व का अनुभव करती है। यही शिशु कल उस के मातृत्व को कलंकित करता है।

वैसे कौन पिता पीड़ा से गुज़रता है। कब राता जाग कर शिशु को सूखे में सुला खुद गीले में सोता है। कौन मल मूत्र सँभालता है—फिर भी ये सच है कि सामाजिक परिवेश में पिता कहलाना गर्व का, ख़ानदान की बढ़ोतरी का प्रतीक है। पर माँ तो बलात्कार का शिकार होने वाली स्त्री भी बनती है। बलात्कारी ये भूल जाता है पर जिसे वो अपनी हवस में औरत बना जाता है वो माँ बनने पर समाज की ठोकरों का शिकार होती है। माँ बनने और बाप बनने में बहुत अंतर है। बलात्कारी पिता बनने पर ये जान भी नहीं पाता वो बाप बन गया है। कुछ पलों का छोटा सा सुख। उस की ये घिनौनी हरकत उसे बाप बना देती है। ये चर्म आनंद सामाजिक बंधन में उन्हें सुख की प्राप्ति का क्षण—खुद तो वो मीठी तृप्त निद्रा में सो जाता है—पर वो स्त्री

वो अपने उस साँझे गौरव और कलंक को अपने भीतर अपने अस्तित्व में शामिल करके अपने रक्त मांस में उस की सिरजना करती है और उस सृजन को ये क्यों अपना नहीं कह सकती? उसे अपना नाम क्यों नहीं दे सकती? उस का हाल वैसे ही है जैसे बंद मुट्ठी में से कण कण फ़िसलती रेत।

डोगरी से अनुवाद पद्मा सचदेव

रत्न केसर रियासवी

कलियुग में सतयुग के नजारे

कहते हैं लँगडा बैल और नौ सौ अवगुण डागरी की ये कहावत बनी भी तो एक बैल पर। व
और चौपाए, दोपाए, चारपाए, परिन्दे वग़ैरा भी थे। पर मनुष्य ने कहावत बनानी थी इसलि
का अवगुणा स दूर रखा और बेचारे बैल की शामत आ गई। सच पूछो ता चराचर में जीने वाले
ही सब से ज्यादा लँगड़ा टेढ़ा, काना कुब्डा होता है। पर नाम बेचारे बैल का बदनाम किया जा

कहते हैं बैल स्वर्ग में भी जाए तो भी उसे खाने को भूसी और खल ही मिलती है। यहाँ भा क
उस ही चुना गया। मनुष्य अपने ऊपर भी बड़ी आसानी से य कहावत लागू कर सकता था जैस इ
स्वर्ग गया उस वहाँ भी सिर्फ़ गुस्ताने' सीधी बात ये है कि मनुष्य और जानवर को इस लोक में जा
ह उसी की कामना वो उस लोक में करता है।अगर स्वर्ग में बैल को केक पेस्ट्री विस्कुट या गुस्ताब।
तो उस का पेट ऐसा चल निकले जिस की दवा कहीं भी न मिले। रहा इलाज़ सो देवताओं के वैद्य
भी कुछ न कर सकें।

इसलिए अगर बैल का स्वर्ग में खाने को भूसी और खल भरपूर मिल जाए तो उस क चारा खुर
पर बैल तो आख़िर बैल ही हुआ न इसलिए अपने इलाक़े के मुताबिक़ किसा न एक और कहावत व
'लँगड़ा बैल अठारह राग' यहाँ अवगुणा की मात्रा थाडी कम हुई पर बैल का अपनी पूँछ से हाथ ध
मनुष्य? तुम्हारी तो वाह भई वाह तुम सपूर्ण अगों के होते हुए भी अवगुणों की खान हा। पर हमेशा अ
मिट्ठू बनने की कोशिश में। मेरी तरह आप भी मनुष्य हैं इसलिए कहा-सुना माफ़ करना। आप साच
बिना फ़ीस के इस बैल का वकालत कहाँ ले बैठा। सो बात यूँ है

आज स कोई 5134 वरस महले (युधिष्ठिर सवत्सर के मुताबिक) राजा परीक्षित हुए हैं। एक बार
गए तो जगल में उन्हें एक गाय और उस का बछड़ा दिखाई दिए। ये बछड़ा सिर्फ़ लँगड़ा न था उस
जख़्मी थ। राजा ने गाय से उस बछड़े की दुर्दशा के बारे में पूछा तो गाय न विलाप करते हुए कहा
है और उस का बटा ये बछड़ा धर्म है। हम दानों इस उजाड़ बियावान में खड़े हैं सत्यम दया तपा दानम
विमोर्णृप (*श्रीमद्भागवत*)

ह राजा सत्य दया तप और दान इस बछड के चार पैर हैं। सतयुग में ये चारों सलामत व स्वस्थ
में सत्य ख़त्म हो गया और तीन स्वस्थ रहे। द्वापर में दया ख़त्म हुई ता दा रह गए (तप व दान) और
सिर्फ़ दान रहा पर ठाक कहूँ तो पूर्णतया स्वस्थ वा भी नहीं है। उस में भी कई दिखावे और आडवर

राजा का प्रण है कि वो अपने राज्यकाल में कम स कम कलियुग का प्रवेश न हाने दगा इसलिए य
बात सुनत ही राजा ने चौकन्ना हो कर गाय स पूछा तो गाय न उत्तर दिया कि इस बैल की दुर्दशा उसी
की है। ये सुनते ही राजा क्रोध में धनुष-बाण चढ़ा कर कलियुग का ढूँढ़न निकला। जस ही कलियुग
रूप में उस क सामन आया और इस स पहले कि राजा उस का वध करता कलियुग न हाथ जा

की व्याख्या की और राजा से जीवन माँग लिया। साथ ही उस के राज्य में रहन का अनुमति भी ल ली। राजा ने उसे सिर्फ चार वस्तुआ में रहने की आज्ञा दी। जिन में सोना मुख्य था। अनुमति मिलते ही कलियुग का राजा के मुकुट से मस्तिष्क में प्रवेश करने के लिए कितना समय चाहिए था। ता यूँ कलियुग का पदार्पण हुआ। जैसे 'आ बैल मर गले लग छोडिए भी हम ने क्या लेना देना है। युगा की अवधि गिन कर या उन की तरतीब ढूँढ कर। मनु ने एक स्थान पर कहा है कृत त्रेता युगा चैव द्वापर कलिरे व च राज्ञो वृत्तानि सर्वाणि राजा हि युग मुच्यते।

इस श्लोक के अनुसार राजा स्वय ही युग निर्माता है। वो चाह तो युग बदल सकता है। इस तरह वो कलियुग में सतयुग ला सकता है। प्रजा तो हमेशा राजा का अनुसरण ही करती है। 'यथा राजा तथा प्रजा त्रेतायुग में सतयुग का थोडा आभास तो होता था। कभी अमानत में खयानत नहीं होती थी। अगर खयानत होती ता भला ऋष्यमूक पर्वत पर राजा सुग्रीव श्री रामचद्र को सीता के गहनों की पोटली भला क्यों सौंपते। एक आध सैम्पल के तौर पर निकालना तो दरकिनार उन्होने कभी पोटली खोल कर भी न देखी थी। वो राम के युग का चरित्र था। पर आजकल तो 'पाई चीज़ खुदा की न धेले की न पाव की।

जैसे सर्दी की शुरुआत में भी गर्मी की थोडी सी खुनकी बाक़ी रह जाती है—वैसे ही शायद त्रेतायुग में सतयुग का थोडा झाग बाक़ी रह गया होगा। आने वाले युगों में भी कहीं-कहीं दिखाई देता रहा। वो श्वेत व उज्ज्वल झाग कभी-कभी जब इस कलियुगी कालिख को छूता है तो अपने सफद दागों का निशान छोड़ कर अपने आने का आभास कराता है। वो चूँकि कहते हैं आज से कोई 150 बरस पहले एक राहगीर की छतरी रियासी की वज़ीरों वाली बावडी पर रह गई। एक ब्राह्मण वहाँ रोज़ ही नहाने के लिए आता था—वो दो चार दिन वहाँ छतरी दखता रहा। आखिर एक दिन वो उसे उठा कर थाने में जमा करवा आया। थानेदार ने छतरी जमा करके उस समय के क़ानून के मुताबिक उस ब्राह्मण का दायाँ हाथ काट देन का हुक्म दिया। क्योंकि क़ानून के मुताबिक किसी की चीज़ उठाना तो दरकिनार कोई उसे छू भी न सकता था। ऐसा करने वाले को दड भुगतना पड़ता था। कहते हैं जिस आम के वृक्ष के पास उस का हाथ काटा गया था कुछ देर बाद वो दरख्त सूख गया। उस समय के उस आम क वृक्ष को वो न्याय रास नहीं आया। इसलिए उस ने उस लहू का अपनी जड़ा में स्वीकार नहीं किया।

वाह आमजी हुक्म किसी ने सादर किया—हाथ किसी का काटा गया और बजाए इस के कि आप लहू का रग ले कर सिन्दूरी आम देते आप न दूसरों का प्रायश्चित करते हुए अपने आप को सुखा डाला। कलयुग में सतयुग क वृक्ष एसे हाते थे। पर आजकल तो ये कहा जाता है कि अंगूर की बलों की जडां का अगर बकरे या मुर्गे का ताजा खून पिलाओ तो बेल जल्दी जवान होती है। क्यों न हो जवान कलयुग की वेल जो ठहरी। अब तो हर किसी को पूरी छूट है कि बडे से बडा अपराध कर ले कलयुग खुद उस धन क रूप में (सोने के बिस्किट नोट) आग बन कर छुडा लेगा। अतरराष्ट्रीय स्कैंडल करा ज्यादा से ज्यादा आप के ऊपर आयोग बिठा दिया जाएगा। वो भी शायद कुछ रिटायर, कुछ थके हुए बूढ थुलथुल अहलकारों को फिर स कामकाज शुरु करन के लिए ही न। न ही उन की कमेटी अपना फ़ैसला अपन जीवनकाल में दना चाहेगी न उन के जीवनकाल में। आखिर जीवन-यापन भी ता कोई चाज है। जनता का खुश्क दिमाग़ आखिर कितन स्कैंडलों को कितन आयोगों को कितनी देर सँभाल कर रखेगा। यादों के ये अम्बर समय के चलत चरखे में पूनियों की तरह ख़त्म हात रहत हैं। चरखा चलता रहता है कातने वाले बदलते रहत हैं और ऐस ही पनपती हैं धर्म क इन आँगना की कई नस्लें। मालिक अपने-अपने आँगन का खुब पोषण करता है। आँगन जनता क हों या सरकार क। पूर्वी आँगन आँगन। हर कोई अपने आँगन क सींगों का साने के गहनों क साथ सजाना चाहता है। आपस में सींगों क।

करने के मौक़ की तलाश में रहता ह। फिर 'बैलो का युद्ध और जगल का सत्यानाश। बैल चाहे थक जाएँ, क्या मजाल है जो तमाशबीनो का मन उकता जाए। इस तरह 'राजा ही युग मुच्यत का क्या अर्थ रह जाता है। पब्लिक (जिम के पाछ नेता लागा का हाथ हो) मुच्यत का शुद्ध व साधारण सहज अर्थ मोंछना लगा लती है। अगर आप को विश्वास नहीं हाता तो सुनिए।

हमार एक परिचित की पहच मरकार स ले कर आसमान में टाँकी लगा लाने तक थी। उस न शहर के वडे वाज़ार में रेडीमेड गारमेंट्स की अपना तीसरी दुकान खालत समय अपना पहली दुकान का माल बूट सैंडिल 50 स 60 प्रतिशत घाट पर वचने का बार्ड लगाया तो मैं ने उसे पूछा, भाईजा ये जूते आप को घर में कितन के पड़ते हैं जो आप इन्हें नीलाम कर रहे है। य ता सरासर घाटा है। वा कहने लगा मैं न जिस भाव ये जूते आप क सिर मढ़ने थ मढ़ चुका हूँ। अब ता य जूत मुफ्त के ही हैं।

क्या य आजकल के राजा लोग जनता को मूँड नहीं रहे? जिन्हें आज जूते मुफ्त पड़ रहे हैं दो दशक पहले स इन क वुजुर्ग इन्हे वेचत आए हं। खैर आप व्याकुल होंग कि कलयुग में सतयुग के नजारे कहाँ हैं। ज़रा हम भी दखें।

पिछले दिना मैं जव शहर आया ता सामान गठरियाँ वाल-वच्चे सड़क पार करवात मरी जान निकल गई। अफ़रातफ़री में घर के लिए मैटाडोर में बैठा ता गोद का वालक तो घर पहुँच गया पर हाथ का ब्रीफकेस कहीं वस स्टंड पर ही भूल आया। शाम का जब उस की ढुँढ़ाई शुरू हुई तो याद आया ब्रीफ़केस में कुछ सरकारी कागज़ इतने ज़रूरी थे कि मेरी नौकरी पर भा वन आ सकती थी। मैं ने कुछ देर के लिए पत्नी (अपनी) से अक्ल उधार माँगी और हाथों के तोते उड़ाने के वजाए और पैरों के नीच से ज़मीन खिसकने के पहले उस का सदुपयोग करते हुए म सीधा वस स्टंड की तरफ़ दौडा शायद किसी क्लीनर ने सँभाल कर रखा हो। मैं अड्डे तक पहुँच तो गया पर भीतर घुसने में मुसीवत वन आई। मरा रास्ता बाहर के चौराहे स ही भीतर तक जाता था और चौराह पर लागों की इतनी भीड़ थी कि सरसों क दाना की तरह लोगों क सिर दिखाई द रहे थे (पुराना मुहावरा है कि जव लाग पगड़ियाँ वाँधते थे ता वो सरसों क कुछ दान पगड़ी की सलवटों में कुछ ठन की तहों में अटका लेते थे।) आजकल उस का जरूरत नहीं होता। सरसो भाड़ के नगे सिरा से गिरती दिखाई देती है।

भीड़ ही भीड़ और उस के आग पुलिस का घेरा। ट्रैफिक के रूट वदल दिए गए थे। चारों तरफ़ सीटियाँ वज रही थीं। धक्के पर धक्का पड़ रहा था। अगर कोई आगे वढ़ता तो ख़ाकी वर्दी वाल सिपाही का डंडा उस पर वरसता। पर मैं न तो ये वैतरणी पार करनी ही था वा भी गाय की पूँछ पकड़ कर नहीं वल्कि पूरा जोख़िम उठा कर। वचपन में मैं ने रियासी क़स्वे के वड़ तालाव में गुम हो कर तैरना सीखा था। (माफ़ कीजिए आज उस तालाव क आसार क़दीमाँ भी मिटने पर आ गए हैं) सरकार ने उसे मिट्टी से भरवा कर उस पर वाग़ वनाने का आश्वासन दिया था। नतीजा ये हुआ कि 'कश्ती भी गई हाथ से पतवार भी छूटा।

मैं पब्लिक क आँचल में अपनी गर्दन घुमा कर दूसरी तरफ़ जा निकला। जब साँस फिरा ता सिपाहियों ने डंडों स मरम्मत कर दी। मैं ने सब चाटें अपने हाथों पर सहीं। इस का अभ्यास मुझे स्कूल म ही हा गया था। सा आज काम आया। मैं न मास्टर मे कभी मुह पर थप्पड़ नहीं खाया था। ऐसा कोहनियों में मुँह छुपाता मास्टर थप्पड़ मारत-मारत थक जाता उस मरा मुँह न दिखाई देता। मुझे पता था मुँह दिखाई सिर्फ सिर्फ थप्पड़ों स मिलती है। सिपाहा की कच्ची पीली छड़ा क उम्रायी ठप्पे मै न हाथों में मले और फिर सिपाही का हवलदारजी कह कर पूछा 'माजरा क्या ह? क्या कोई वड़ा नेता यहाँ से गुज़रन वाला है जिस क दर्शनों को ये पब्लिक व्याकुल है। किस की प्रतीक्षा है। मेर सवालों का सर्तीयवार उत्तर दन के लिए उस ने पहला हाथ मरी गर्दन पर डाला और उसे थोड़ा

मरोड़ कर बाला, अगर तुम्हारी आँखें फूट नहीं गई हों तो सामने पैरामिट पर प्रतीक्षारत साक्षात मौत को देखा पता नहीं किस की किस की मौत लिखी है। हम ने तो अपनी जान तली से उठा कर गले में फाँस ली है पर ये पागल पब्लिक पता नहीं, कब्र की मानी हुई मन्नतें देने आई है। हटती ही नहीं और अगर समय से पहले बब नाकारा करने वाला दस्ता न पहुँचा तो पता नहीं किस किस की जान जाएगी।

किसी की जान जाए या रहे पर मेरी जान में जान आ गई थी। सामने पैरामिट पर मेरा प्यारा बिन्दिया वाला उधड़ी सीवन वाला ब्रीफ़केस पड़ा हुआ था। जिस में मेरी और उस म मरी तीस बरस से फाँकी धूल का हिसाब किताब था। अपनी उसी मुद्रा म अर्जुन की तरह नजर सामन रखते हुए, पीठ पीछ से हाथ बढा कर सिपाहीजी को ढूँढ़ा और फिर घिग्गी बँधे सारी बात उन्हें समझाई। काफ़ी अडगा पगों से निकल कर थान जा कर तौबा की। रात ढलते ही ब्रीफ़केस तो मुझे मिल गया पर वापस घर जा कर मैं चारपाई पर धड़ाम से गिर कर सोचता रहा कि य कौन-सा युग है। किसी की राह में पडी चीज़ उठाना तो दूर आँख भर कर देखना या छूना भा गुनाह हो गया है। तभी तो आज 8 घटे से पैरामिट पर पड़ा मेरा ब्रीफकेस पब्लिक पुलिस का मज़ाक उड़ाता रहा और लोग उसे दख कर भी अनदेखा करत रहे। ये अचभा नहीं तो और क्या है। अब बताइए कलियुग म सतयुग का नजारा है या नहीं! जय आतकवाद उपलब्धियों की।

डोगरी स अनुवाद पद्मा सचदेव

चपा शर्मा

बुआ फच्चॉ (हमारी दीदी)

बुआ फच्चॉ लखिका के पिताजी की नानी थी। सन् 1964 में उस का स्वर्गवास हा गया। कार्तिक मास की एकादशी क दिन वेव परमेसरी की एकमात्र सतान बुआ फच्चाँ का जन्म हुआ था। उस का वास्तविक नाम 'रबोधनू था जो प्रबोधिनी (एकादशी) का विकृत रूप प्रतीत होता है। पर सावा नगर की गढ़ ठलार सुगाली आदि मडिओं (स्थानों) में सभी उस बुआ फच्चाँ ही कह कर पुकारते थे।

डुग्गर प्रदेश में यह विश्वास परपरा से चला आ रहा है कि सुदर नामधारी बालक-बालिका किसी की बुरी नजर का शिकार हो जात हैं। यही कारण है कि कई कृष्ण एव कृष्णा नाम क्रमश किच्छू एव किच्छो रूप धारण कर चुक हैं। पुष्पा का पुच्छो तथा धनवती का धन्नो नाम भा इसी अंधविश्वास क फलस्वरूप बना है। इसा प्रकार फकीरचद का फकोरू मसार चद का ससारू एव अन्य कई जन फिड्डु, भुक्खू फग्गु (फाल्गुन में जन्मा) देरू रुलदू मग्गू आदि नाम धारण करत रहे हैं। 'रबोधनू का भी 'बुआ फच्चाँ' नाम इसी कारण मिला होगा ताकि इकलौती सतान को किसी की कुदृष्टि न लग जाए।

'फत्तो' की भाँति 'फच्चाँ' नाम भी यूँ तो किसी सीधी सादी सरल बहन-बेटी का रखा जाता है पर बुआ फच्चाँ में तो एसी काई बात न थी। अच्छ-ख़ासे ऊँचे क़द की थी वा। डुग्गर के कढी इलाक़े (पानी की कमी वाला इलाका) की महिलाओं की तरह गठीला शरीर, तीखे तीखे नैन-नक्श वाली बुआ फच्चाँ का सदा सूफ़ियाना पोशाक पहने लखिका ने देखा है। सभवत बुआ को बचपन स ही उस की विधवा माँ न इज्जत ढाँप रखने क कारणवश सदा सीधी सादी बने रहने की आदत सा डाल रखी होगी।

पिता का देहावसान हुए अभी चार मास ही हुए थ जब बुआ फच्चाँ ने कढ के एक गाव 'रयौर में जन्म लिया था। ननिहाल वाले उस अनाथ बच्चा 'फच्चाँ' एव उस की माँ परमेसरी को गढ़मडी (सावा की बाईस मडिया म से एक) ल आए थे जहाँ दोनों माँ-बेटी जीवन भर रहीं और यहीं मर-खप गईं। बुआ फच्चाँ क कथनानुसार उस की माँ परमसरी का देहात उसी वर्ष हुआ था जब भूचाल स क्वेटा (वर्तमान पाकिस्तान म) बरबाद हुआ था। गढ़मडी क राजपूतों ने जो आदर मान बेबे परमसरी को दिया वैसा ही मान-सम्मान सदा बुआ फच्चाँ का उन म मिलता रहा। फच्चाँ वहीं ता पली जवान हुई थी। वहीं से उस का डोला उठा था आर विवाह-सूत्र में बँध कर वह 'रतनपुर सपडा गाँव म बडियाल ब्राह्मण परिवार में पहुँची थी—जहाँ स जल्दी हा वह एक बार फिर गढ़मंडी आ पहुँची उस का पति जो चल बसा था। गढ़मडिए, ठलोरिए एव सुगालिए राजपूत ही उस क सपर्क में थे व हा उस की परवरिश करते रह।

प्राचीन डोगरों का यह दुर्भाग्य था कि व अनपढ़ थे। घर आँगन छोड़छाड़ कर रोज़ी रोटी क लिए पड़ोस क स्थानों विशेषतया पजाब में जा कर महनत मजदूरी करते और व इसाफ़ एव अत्याचार क शिकार बनत थ। बुआ फच्चाँ का पति भी कराची म किसी सेठ की थोक-कपडे की दुकान पर काम करने गया था। जो कुछ वतन में मिलता उस सेठ क ही पास जमा करवा देता ताकि घर लौटत समय संचित रकम घर ल जा सक। पर विधि न

कुछ और ही सोच रखा था। सेठ ने जब धन लौटाने से कोरा जवाब दे दिया तो बुआ फच्चाँ पर वज्रपात हो गया। उस का सिर नगा हो गया। नाक से लौंग (डोगरी 'तीला') उतर गई। उस के घर वाले न क्रोध से आवेश में आ कर सेठ की तीन-मंज़िली हवेली से कूद कर प्राण दे दिए। दुखद समाचार (डोगरी 'सनौनी') जब पहुँचा तब बुआ फच्चाँ की गोद में तीन माह की सरसुती (लेखिका की दादी) खेल रही थी। बुआ फच्चाँ विवाह के बाद भी 'रबोधनू' न बन सकी।

बुआ फच्चाँ ने अपनी माँ परमेसरी की छत्तर-छाया में सरसुती का पालन पोषण किया और फिर हल्की उमर में ही उस का विवाह 'डघाड' निवासी पंडित आशानंद के साथ कर दिया। पर वह भी अपने दो बेटे—बड़ा लगभग दो बरस का और छोटा छह महीने का—बुआ फच्चाँ के लिए छोड़ कर चलता बना। कहते हैं जिन के भाग में दुख ही दुख हो, वह कैसे सुखी रह सकता है! बुआ फच्चाँ अब उन की देखभाल में जुट गई। पति के साथ उस की निरक्षरता के कारण हुई बेइंसाफी ने अब बुआ फच्चाँ को चौकन्ना कर दिया था। उस की आँखें खुल चुकी थीं। उस ने अपने दोनों नवासा दवान (दीवान चंद) और तारा (ताराचंद) को गवर्नमेंट हाई स्कूल साम्बा में प्रवेश दिलवा दिया। पंडित आशानंद ने भी कोई आपत्ति न की, क्योंकि वे भुक्तभोगी थे और इस बात का उन को अनुभव था कि वाणिज्य-व्यापार में उन्होंने भी कोई आराम की घड़ी नहीं देखी थी। फलत दसवीं कक्षा पास कर लेने पर बुआ ने दोनों नवासों के विवाह पंडित आशानंद की सलाह से संपन्न परिवारों में कर दिए। पर स्वयं वह अपने सिदक पर ही चलती रही। 'रबोधनू' बनने का उसे कोई चाव न था। संभवत उस का यह चाव गढ़मंडी से कोस भर की दूरी वाली बावली और या फिर 'ठलारे' के 'दताआल' (तालाब का नाम) से पानी ढोते-ढोते ढकियों में ही कहीं दम तोड़ चुका था या फिर पाषाण रूप धारण करके ढकी में ही कहीं फिट हो गया था। यद्यपि अब परमेसरी का साया भी सिर से उठ चुका था तो भी बुआ फच्चाँ सब को देने योग्य थी। उस ने स्वयं किसी के आगे कभी हाथ न फैलाया था। उस पर यह कहावत पूरी उतरती प्रतीत होती है ससुराल में भूखी मैके में प्यासी मन की तृष्णा कौन चुकाए।

वस्तुत बुआ फच्चाँ की तृष्णा अंकुरित ही नहीं हुई। वह तो एक ठंडी रूह थी। शीतल-आत्मा थी। गढ़मंडी वालों ने अब परमेसरी के साथ किए हुए वायदे को बखूबी निभाया। बुआ फच्चाँ ने उन के घरों से खाया-पिया अच्छा-खासा पहना (मृतकों की) बरसियाँ चौ-बरसियाँ संपन्न कीं एवं एकादशी आदि के उद्यापन किए।

गढ़मंडिया के लिए भी बुआ पच-सरपच थी। गढ़मंडी शुरू होते ही पहला घर बुआ का पड़ता था। उस के बाद सरकारी स्कूल फिर डग्गा (बरगद के पेड़ तले विश्राम का स्थान) और फिर फरलाँग भर के फासले पर कर्नल जैलदार और लैफ्टिनेंटों के पक्के चौबारे थे। बीच में कहीं कच्चे घर-कोठे भी थे। फौज में सिर उठा कर एवं छाती तान के चलने वाले गढ़मंडी के फौजी-ऑफिसर बुआ फच्चाँ के सामने झुक कर चलते थे। क्या मजाल कि कोई बुआ को आवाज लगाए बिना उस के घर के पास से निकल जाता। फट्टक्-से अंदर से स्नेहभरी पर रौबीली आवाज़ न आ जाती 'मखा कु न ऐ वै लंघ करदा? (अब कौन जा रहा है?) झट से उत्तर मिलता 'मैं हूँ बुआ सुरमू जलन्धर'। 'मखा' बुआ का तकिया कलाम था।

सुरमू सूता जिन्दा सिंह जौना फलतो लब्भू सभी राजपूत नौजवान जब विवाह करके लौटे थे तो 'लुआह' (वधू-वर का कुछ समय के लिए प्रथानुसार रुकना) बुआ फच्चाँ के यहाँ ही हुआ था। बुआ फच्चाँ आटे में गुड़ डाल कर चार मीठी मठ्ठियाँ पका कर, ठूठा (सूखे नारियल का आधा भाग) में छाट-चनारा डाल कर दुल्हन को सगुन दे कर विदा करती थी। एक बार ऐसा हुआ कि वर-वधू का अभी जूठन-संस्कार (एक ही बर्तन में मिष्ठान्न रख कर दोनों को चखने को देना) भी संपन्न नहीं हुआ था कि जम्मू से महाराजा हरि सिंह का संदेशा आ पहुँचा कि मियाँ रसाल सिंह तुरंत जम्मू पहुँच जाएँ। रसाल सिंह भी सेहरा और तलवार बुआ फच्चाँ के पास छोड़ कर उसी

क्षण जम्मू के लिए रवाना हो गया। वस्तुत रसाल सिंह पोलो खेलने में माहिर था और महाराजा हरि सिंह ने पोलो खेलने का आयोजन कर रखा था। सात दिनों के पश्चात जब रसाल सिंह गढ़मंडी लौटा तो उसे ढक्की चढ़ते देख उस की नवविवाहिता भावुकता वश ऊँचे स्वर में कहने लगी 'बुआ, वो देखो वो आ गए।' बुआ फच्चाँ 'पुआधर' कहलाने वाले प्रदेश से ब्याही आई उस दुल्हन को डाँटती हुई कहने लगी 'वो कौन आ पहुँचे? तुम कब से जानती थीं रसाल को? मायके से यही सीख कर आई हो?' दुल्हन की जिह्वा को मानो ताला लग गया।

समय कितना बदल चुका है। आज की बहू-बेटियाँ सास माँ की कही नहीं सहतीं—तभी तो हँसते खेलते खाते पीते परिवार दिन प्रतिदिन सिकुड़ते जा रहे हैं। पर आज से आधी सदी पहले के समय की ही तो बात है जब बहू-बेटियाँ बुआ फच्चाँ जैसी साध्वी स्त्रियों के सामने कुछ कहते झिझकती थीं। बुआ फच्चाँ की डाँट डपट में यूँ भी तो कोई स्वार्थ निहित न होता था और न ही डाँट खाने वाली उसे पराया जानती थी। इन के लिए बुआ प्राण तक देने को भी तो तैयार होती थी। बड़ी-बुजुर्ग 'सुआनियाँ' (राजपूत स्त्रियाँ) भी बुआ से पूछ पूछ कर चलती थीं। घर परिवार में जब भी कोई बात झगड़े का रूप धारण करने लगती तो झट से बुआ को बुला लिया जाता। वह भी संदेश मिलते ही 'सुत्थन' (चूड़ीदार डोगरी पायजामा) पर खुले घेर वाला घाघरा पहन कर ऊपर से पटा दुपट्टा ओढ़ कर पहुँच जाती और घर की लड़ाई घर तक ही सीमित रह कर मिट जाती। मियाँ शुनकू की सुआनी ने जब आप जने बेटे पर चिढ़ कर सौत के पुत्र को इस तरह से चिमटा मारा था कि वह जंघा को चीरता हुआ आर पार हो गया था तो मियाँ शुनकू रहा जम्मू में ही बुआ फच्चाँ ने उस शरीफ़ज़ादी को अलग करने के बाद ही मियाँ शुनकू को उस घटना के बारे में सूचित किया और अस्पताल भेज कर लड़के की जंघा से चिमटा निकलवाया था। तब बुआ ने सौगंध खा कर एलान किया था कि जब तक मियाँ शुनकू जम्मू से वापिस नहीं आता वह चंचला की स्वर्गवासी सौत के दोनों बेटों को अपने घर से खाना खिलाएगी।

मियाँ जीतो को भी नई वधू का गृह प्रवेश 'माड़' (स्थान) वाले रास्ते से करना पड़ा था। उस नेपालन वधू ने अपने पिता के स्थान पर सात दिन के लिए राज्यशासन चलाया हुआ था। दहेज में भी उस के पिता ने बहुत कुछ दिया था। साथ के बस अड्डे से उसे पालकी में बैठा लाने के लिए बस अड्डे जाते हुए कहारों को देख कर बुआ फच्चाँ बोल पड़ी थी 'भखा वै केह् गल्लै ए? एह् कोई चबात ए गै व्होइए आवे करदी अग्गै नेईं हिया गै वड्डे घरें शा व्होइए आई दिया?' (भाई क्या बात है? यह कोई खास वधू आ रही है? क्या पहले बड़े घरों की बेटियाँ बहुएँ बन कर यहाँ नहीं आई हैं?)' क्या मजाल थी कि घर के लोग बुआ के रोकने पर कहारों को आगे बढ़ने को कहते।

बुआ फच्चाँ को राजपूतों द्वारा बेटियों को पैदा होते ही जीवित दबा देने की कुप्रथा बहुत सालती थी। पर इस मामले में वह विवश थी। उस का कुछ वश नहीं चलता था। यहां बुआ को कामयाबी केवल वहीं मिलती थी जहाँ नवजात बेटी की माँ भी कन्या को जीवित रखने का हठ कर लेती थी। शिशु जन्म से पूर्व ही घर के पिछली ओर पड़ने वाली जगह जिसे डोगरी में 'पचवाड़' कहा जाता है—गर्त खुदवा लिया जाता था। यदि बालक जन्म लेता तो उस गर्त में गुड़ बताशे एवं मौली आदि वस्तुएँ रख कर ऊपर मिट्टी डाल दी जाती थी और अगर बेटी जन्मती तो उस गर्त में रख कर ऊपर मिट्टी डाल दी जाती थी। तदुपरान्त लगातार पाँच दिन तक बेटी की माँ स्वयं उस स्थान (पत्थर) को पैर से दबाती थी। बुआ फच्चाँ ने हुकमी सुआनी के पति को तार भिजवा कर बुलवा लिया था जिस ने दबा दी गई बेटी को जन्म के चौथे दिन जा कर निकाल लिया था। हुकमी ने बुआ फच्चाँ को इस मामले में पहले से ही विश्वास में ले लिया था। 'दच्चो' नाम वाली वह राजपूत महिला आज भरे पूरे परिवार वाली है। बेटियों की दयनीय दशा देने की पृष्ठभूमि में जमवाल, सम्बयाल आदि उच्च वर्ग के राजपूतों का चाड़क, भाऊ आदि राजपूतों के साथ विवाह-संबंध न रखने की परंपरा प्रमुख कारण थी। फलतः बेटियों के लिए बराबरी के संबंध न मिलने

की बहुत बड़ी कठिनाई थी अथवा राजपूतों की किसी के सामने न झुकने की प्रवृत्ति भी एक कारण रही होगी। बुआ फच्चाँ का राजपूतों की यही एक आदत बहुत बुरी लगती थी नहीं तो वह उन की सौगंध तक न खाती थी।

स्वय बासी तक खाने वाली बुआ फच्चाँ नवासों के बच्चों को जब व छुट्टियों में कुछ दिनों के लिए गढ़मडी आते थे ताज़ा पकवान बना-बना कर परोसती थी।

उस के सेवाकारी हाथों से बना खाना खाने में अनूठा मज़ा आता था—गंगा-जमुनी दाल (उडद एव चने की बराबर मात्रा में मिलाई गई) जिस कडछी में घी तेल डाल कर सूखी लाल मिर्च जला कर जब वह छौंकती थी। चावल-दहा की कढ़ी (डोगरी 'म्हेरी'), रौंग की फलियों में आलू-बड़ियों की तरकारी में जो स्वाद होता था वह आज के बडे-बड़े होटलों में पकने वाले भाँति भाँति के देशी विदेशी खानों में भी कहाँ मिलता होगा? सेब अनार, अंगूर, कले-सतरे खिलाने का सामर्थ्य तो बुआ फच्चाँ में नहीं था पर बेर कूट कर बनाए गए पापड (डोगरी 'चूनी') गुणे ख़स्ते चरेलियाँ जन्माष्टमी के दिन बनाई गई सुढ-पनीरी मीठे बबरू (भठोरे) सुखा कर बुआ की ओर से नवासों के बच्चों को भेजी जाने वाली सौगातें होती थीं।

बुआ फच्चाँ मनुष्य सेवा में विश्वास रखती थी। बिशन बिशन करते अर्थात् हरि हरि जपते हम ने उसे कभी न देखा था। व्रतों में एकादशी का ही व्रत उस ने सदा रखा और उसी का उद्यापन किया था। कृष्ण जन्माष्टमी का भी उस का निराहार एव निर्जल व्रत होता था। जब तक जघाओं में बल रहा बुआ शिव चतुर्दशी एव शिवरात्रि को म्हेसर मंदिर (स्थानीय महेश्वर मंदिर) बिल्वपत्र चढ़ाने जाती रही। शिव भगत वह पूरी तरह से थी। न जाने कितने जन्मों से वह जटाशंकर शिव भोले की आराधना करती आई होगी तभी तो बिच्छुओं साँपों-नागों से वह कदाचित भय न खाती थी। किटकिटाती 'ब्रकड' (कठी प्रदेश की एक जगली वनस्पति) तपतपाता थोहरों (एक क़िस्म का कैक्टस) कीकर फलाहिआ से घिर जगल के बीच उस का कच्चा घर था जिस की छत से कभी भी साँप सपालू नीचे गिर पड़ते थे। कमरे में अकेली पड़ी रहने वाली बुआ के वही तो साथी थे। उस के रक्षक थे व। अनाज रखने के लिए मिट्टी के बनाए गए अनाजदानों (डोगरी 'कोहल') के नीचे से निकल आने वाले साँपों-सपोलुओं को हाथ से बुआ ऐसे परे धकेल देती जैसे सजीदगी से किसी के साथ बातचीत करते समय पालतू कुत्ते बिल्ली के पास आने पर उन्हें हाथ से परे हटा दिया जाता है। बिच्छू के काटने की पीडा को तो वह मानती ही नहीं थी। बुआ फच्चा साँप सपोलुओं को 'कोहल' के नीचे धकेल कर वहाँ से दो 'कूडियाँ' (चीनी की कटोरियाँ) खींच लेती। एक कूँडी उस की नमकदानी थी और दूसरी मिर्चदानी (डोगरी पिप्पलदानी)। लाल मिर्चें कूट कर कूँडी में डाल कर बिना ढके ही 'कोहल के नीचे धरी रहती थीं। रोटी खाते समय बुआ व्यजन में चुटकी भर और नमक तथा चुटकी भर ही मिर्च डाल कर तीन चार खमीरी रोटियाँ (डोगरी भठोरे') चबा लेती थी। यही उस का स्वाद था। चाय पीना वह जानती न थी। दूध उसे मिलता न था। जब तक बेबे परमेसरी जीवित रही तब तक घर में दूध-दही रहता था उस के बाद गाय रखना बुआ के लिए बहुत बडी मुसीबत थी।

नवासों के बच्चे जब चार दिनों के लिए उस के पास आते तो उन को खिलाने-पिलाने में बुआ फूली न समाती। साँझ ढलते ही आँगन में चारपाइयों पर बिछावन डाल कर उन्हें बिठा देती और फिर काँसे की छोटी थालियों में छौंका हुआ भात अथवा आलू बडियों की भाजी के साथ चपाती या खमीरी रोटियाँ (भठोरे) खाने को दे देती। उस के बाद स्वय कच्चे कोठे के अंदर जा कर अधेर में टटोल-टटोल कर 'डामट' (दीया रखने का एक काठमय उपकरण) ढूँढ़ लाती और कुछ देर दीया जला कर, रस्म पूरी करके बुआ फच्चाँ दीया बुझा कर कच्ची नींद सो जाती थी। गहरी नींद बुआ कभी सोई भी होगी यह भगवान ही जाने। जहाँ समीप ही झाड़ी में गीदड़ रात-रात भर हुँकारते रहते होंगे, वहाँ गहरी नींद सो सकना स्वप्न सदृश ही प्रतीत होता है।

बुआ फच्चाँ सत्वा नगर में सब के लिए 'बुआ' थी, पर हमारे परिवार के लिए वह हमारी 'बच्ची' (दादी) थी। 'बच्ची' को लेखिका ने सन् 1960 में अंतिम बार देखा था। तब वह गढ़मडी से रुग्णावस्था में सत्वा नगर में अपने छोटे नवासे की पत्नी के पास आ गई थी। कुछ समय के बाद सेवा एव त्याग की यह प्रतिमूर्ति हमारी 'मान-टेरेसा' अपनी इहलीला समाप्त करके इस कूच कर गई। वह दो ही बार हरिद्वार जा सकी थी—एक बार माँ की मृत्यु हो जाने पर स्वय गई थीं और दूसरी बार स्वय मर कर बिन-देह।

डोगरी से अनुवाद स्वय लेखिका

जितेन्द्र शर्मा

बुड्ड सुहागिन

पात्र

रानी साहिबा	शाभा	कमला
माँ	बच्चा	बाराती
राजा साहेब	बहू	माला
बटा	बच्चा	

होटल का एक कमरा काफ़ी खुला हुआ। दाईं तरफ़ पलग के ऊपर खूब साफ़-सुथरा बिस्तर बिछा है। पास ही स्टूल पर दवा की एक शीशी और एक गिलास रखा है। एक कोने में ड्रैसिंग टेबिल है। कमरे की दाईं आर बड़ा रोबीला साफा सट है जिस के सामने सैंटर टेबल टिका है।

पर्दा उठता है। सोफ़े पर आराम से पीठ टिकाए और आँखें बद किए 'रानी साहिबा दिखाई देती हैं। कुछ ही क्षणों में शोभा का प्रवेश। वो कलाई में बँधी घड़ी को देख कर स्टूल की तरफ़ बढ़ती है और गिलास में दवा की एक खुराक डाल कर रानी साहिबा के पास जा कर खड़ी हो जाती है।

शाभा *(ज़रा सा झुक कर)* दवा पी लें आटी!

रानी *(आँखें खाल कर)* है? हाँ, पी लेती हूँ। सुखी रहा। तुम न क्यूँ कष्ट किया। लता पिला देती। कहाँ है चुड़ैल।

शोभा कहीं काम में लगी हागी। मैं ने सोचा आप की दवा का समय न निकल जाए इसीलिए आप का जगा दिया।

रानी अच्छा किया। वैस दवा का समय निकल भी जाए तो क्या फ़र्क़ पड़ेगा।

शोभा नहीं आटी मनुष्य को हर काम ठीक समय पर करना चाहिए। ठीक है न?

रानी हाँ बटी करना तो चाहिए। पर मनुष्य हा का क्यूँ, भगवान को भी हर काम समय से ही करना चाहिए *(साँस छोड़ कर)* पर वा भी सभी काम समय पर कहाँ करता है! और फिर अगर मनुष्य समय का पाबन्द नहीं तो आश्चर्य की क्या बात है! दा बटा दवाई दा हम भी किस बहम में उलझ गए।

रानी *(दवा पी कर)* थैंक यू शोभा बटी।

(शाभा गिलास सेंटर टेबल पर रख कर रानी साहिबा के पास जा बैठती है।)

शोभा आप स एक बात पूछूँ आटी? नाराज ता नहीं हागी?

रानी हम नाराज़ होंग वा भा तुम्हार साथ! *(हँस कर)* इपॉसिबल!

शाभा आप क साथ उठत-बैठत आप का दखते-समझत आप का बातें सुनत पूरा हफ्ता हा गया है। मैं ने आप का एक बड़ा विचित्र बात नाट का है।

रानी वो क्या बेटी?

शोभा यही कि आप इधर उधर की आम बात करते हुए बीच में एक छोटी सी ख़ास बात कह देती हैं। कोई विशेष इशारा कर देती हैं। मेरा अंदाज़ा ठीक है या गलत सिर्फ़ इतना बता दीजिए। बाक़ी रही आप की वो खास बातें—उन के बारे में पूछने की हिम्मत मुझ में नहीं है।

रानी शोभा बेटी इन छह सात दिनों में तुम हमारे साथ इस तरह घुल मिल गई हो इस तरह हमारा खयाल रखती हो कि हमें जीवन में पहली बार संतान सुख का अनुभव प्राप्त हुआ है। बाक़ी रही हिम्मत की बात सो बेटी बच्चे कभी कभी बेशर्म हो कर इतनी जुर्रत करते हैं कि जानी दुश्मन भी काँप-काँप जाएँ।

शोभा देखा आंटी मैं ठीक कह रही थी ना! आप ने फिर साधारण बातचीत करते-करते किसी खास बात की तरफ़ इशारा किया है। बच्चे और दुश्मन!

रानी शोभा जो बात तुम्हें खास लगती है हमें तो वो अब आम भी नहीं लगती। सच मानो बेटी हम अपनी तरफ़ से हर बात साधारण ढंग से ही कहते हैं। पर जिस के कलेजे में कभी आग की लपटें उठी हों उस की साँसों में से कभी कभार एकाध चिनगारी निकल ही आती है।

शोभा पता नहीं मुझे उस चिनगारी का सेंक लगा है या क्या जो अचानक मेरे मन में उस की सुलगती लपटों की झलक देखने का मोह जग उठा है।

रानी *(हैरान होते हुए)* शोभा !

शोभा चलिए, आप को पलंग पर लिटा दूँ। थोड़ा आराम कर लीजिए।

रानी यहीं बैठने दो बेटी। हम लेटे लेटे भी तंग हो जाते हैं।

शोभा मैं सचमुच बहुत बोलती हूँ। आप मेरी बातें सुन-सुन कर बोर तो नहीं होतीं आंटी? मैं जानती हूँ बीमारों के साथ बहुत बकबक नहीं करनी चाहिए, पर क्या करूँ! जी चाहता है चारों पहर आप के पास बैठी रहूँ और सवाल पूछ-पूछ कर आप को थका डालूँ! आप मुझे बहुत अच्छी लगती हैं आंटी!

रानी अच्छा? हम में तुम्हें क्या अच्छा लगता है हमें भी तो मालूम हो!

शोभा आप की हर बात अच्छी लगती है। ये जो आप अपने आप को 'हम' कहती हैं न ये भी मुझे बहुत प्यारा लगता है।

रानी हमारा 'हम' कहना पसंद है तुम्हें? *(एक निःश्वास छोड़ कर)* इस 'हम' ने हमारा बड़ा साथ दिया है। हम जब भी अपनी कभी न खत्म होने वाली तनहाई से घबरा कर टूटने लगते हैं तब ये छोटा सा अक्षर हमें सहारा दे कर खड़ा कर देता है और हमें फिर अपना मान मर्यादा की रक्षा करने के योग्य बना देता है।

शोभा आप का अकेलापन? आप अब तो सचमुच अकेली हो हैं पर पहले—मेरा मतलब है आप का ब्याह?

रानी हमारा ब्याह इस नामुराद तनहाई से ही हुआ है। क्या सुनाएँ बेटी? बड़ी लंबी और नीरस कहानी है। उसे छोड़ो और अपनी सुनाओ। आज बच्चे नहीं दिखाई दे रहे!

शोभा दोनों बहन भाई अपने पापा के संग बाजार गए हैं।

रानी दोनों—आज छोटे साहेब भी गए हैं। बड़ी तो हर वक्त पापा के संग ही लगी रहती है। चारों पहर बेबी के मुँह से 'पप्पा' और 'पप्पा' के मुँह से 'बेबी' सुनाई देता है।

शोभा जी आंटी बेबी का नहाना धोना खिलाना पिलाना भी वो खुद ही करते हैं। मेरा ज़रा भर भरोसा नहीं करते। फिर कहते हैं तुम तो अपने बेटे के आसपास ही मंडराती रहती हो। तो लिए तो जैसे घर में और कोई है ही नहीं।

रानी बस लड़कियाँ बाप को और लडके माँ को ज्यादा प्यार करते हैं। या यूँ कहिए कि बाप बेटी के साथ और मा बेटे के साथ ज्यादा अटैच्ड रहती है। हम ने ठीक कहा न?

शोभा जी आंटी हमारे घर तो यही हाल है।

रानी दूसरा बच्चा होने पर पहले की ज़िम्मेदारी बाप ही को उठानी चाहिए। समझदार लोग यही करते हैं। नहीं तो माँ के ऊपर बडा स्ट्रेन पड़ता है। पहले जमाने और आज के वक्त में यही फ़र्क़ है। पहले बाप बच्चे को गोद में उठाते हुए भी सकोच करता था नहलाना धुलाना खिलाना पिलाना तो दूर रहा। वो पैसा कमा कर लाना ही अपनी ज़िम्मेदारी समझते थे।

शोभा आंटी आप ठीक कह रही हैं। हम छह बहन भाई थे। पर हम में से एक भी डैडी के साथ फ्री न था। हम घर में हर समय हल्ला करते चीखते चिल्लाते रहते थे। बस डैडी के घर में घुसते ही घर सुनसान हो जाता था। वो हमें बहुत प्यार भी करते थे। पर इस के बावजूद उन के सामने टाँगें काँपती रहती थीं।

रानी और अब देख लो अजीत के कमरे में आते ही बेबी झट उस के कधों पर सवार हो जाती है। समय बदलता है बेटी उसे बदलना ही चाहिए।

(कार का हॉर्न सुनाई देता है कार क़रीब आती है और ब्रेक लगने पर रुक जाती है।)

शोभा आ गए लगते हैं। *(उठते हुए)* अब चलता हूँ, बच्चों का खाना भी खिलाना है। हाँ क्या आप का खाना आज यहीं भेज दूँ?

रानी तुम कष्ट न करो बेटी। लता खुद ले आएगी। आज पता नहीं वो कहाँ ग़ायब हो गई है।

शोभा आंटी मैं उसे ढूँढ़ कर खाना उसी के हाथ भेजूँगी। कहीं बैठ कर गप्प मार रही होगी। मैं आप के पास होती हूँ तो वो कहीं गप्प मारने निकल जाती है।

रानी आखिर है तो बच्ची ही। हमारे सग कितनी देर क़ैद रहे इस कमरे में! इस की माँ हमारी विशेष गोली थी। बेचारी मरने से पहले लता को हमें सौंप गई। अगर हम इसे पालेंगे तो ये जीवन भर हमारी सेवा करेगी। वो लोग एहसान का बदला चुकाना अपना धर्म समझते थे। पर हम ने उस ग़रीब पर कौन से एहसान किए थे? बल्कि उस ने ही हमारी जान बचा कर जो हम पर उपकार किया था हम तो उस का बदला भी नहीं चुका सके।

शोभा *(चकित हो कर)* जान बचाई? ये—ये आप क्या कह रही हैं आंटी।

रानी *(गहरा नि श्वास ले कर)* पता नहीं आज क्यूँ पुरानी बातें याद आ रही हैं। लाख यत्न किए वो जहरीली यादें भूल जाऊँ। सदा सदा के लिए भूल जाऊँ, पर नहीं कुछ भी भुलाया नहीं गया।

शोभा आंटी!

रानी जा बेटी जा! बच्चे इतज़ार कर रहे होंगे। जाओ।

शोभा जाती हूँ आंटी। पर जाने से पहले एक बात कहने लगी हूँ। बुरा नहीं मानिएगा।

रानी जो अच्छे लोगों की बात का बुरा मानता है वो खुद बुरा होता है बेटी। तुम जो भी कहना चाहती हो कहो।

शोभा बस यही कि ज़हरीली यादों के काले बादल अगर खुल कर बरस जाएँ तो मन हल्का हो जाता है।

रानी शोभा शायद तुम ठीक ही कह रही हो। पर हम ने आज तक किसी से अपने मन का दुख नहीं कहा। अगर खुशी की बात हो तो दूसरों के साथ बाँटते अच्छा भी लगता है। अपने दुख-सताप बाँटने हम ने मुनासिब नहीं समझे। पर अब लगता है कि तुम हमारे मन के इतने भीतर आ बसी हो कि तुम से मन की बात छिपानी कठिन हो गई है।

शोभा (*गद्‌गद हो कर*) थैंक यू आंटी आप ने ये बात कह कर मुझ निहाल कर दिया है। भगवान आप को सुख दे। (*जाते हुए*) बस मैं बच्ची को खाना खिला कर अभी लौटती हूँ।

रानी कितनी प्यारी बच्ची है! कितना साफ़ दिल है इस का। (*हँस कर*) कहती है भगवान आप को सुख दे। नहीं बेटी नहीं अगर भगवान में किसी का भला करने का सामर्थ्य है तो वो तेरा भला कर। तेरे परिवार का तेरे बच्चों का भला करे। हमारे ऊपर चाहे पहले की तरह नाराज ही रहे।

(*धीरे धीरे रोशनी कम होती जाती है और जब मच पर बिलकुल अँधेरा हो जाता है—तब शहनाई के स्वर और नगाड़ों की गड़गडाहट गूँजती है। कुछ देर बाद जब फिर रोशनी होती है तब पहला दृश्य बीच के पर्दे में छुप गया होता है।*)

कमला (*दाएँ दरवाजे से आती है*) बीबी बारात आ गई। तुम ने नहीं सुना। मैं ने कहा बारात आ पहुँची है।

(कमला तेज़ी से बाएँ दरवाजे से बाहर निकल जाती है और वहाँ से दस ग्यारह बरस की 'रानी' शादी की पोशाक पहने भागती हुई आती है। वो दाईं तरफ़ निकल जाती है। इतने में औरतों के हँसने की आवाज सुनाई देती है। घबराई कमला बाएँ दरवाजे से भीतर आती है।)

कमला (*घबराई हुई*) भीतर तो कहीं नहीं है बीबी।

बच्ची (*ताली बजाते हुए आती है*) आहा जी आहा हमारे घर बारात आई है।

माँ (*नाराज़ होते हुए*) रानी! चुप कर।

कमला इस मासूम को अभी कुछ पता नहीं है।

बच्ची मौसी बड़ा सुंदर घोडा है। एकदम सफ़ेद। चाँदी की काठी सोने की लगाम।

कमला हे लडकी तू घोडा ही देखती रही। तुम्हें उस पर सवार दूल्हा नहीं दिखाई पडा?

बच्ची उस के मुँह के आगे सेहरा चमक रहा है। उस की शक्ल तो नजर ही नहीं आती। पर मौसी ये किस का दूल्हा है?

कमला हाय मैं मर जाऊँ।

माँ ये दूल्हा तेरा है मेरी बेटी।

बच्ची (*ताली बजाते हुए*) आहा जी आहा ये तो मेरा दूल्हा मेरा है मेरा।

माँ रानी ज़ोर से नहीं बोलो। लोग कहेंगे बेशर्म है। थोडी देर धीरज रखो। आराम से शादी हो जाने दो। फिर सारी उम्र राज करेगी। पिछले जन्म में तुम ने जरूर हीरे मोती दान किए होंगे जो तेरा ब्याह राजा के साथ हो रहा है।

कमला बड़ी भाग्य वाली है बीबी। तुम ने नाम भी कैसा चुन कर रखा था—'रानी'! सचमुच की रानी हो गई 'रानी साहब'। (*भीतर चली जाती है*)

बच्ची माँ जी मुझे भीतर जाने दो न! सिर्फ़ एक नजर दूल्हा देखूँगी! क्या पता उस ने अब सेहरा उठाया हुआ हो। जाने दो न माँ!

माँ नहीं बेटी आज नहीं। ससुराल जा कर राजा पति का चेहरा देखा करना।

बच्ची ससुराल में क्यूँ? यहाँ क्यूँ नहीं!

माँ अब मैं तुम्हें कैसे समझाऊँ?

कमला (*भीतर आती है*) मैं जयमाला ले आई हूँ बीबी।

बच्ची माँ जी आप ने कब से मुझे भीतर बंद करके रखा है। सिर्फ़ एक मिनट जाने दो न।

कमला सब्र कर लड़की। तेरा दूल्हा कहीं भाग कर नहीं जाएगा। *(एक बाराती दूल्हे को विंग से भीतर ला रहा है। माँ तुरत रानी का घूँघट निकाल देती है।)*

बाराती जयमाला का मुहूर्त निकला जा रहा है जल्दी करिए।

कमला *(रानी को जयमाला पकड़ाते हुए)* ये ला रानी, जयमाला पकड़ो।

बाराती राजा साहब आज तो सिर झुकाने का कष्ट करना ही पड़ेगा। इस मौक़े पर बड़े-बड़े सूरमाओं को गर्दन झुकानी पड़ती है।

कमला हाँ क्यूँ नहीं! अपनी रानी साहिबा के आगे ही सिर झुकाना है कहीं किसी पर कोई एहसान नहीं है।

बाराती रानी साहिबा को गोद में उठाए बिना बात नहीं बनेगी बहनजी।

(माँ रानी को उठा कर आगे करती है। दूल्हा गर्दन और झुका लेता है)

राजा जल्दी कीजिए रानी साहिबा, नहीं तो हमारी गर्दन में बल पड़ जाएगा।

रानी न जी न जोर से मत बोलिए! नहीं तो लोग बेशर्म समझेंगे!

राजा *(हँसता है)* हा हा हा!

रानी आप का घोड़ा बड़ा सुंदर है!

माँ *(सरगोशी में)* रानी

राजा तो क्या हम सुंदर नहीं हैं?

रानी पर आप का तो चेहरा सेहरे से ढँका है और अभी देखना भी नहीं है। माँ जी कह रही हैं ससुराल जा कर रोज़ सुबह देखा करना।

राजा ससुराल में क्यूँ? यहाँ क्यूँ नहीं।

रानी *(जयमाला पहनाते हुए)* अब मैं आप को कैसे समझाऊँ!

(सभी जोर से हँसते हैं। मंच पर घुप्प अँधेरा हो जाता है। शहनाई के सुर उभरते हैं डूब जाते हैं। फिर रोशनी होने पर पहला दृश्य दिखाई देता है। मानो रानी आपबीती सुना रही हैं और शोभा तन्मय हो कर सुन रही है।)

रानी और उस दिन से हम रानी साहिबा बन गए और अपने आप को 'मैं' की जगह 'हम' कहने लगे।

शोभा हाऊ स्वीट! आप का ब्याह तो बचपन में ही हो गया आंटी!

रानी उन दिनों यही रिवाज था।

शोभा राजा साहब के साथ आप का रिश्ता कैसे जुड़ा था?

रानी हमारे चाचाजी माने हुए शिकारी थे। उन की राजा साहब के साथ बड़ी दोस्ती थी। जब पहली रानी साहिबा का स्वर्गवास हो गया तब मेरे चाचाजी ने ही ये रिश्ता करवाया था।

शोभा अब समझ आया। ये राजा साहेब का दूसरा ब्याह था। तब तो आंटी आप की उम्र का भी ख़ास अंतर रहा होगा।

रानी नहीं कोई इतना फ़र्क़ भी न था। चाहे उस समय उन के दो बच्चे भी थे—एक राजकुमारी दूसरा राजकुमार। पर कहते हैं उन का ब्याह बड़ी छोटी उम्र में हुआ था।

शोभा और आंटी अब राजा साहेब?

रानी *(आह भर कर)* उन का हमारा कुछ ही दिनों का साथ था। अभी गौना भी न हुआ था जब राजा साहेब शेर का शिकार करने गए और खुद उस का शिकार हो गए।

शोभा राम राम!

रानी आख़िरी वक्त उन्होंने हमें याद करते हुए कहा था 'उस बदनसीब को पालकी भेजो जिस के जीवन पर सदा के लिए अँधेरा हो जाएगा। जिस के मन से अभी हमारी शक्ल देखने का चाव भी नहीं गया।

शोभा ठीक है आटी। आप के मन की वेदना तो अच्छी तरह से जानते थे।

रानी जब शाही पालकी पहुँची तब हम अपनी सहेलियो के सग खेलने में इतने मस्त थे कि ससुराल जाने को मन ही न हो रहा था। हम ने जिद पकड ली—हम नहीं जाएँगे। आखिर माँ का सूखा मुँह और पथराई नजरों से डर कर हम पालकी में बैठे। अपने पति की शक्ल हम फिर भी न देख सके। पहली दफ़ा उन का चेहरा सेहरे से ढँका था और दूसरी दफा कफ़न से।

शोभा हाय राम! कितनी दर्दनाक दास्तान है।

रानी हमारी कलाइयों से चूडे उतर गए। सिर से सिन्दूर मिट गया। धीरे धीरे हमें अपना दूल्हा भी विसर गया। पर हमारी माँ का हमारी बदनसीवी का ग़म भीतर ही भीतर खाता रहा और जल्दी ही वो भी हमें छोड कर चली गई। उम्र के साथ हमें दुनियादारी समझ आने लगी थी। जब माँ के स्वर्गवास का पता चला तो हमारे सर पर बिजली टूट कर गिरी। हम पागल से हो गए और फिर सास की गोद में ममता का साया मिला और साँस में साँस आई। वो हमें बहुत लाड़-दुलार करती थीं। उन्होंने हमें तीन चार मास्टर लगा दिए तो हम पढ लिख कर रियासत का राजपाट सँभाल सकने के योग्य हुए।

शोभा आटी तब तो आप की सास देवी थी।

रानी और फिर वो देवी भी हमारा साथ छोड गई और राजपाट का सारा भार हमारे ऊपर आ गया। हम ने राजकुमारी और राजकुमार के ब्याह बडी शान के साथ किए। बेटी के दहेज में हम ने अपने सब से सुदर गहने कपडे दे कर उसे ससुराल भेजा। फिर अपना सब कुछ खजाने में जमा करके चाबियाँ अपनी बहू रानी को सौंप दीं। फिर वो हमें ऐसे क़हर भरी नजरों से देखती जैसे हमारे रक्त की प्यासी हो।

(मंच पर अँधेरा हो जाता है। कुछ क्षणो में रोशनी होती है तो बीच के पर्दे के सामने तीन शाही कुर्सियाँ टिकी हुई दिखाई देती हैं। बीच की कुर्सी पर रानी साहिबा बैठी हैं। काले बालों और चेहरे से पता चलता है कि ये उन की जवानी के दिनों का दृश्य है। इतने में खूब हार सिंगार करके बडे मिजाज वाली बहू मटकती आती है। दूसरी कुर्सी पर बैठ कर रानी साहिबा के ऊपर व्यग्य बाण छोडती है।)

बहू *आज रानी साहिबा को इस दासी की याद कैसे आई!*

रानी *मेरी भतीजी का ब्याह है बहूरानी।*

बहू *जानती हूँ। मैं ने भी कार्ड देखा था।*

रानी *मैं सोच रही हूँ इसी महीने मैके का चक्कर क्यूँ न लगा आऊँ।*

बहू *ये आप क्या कह रही हैं! ज़रा सोच कर देखिए! हर ऐरे गैरे नत्थू खैरे के घर जाने से क्या आप के बेटे के नाम को बट्टा नहीं लगेगा?*

रानी *(तड़प कर)* बहू? हमारा सगा भाई तेरे लिए ऐरा गैरा नत्थू खैरा है?

बहू मैं ग़रीब रिश्तेदारों और भिखारियों में कोई फ़र्क नहीं समझती जिन को हर घड़ी देना ही देना है लेना कुछ भी नहीं है।

रानी वो जैसे भी हैं हमारे रिश्तेदार हैं और अपने सबंधियों की खुशी के मौक़े पर लेना देना हमारा फ़र्ज़ बनता है। हम लडकी की सगी बुआ हैं। हम कुछ न देंगे तो क्या हँसी न उड़ेगी?

बहू आप क्या देना पसंद करेंगी?

रानी हमारी इच्छा अपना रानी हार देने की है।

बहू आप के ज़ेवरों में रानी हार सब से क़ीमती है इसलिए उस पर आप के पोते की बहू का हक़ बनता है। इस बात का फ़ैसला हो चुका है।

रानी हमारे पोते की भगवान लंबी उम्र करे। पर अभी तो वो घिसट कर चलना सीख रहा है। उस के विवाह तक भगवान आप को ऐसे कई हार बनाने की सामर्थ्य देगा। और बहू रानी हम अपने हाथों कोई घटिया चीज़ देना पसंद नहीं करेंगे।

बहू इसीलिए तो बाँदी ने अर्ज किया था कि राजमाता का वहाँ ख़ुद जाना सिर्फ़ उन के लिए ही ना मुनासिब न होगा बल्कि राजा साहब की शान के भी शायाँ न होगा। आप रत्ती भर चिन्ता न करें। जो मुनासिब होगा वो भेज दिया जाएगा।

रानी पर हम उस रानी हार ही देना मुनासिब समझते हैं।

बहू *(क्रोधित हो कर उठती है)* क्यूँ रानी साहिबा अपने भाई की औलाद को रानी हार और बेटे की औलाद को फ़ालतू जेवर?

रानी हमारी कोई भी चीज़ फ़ालतू नहीं है।

बहू साफ़ साफ़ क्यूँ नहीं कहतीं कि भाई की तो आप सगी बहन हैं पर बेटे की सौतेली माँ!

(बहू तेज़ तेज़ क़दमों से बाहर चली जाती है। रोशनी धीरे धीरे कम होती है और दर्दनाक संगीत का टुकड़ा उभरता है। रोशनी होती है और पहला दृश्य उपस्थित है।)

रानी उस की बात सुन कर हमें लगा हमारा कलेजा छलनी हो गया है। जिन बच्चों पर हम ने सारी ज़िन्दगी क़ुर्बान कर दी उन्होंने हमें सौतेली माँ होने का ताना दिया। हम ने उन के साथ बोलना बंद कर दिया। मानो सदा सदा के लिए अपने होंठ सी लिए हों।

शोभा फिर आप के भाई की बेटी के ब्याह पर आप ने कुछ नहीं भेजा?

रानी मुंशी के हाथ मामूली सी रकम भेज कर हमारी हँसी उड़वाई। भाई ने समझा हमें बड़ा अहंकार हो गया है और हम ने ब्याह में शरीक होना अपनी शान के ख़िलाफ़ समझा है। इस तरह मैके के साथ हमारा संबंध ही ख़त्म हो गया और हम महलों में नज़रबंद हो गए।

शोभा पता नहीं लोग इतने निर्दयी कैसे हो जाते हैं कि अपने पराए को पहचान ही नहीं सकते।

रानी फिर एक दिन हमारी गोली माला

शोभा लता की माँ न?

रानी हाँ वो हमारा खाना ले कर भीतर आई तो पसीने से भीगी हुई थी। उस की घबराहट और उड़े हुए रंग को देख कर हम हैरान हुए।

(रोशनी बुझ कर फिर जलती है। बीच वाले पर्दे के सामने रानी साहिबा टहलती दिखाई देती हैं। हाथ में थाली उठाए घबराई हुई माला का प्रवेश।)

रानी क्या बात है माला? तुम इतनी क्यूँ घबराई हुई हो?

माला कुछ नहीं रानी साहिबा कुछ भी तो नहीं!

रानी कुछ भी नहीं?

माला ओह हाँ लता आज कुछ बीमार है।

रानी लता बीमार थी तो तुम्हें उस के पास रहना था मूर्ख! खाना कोई और ले आता।

माला आप खाना अभी खाएँगी सरकार या थोडा ठहर कर खाएँगी।

रानी ठहर कर क्यूं? अभी खा कर तुम्हें खाली कर देते हैं। तुम अपनी बीमार बेटी के पास जा कर बैठो।

माला न जी न मुझे कोई जल्दी नहीं सरकार! मैं खाना गर्म करके ले आती हूं। एकदम ठडा हो गया है।

रानी ये तुम आज कैसी बातें कर रही हो। अभी तो खाना ले कर आई हो और अभी कहती हो ठडा हो गया है।

माला माता रानी की सौगध! खाना एकदम ठडा है।

रानी कोई बात नहीं आज हम ठडा खाना ही खा लेंगे। तुम्हें जल्दी है न।

माला नहीं नहीं मुझे कोई जल्दी नहीं है *(हँस कर)* मैं अभी आप के लिए ताज़ा खाना बना कर ले आती हूं।

रानी ताजा खाना? इस में क्या बुराई है?

माला कोई नहीं, कोई भी नहीं। माता रानी की सौगध। बस सिर्फ़ बासी हो गई है।

रानी कभी कहती हो खाना ठडा है कभी कहती हो बासी है। आज तुम होश में नहीं हो माला। शायद लता ज्यादा बीमार है। तुम जाओ खाना रख दो हम खुद खा लेंगे।

माला *(लगभग चीख़ते हुए)* नहीं नहीं रानी साहिबा। मेहरबानी करके इस भोजन को हाथ न लगाएँ *(रोते हुए)* मुझ पापिन को ज़िन्दा गाड़ दो। मेरे टुकडे टुकडे कर दीजिए। मेरी जैसी चाडालिनी को जीने का कोई अधिकार नहीं।

रानी *(उस के कधों से पकड कर हिलाती है)* होश करो! भला हमें बताओ इस खाने में क्या है? बोलो?

माला इस में जहर मिला हुआ है। माता रानी की सौगध इस में ज़हर है। ज़हर मिलाया है आप के भोजन में।

रानी *(चकित हो कर)* ज़हर?

माला *(डरी सहमी हुई)* मेरी लता को बचा लें। सरकार! बिन बाप की मेरी एक ही बेटी को बचा लीजिए।

रानी लता को क्या हुआ?

माला वो उसे जीते-जी मार डालेंगे।

रानी पर कौन? कौन उसे मार डालेगा?

माला उन्होंने मुझे बार बार ये कहा है कि अगर उन का भेद खुल गया तो लता ज़िन्दा नहीं रहेगी *(रोते हुए)*। उसे बचा लीजिए सरकार!

रानी हम लता की रक्षा का वचन देते हैं। अब बोलो हमारे भोजन में जहर किस ने मिलाया?

माला *(सरगोशी में)* राजा साहेब ने।

रानी *(चकित हो कर)* राजा साहेब ने?

माला माता रानी की सौगध।

रानी किस के कहने पर उन्होंने ऐसा किया।

माला राजा साहब को ये नीच काम करने के लिए बहू रानी ने मजबूर किया था।

रानी बहू रानी ने? उसे हम से घृणा तो है पर ये न जानते थे कि वो हमारी हत्या भी करवाना चाहती है। वो भी हमारे बेटे के हाथों?

माला *(रोते हुए)* बचा लें सरकार! मेरी लता को बचा लें! मैं आप के चरण धो धो कर पायूँगी! सौगध माता रानी की।

(जैसे-जैसे रोशनी कम होती है दर्दनाक संगीत उभरता है। फिर संगीत के स्वर कम होते जाते हैं रोशनी बढ़ती जाती है। फिर वही पहला दृश्य उभरता है।)

रानी उस दिन के बाद हम अपना भोजन खुद बनाने लगे। पर हम ने उन्हें पता नहीं चलने दिया कि हम उन के षड्यंत्र को जानते हैं। उस दिन बीमार होने का बहाना बना कर भोजन नहीं किया और बात आई गई हो गई।

शोभा आप का बेटा इतना नीच काम करने के लिए राज़ी कैसे हुआ आंटी?

रानी हमारा बेटा? हाँ शोभा हमारा ही बेटा। उस की सूरत राजा साहेब से इतनी मिलती है कि उस के चहरे और राजा साहब की सूरत में कोई भी अंतर नहीं है। हमें वो बहुत प्यारा भी है शोभा। वो सच में हमारा आदर मन से करता था। हम ने उस के लिए जो कुर्बानिया दीं उस का पूरा एहसास था राजा साहेब को। पर रानी ने बहला फुसला कर उस की मति भ्रष्ट कर दी।

(मंच पर कुछ देर के लिए अँधेरा छा जाता है और फिर रोशनी होने पर बीच के पर्दे के सामने रानी साहिबा और छोटे राजा साहेब बैठे हुए दिखाई देते हैं।)

बेटा आप ने कैसे याद किया रानी माँ?

रानी राजा बेटा कोई ख़ास बात नहीं। आप को देखे हुए बड़े दिन हो गए थे इसीलिए बुलवा भेजा था।

बेटा रानी माँ हम शर्मिन्दा हैं। आप की सेवा में हाजिर होना हमारा कर्त्तव्य है पर जब से आप ने राज्य हमें सौंपा है तब से हमें समय ही नहीं मिलता। फिर भी हम इस गुस्ताख़ी के लिए माफ़ी चाहते हैं।

रानी आप ने कोई गुस्ताख़ी नहीं की राजा बेटा। आप राजा साहेब की रियासत का राज्य इतनी कुशलता से चला रहे हैं कि आप की जितनी भी तारीफ़ की जाए, कम है।

बेटा ये सब आप के पुण्य का फल है। जिस बात की हमें समझ नहीं आती उस के बारे में आप ही तो हमारी मदद करती हैं। हम से भूल हो जाए तो आप ही हमें राह दिखलाती हैं। भगवान आप का साया हम पर बनाए रखे।

रानी अब आप राजनीति में पूरी तरह निपुण हो गए हैं। अब आप को किसी से सलाह मशविरे की कोई ज़रूरत नहीं। इसलिए हम निश्चित हो कर जा सकते हैं।

बेटा नहीं रानी माँ आप हमें छोड़ कर कहीं नहीं जा सकतीं।

रानी राजा बेटे, क्या आप की यही इच्छा है कि हम उम्र भर इसी पिंजरे में बन्द रहें! अगर आप की आज्ञा हुई तो हम कुछ देर खुली ताज़ा हवा का भी मज़ा ले लेंगे। नहीं तो न सही।

बेटा आप का आज्ञा देने वाले हम कौन हैं! रानी माँ हम तो बल्कि आप की आज्ञा के गुलाम हैं। आप को याद होगा जब आप महलों में आई थीं तब हम सारा दिन इकट्ठे खेलते रहते थे। फिर अचानक आप ने दूसरा रूप धारण कर लिया और फिर हम दोनों बहन भाइयों को आप से माँ का स्नेह मिलने लगा।

रानी राजा साहेब की निशानिया को माँ का प्यार देना ही हमारा कर्त्तव्य था। हम ने आप के ऊपर कोई एहसान नहीं किया। ये बात अलग है कि सगी माँ का प्यार.

बेटा आप ने हमें सगी माँ से भी ज्यादा प्यार किया है। आप ने हमें कभी राजा साहेब की कमी भी महसूस नहीं होने दी। आप के प्यार की घनी छाया तले आज तक हम पलते आए हैं

बहू *(भीतर आते हुए)* अब भी पल रहे हैं और अगर रानी साहिबा का ये चरित्र सफलता के साथ चलता रहा तो प्यार का ये नाटक आगे भी चलता रहेगा।

रानी आओ बहू रानी आओ।

बहू अब मैं ढाठ बन कर आ ही गई हूँ तो मेरा भी स्वागत होने लगा है। वैसे तो आप ने सिर्फ़ अपने बेटे को ही बुलाया था।

रानी काम ही ऐसा था बहूरानी जिस के लिए तुम्हारी मौजूदगी जरूरी न थी। हम ने आप को नाहक़ तकलीफ़ देना उचित नहीं समझा।

बहू मुझे मालूम है आप को मेरी सूरत देखना अच्छा नहीं लगता। मैं अब भी यहाँ बैठने नहीं आई। सिर्फ़ ये पूछने आई हूँ कि ये चोरी चोरी मेल मुलाक़ातों का नाटक कब से चलता आ रहा है।

बेटा ये तुम *क्या बकवास कर रही हो?* चुप रहो नहीं तो *जीभ खींच लूँगा।*

रानी *(नाराज होते हुए)* राजा बेटे रियासत की रानी साहिबा के साथ बातचीत करने का सलीका आप कैसे भूल गए।

बेटा पर ये भी तो सोचिए ये क्या कुफ़्र तोल रही है। शराफत की भी कोई हद होती है।

रानी ऊँचे ख़ानदान वाले कभी शराफ़त का दामन नहीं छोड़ते। चाहे कितनी ज्यादती भी क्यूँ न हो। समझे आप?

बहू ज्यादती तो आप दोनों मेरे साथ कर रहे हैं। न तो आप सगी माँ बेटा हैं और न ही आप में उम्र का कोई ख़ास फ़र्क़ है। आप का ये माँ बेटे वाला ड्रामा पूरी दुनिया को मूर्ख बना सकता है पर मेरी आँखों में रेत नहीं डाल सकता।

बेटा *(गुस्से से काँपते हुए)* चुप करो पागल नहीं तो

रानी *(टोकते हुए)* राजा बेटा आप को इस महल की मान मर्यादा का वास्ता है। अब एक शब्द भी नहीं कहना।

बेटा *(तड़प कर)* रानी माँ!

रानी हाँ राजा बेटा। इस में हमारी आप की और बहूरानी ही की नहीं बल्कि छोटे राजकुमार की भी भलाई है। बहूरानी के मन में ये जो शक का जहरीला बीज फूटा है इसे अभी इसी वक्त जला कर राख कर दो। अगर ये उग आया तो इस विशाल महल की ऊँची दीवारों में जगह जगह दरारें पड़ जाएँगी।

बेटा पर नहीं रानी माँ

रानी बहूरानी की आँखों के आगे पाप की जो अँधेरी काली सी चादर तन गई है वो एक दिन अपने आप दूर हो जाएगी और बहूरानी इस मनहूस घड़ी को याद करके पछताएँगी। राजा बेटा हमारा यहाँ से जाना अब बहुत ज़रूरी हो गया है। इसलिए ये महल और इस की इज्जत आबरू अब आप के हाथों में है।

बेटा रानी माँ आप ने कभी भी महलों से बाहर कदम नहीं रखा। आप जाएँगी तो महल की शोभा घट जाएगी।

रानी इस महल की शोभा अब बहूरानी हैं छोटे राजकुमार हैं। बहूरानी विश्वास करो हमें तुम्हारे साथ कोई नाराजगी नहीं है। हमें तुम छोटे राजकुमार की तरह ही प्यारी लगती हो। तुम ने हम पर इतना बड़ा लांछन लगाया है। फिर भी हमारे मुँह से तुम्हारे लिए यही आशीष निकलता है कि परमेश्वर करे, छोटे राजकुमार साहब कभी तुम्हारी ममता का मुँह काला न करें।

(रोशनी बुझ कर फिर जलती है और पहले वाला दृश्य नज़र आता है।)

शोभा और आप ने तब से महल छोड़ दिया?

रानी हाँ बेटा!

शोभा मैं अपने आप को भाग्यशाली समझती हूँ। आप ने अपनी ज़िन्दगी एक खुली किताब की तरह मेरे आगे रख दी। सोचती हूँ जो सवाल मन में बार बार उठते हैं वो भी क्यूँ न पूछ लूँ!

रानी पूछ लो बेटी!

शोभा आप की माँ ने आप का दूसरा ब्याह क्यूँ नहीं किया?

रानी उस युग में इतना दम किसी में भी न था कि विधवा की दूसरी शादी करने का सवाल ही उठता। जहाँ आम लोगों का ये हाल था वहाँ रानियों महारानियों के दूसर ब्याह की बात कोई सोच भी कैसे सकता था।

शोभा आप ठीक कह रही हैं आंटी।

रानी हमारी मा अपने मन को झूठी तसल्ली देते हुए कहती थी विधवा हो गई तो क्या हुआ? धन-दौलत, बाल बच्चे हैं ठाठ-बाट हैं। एक पति ही तो नहीं है न बाक़ी तो सभी कुछ है।

शोभा ठाठ-बाट की तो सच ही में आप को कोई कमी न थी। बस जीवन में न सुख रहा न चैन। ठाठ-बाट भी तो पति के साथ ही अच्छे लगते हैं न।

बच्चा *(दरवाज़े में से झाँकते हुए)* मैं आऊँ?

रानी आओ बेटे, जल्दी से हमारे पास आ जाओ।

(बच्चा जल्दी से रानी साहिबा के पास आ कर बैठ जाता है।)

रानी आज सारा दिन कहाँ थे?

बच्चा पप्पा के साथ बाज़ार गया था।

रानी और दीदी?

बच्चा वो भी गई थी।

रानी अब वो कहाँ है?

बच्चा पप्पा के साथ ही चिपकी हुई है। रानी माँ आप ठीक कहती हैं वो पप्पा की चमची है।

शोभा क्या कर रही है?

बच्चा कहानी सुना रही है। रानी माँ आज आप ने मुझे कहानी क्यूँ नहीं सुनाई।

रानी तुम सुबह से आए ही नहीं हम कहानी कैसे सुनाते?

शोभा नहीं बेटे आज कोई कहानी नहीं सुननी। रानी माँ की तबीयत ठीक नहीं है।

रानी देखा मम्मी कितनी चालाक है! खुद तो कहानी सुन ली पर तुम्हें नहीं सुनने देगी।

शोभा आंटी आप थक जाएँगी।

रानी नहीं शोभा नहीं आज तो मन बड़ा हल्का हो गया है। मन का सारा उबाल आज इतने दिनों बाद निकल गया है।

बच्चा तो फिर सुनाओ न कहानी।

रानी कौन सी कहानी सुनाऊँ?

बच्चा वही दुपट्टे वाली।

रानी *(हँस कर)* रोज़-रोज़ एक ही कहानी?

शोभा *(बाहर जाते हुए)* ये भी एक पागल है।

बच्चा मुझे यही कहानी अच्छी लगती है रानी माँ।

रानी ठीक है तो सुनो। एक था राजा। उस का एक बेटा था और एक थी बेटी। कमल के फूल की तरह रोज़ बड़ी होती राजकुमारी का नाम राजा ने सोनपरी रखा था। उसे उस का भाई भी बहुत प्यार करता था पर भाभी उस से बहुत जलती थी।

बच्चा ता फिर एक दिन राजा रानी तीर्थयात्रा पर चले गए। सावन के महीने में लडकियो ने राडे का त्योहार मनाया और सोनपरी खेलने चली तो उस ने अपनी भाभी से ओढनी माँगी। है न रानी माँ?

रानी हाँ जल भुन कर ख़ाक हुई भाभी न कहा ओढनी ले जाओ पर इस में कोई दाग लगा तो मैं उसे तुम्हारे खून स धोऊँगी। भगवान की इच्छा! राडे खेलते खेलते ओढना को चील गदा कर गई। दाग से भरी ओढनी देख कर भाभी को बहाना मिल गया और वो कोप भवन में चली गई और प्रण किया कि जब तक मैं सोनपरी क खून से ओढनी न रग लूँगी मुँह न जूठा करूँगी।

बच्चा और फिर भाई बहन को ननिहाल ले जाने के बहाने जगल में ले गया और वहाँ तलवार के एक ही वार स उस का सिर धड से अलग कर दिया। यही है न रानी माँ?

रानी फिर भाई ने बहन का लहू सकोरे में डाला और घर जा कर पत्नी को दिया। पत्नी ने उस से अपनी ओढ़नी रग ली।

शोभा *(भीतर आते हुए)* कैसा मस्त हा कर सुन रहा है पाजी।

बच्चा और जब राजा-रानी लौटे तो उन्होंने सोनपरी को बुलाने के लिए उस की ननिहाल में धोबी को भेजा।

रानी कितना शैतान है इसे सारी कहानी जबानी याद है फिर भी

शोभा आप के मुँह से सुनन का मज़ा ही अलग है।

बच्चा सुनाइए न रानी माँ।

रानी धोबी जगल में पहुँचा तो आम का एक वृक्ष पूरा आमों से लदा देख कर आम तोड़ने लगा। तब उसे सानपरी की आवाज़ आई।

> 'बापू देया धुप्बेया अब नेंई त्रोड़
> डाली नेंई मरोड
> सके भाइये भैन भारी सूआ दित्ता डोर
> भाबी ओड्नू रगा

(बापू के धोबी आम मत तोड़ो टहनी न मरोड़ो। सगे भैय्या ने बहन मारी, लाल रगी आढ़नी भाभी आढनी रग ले।)

शोभा जाओ अब आटी को आराम करने दो।

बच्चा मम्मी एक मिनट। फिर रानी माँ?

रानी राज ने आम कटवा कर गड्डा खुदवाया तो उस में सानपरी की लाश दख कर रोने लगा।

बच्चा वो आँसू सोनपरी पर गिरे तो वो राम राम कह कर उठ खड़ी हुई। है न रानी माँ।

रानी हाँ बटा।

बच्चा पर सोनपरी ने अपन भाई व भाभी को क्षमा कर दिया। क्यूँ क्षमा कर दिया रानी माँ?

रानी झगडा न बढ़े इसलिए क्षमा कर दिया।

बच्चा झगडा बढ़ाना ठीक नहीं होता रानी माँ?

रानी कभी नहीं। झगडे से डर कर हम अपना सब कुछ छोड यहाँ आ गए हैं।

बच्चा ऐं रानी माँ! आप की गर्दन भी कोई काटने लगा था?

रानी हैं? हाँ हाँ बटा।

शोभा देखा बटा आटा कितना अच्छी बातें सुनाता है। फिर पता नहीं इन स मिलना भी हागा या नहीं।

रानी क्यूँ जाने की सलाह बन गई है क्या?

शोभा कल ही तो जा रहे हैं आंटी।

रानी ये अचानक जाने की जल्दी क्यूँ पड़ गई।

शोभा फ़ौजिया की यही तो मुसीबत है। अभी अभी तार आया है। इन्हें बहुत जल्द लाइन हाजिर होने का हुक्म हुआ है।

बच्चा माँ क्या हम सचमुच कल जा रहे हैं?

शोभा हाँ बेटा।

बच्चा तो मैं अपने दोस्तों को बाय-बाय कर आऊँ।

रानी और हमें बाय बाय नहीं करोगे?

बच्चा आप को कल करूँगा। कल फिर एक बार कहानी सुनूँगा। फिर बाय बाय कर लूँगा। ठीक?

रानी बिलकुल ठीक।

बच्चा *(बाहर निकलते हुए)* मैं जा रहा हूँ।

शोभा मैं भी चलूँगी आंटी। कुछ पैकिंग ही कर लूँ। आप की बदौलत यहाँ छह सात दिन कैसे बीत गए पता ही न चला। अरे हाँ आप की दवा का समय हो गया है।
(दवा देती है) लीजिए, पी लीजिए!

रानी *(दवा पी कर)* परमात्मा भला करे बेटी। बच्चा का सुख देखो।

शोभा मैं आप को पत्र लिखूँगी। आप को अच्छा लगे तो उत्तर दें नहीं तो न सही।

रानी हम अपनी बेटी को पत्र जरूर लिखेंगे।

शोभा आंटी!

रानी बोलो शोभा कहो न!

शोभा यूँ लगता है अगर मैं अपने मन की बात आप को सुनाए बगैर चली गई तो उम्र भर पछताती रहूँगी।

रानी क्या मतलब?

शोभा आप की वेदना सुन कर पता चला कि अब वो जमाना सच में बड़ा बदल गया है। आप ने तो अपने पति की मूरत भी नहीं देखी। सिर्फ उन के नाम के साथ जुड़ कर उम्र भर विसूरती रहीं और मैं और मैं

रानी तुम्हें क्या हुआ शोभा कहो न?

शोभा अजीत बेबी के सगे पप्पा नहीं हैं?

रानी *(आश्चर्य के साथ)* क्या मतलब?

शोभा बेबी मेरे पहले पति की संतान है।

रानी तो तुम ?

शोभा जी ये मेरे दूसरे पति हैं। बेबी के पिता ने दुश्मन से लड़ते लड़ते जब वीरगति प्राप्त की थी तो ये सिर्फ़ एक बरस की थी। मैं रो रो कर पागल-सी हो गई थी। मेरे माँ-बाप भी हर समय रोते रहते थे। घर शोक भवन सा था।

रानी फिर क्या हुआ शोभा?

शोभा फिर एक दिन अख़बार में मैट्रिमोनियल कॉलम में मेरा नाम और पता पढ़ कर अजीत ने मेरा हाथ माँग लिया। मैं कितना देर अपने आप को दूसरी शादी के लिए राज़ी न कर सकी। मैं सोचती थी मेरी बेटी दरबदर

हो जाएगी। पर मुझे सब ने इतना मजबूर किया कि मैं न आखिर हथियार छोड दिए।

रानी और फिर तुम्हारा दूसरा ब्याह हो गया?

शोभा जी आटी। पर आप जानती हैं अखबार में किस ने इश्तहार दिया था और मुझे इतना मजबूर किया था?

रानी तर माता पिता ने?

शोभा नहीं मेरे पहले पति की माँ ने!

रानी तेरी सास ने?

शोभा हाँ आटी वो मुझ इतनी दूर से मिलने आईं और कहने लगीं 'जब तक तेरी माँग सूनी रहेगी मेरे बेट की रूह को शाति नहीं मिलेगी। अगर तुम्हें बेबी की चिन्ता है तो इसे मरी गोद म डाल दे। मैं इस पाल लूँगी।

रानी ऐसे जिगर वाली माँ धन्य है!

शोभा इन्हें पता चला तो घर आए और कहने लगे 'मैं पूरी शोभा को अपनाना चाहता हूँ, अधूरी को नहीं। बेबी इस का हिस्सा है। अगर इस अलग कर दिया गया तो शोभा अधूरी हो जाएगी।

रानी अहा कितने सुदर विचार हैं।

शोभा फिर मेर ब्याह के बाद तो बेबी अपने पप्पा की लाडली हो गई। मुझे तो लगता है कि ये अपने बटे के हिस्से का लाड़ प्यार भी बेबी को ही करते हैं। आप चुप क्यूँ हो गई आटी? कहीं य बात आप को बता कर मैं ने गलती तो नहीं की?

रानी शोभा बेटी! अगर तुम ये सब हमें न बतातीं तो तुम्हें कोई फ़र्क़ न पडता पर हम अपने जीवन की सब से बड़ी खुशी से वचित रह जाते।

शोभा आटी!

रानी हाँ बेटी हम तुम्हें बता नहीं सकते कि आज हम कितने खुश हैं! विश्वास करो इस बदलते युग की चर्चा सुन कर हमें बहुत हा सतोष मिला है। अब हमें अपना कोई गम नहीं। हम आज क इस समाज के बड दनदार हैं। आज समाज नारी के दुख सुख की चिन्ता भी करने लगा है। उस भी मनुष्य जाना है समाज न।

शोभा *(गद्गद हो कर)* सच आटी?

रानी *(बाँहें आगे करके)* आओ हमारे गले लग जाओ शोभा! हम ने आज तुम में नारी के नए रूप क दर्शन किए हैं।

(शोभा रानी साहिबा के सामने झुकती ह। रानी साहिबा उस का माथा चूम कर उस के सिर पर हाथ फर कर कहती हैं)

रानी जीती रहो बेटी! सुख ही सुख भोगो। बुड्ढ सुहागिन रहो बुड्ढ सुहागिन!

(रोशनी कम होती जाती है और परदा धीरे धीरे गिरने लगता है)

डोगरी स अनुवाद पद्मा सचदव

पद्मा सचदेव

कहा तो था उस ने

इस वीरान बस्ती में
प्रकृति की हस्ती में
कौन साँस लेता है
होश किसे बाक़ी है
ख़बर हर पल की है
खटका है साँसा का
काँप उठी बहती हवा
ज़रा सी ठहरी है जब
फिर हुई बहाश सी वो
खोलती है कलियां को
पोंछ रही फूलों को
बख्श रही भूलां को
माँ तू साँस मत ले
माथे पर गिरती है
इक सूराख़ होता है
कह रही बेटी मेरी
बात साँस की ही नहीं
पागल ज़माने की
इस दीवानख़ाने की
कुछ देर रोक लो साँस
ठहरो मैं हूँ सुन रही
कोई आहट होती सी
कोई तो है आ रहा
दुनिया के बाज़ार में
अकेला हो चल रहा
साँस न लो एक पल
बाँसुरी सुनती हूँ मैं
क्या पता कृष्ण ही हो
कहा तो था उस ने
इसी वक्त आने का

भरी दोपहरी

गर्मी की इस भरी दोपहरी में मन होता है
बावड़ी से मैं जल भर लाऊँ
सिर पर घड़ा काँख में बटलोई
छलक छलक कर मुझे भिगोए
कंधे पर ठंडी सी रस्सी
छोटे बच्चे जैसी फिसले
घड़े को घर घड़ियाली देखे
ठंडी रेत और सर्द बिछौना
गुड़ की रोड़ी मुँह में पिघल रही है ऐसे
मक्खन की टिकिया सूरज के सेंक में जैसे
ठंडे पानी की भर अँजुरि मुँह पर मारे
देह की सारी गर्मी एक मुट्ठी से उतारे
ठंड हुआ मन
मन की सारी गर्मी टूट गई पानी से
पहाड़ों की ठंडी हवा आ कर पसीना पोंछे
कोयल की कुहुक हाँफते बाग़ों के ऊपर गूँजे
रौनक़ हो जाए
तप हुए आकाश पर पक्षी उड़ें बेचारे
तपे हुए सूरज के संग संग चलती चिड़िया
ज़िद में आ कर इस के संग मुक़ाबिला करती
मुँह से गर्म साँस को निकालती
कभी नहीं सूरज को मानती
उस का ज़ोर ही इस का जीना
वो काते तो इस ने सीना

मिट्टी का लोंदा

मैं हूँ मिट्टी का लोंदा
मैं हू मिट्टी का माधो
भूसा मिला है मुझ में
पानी में भीगा हुआ मोह खिला है मुझ में
गारियों के पाँव ने एक-जान किया जब मुझ को
थाली तब पाड़ाव
तसलों में भर लिया आदमी ने हाथों से
इस दालान में मुझे छोड़ गए अकेला
चारों तरफ़ देखता हूँ

सूराख़ ही सूराख़ हैं
गूँगे हैं मुँह स तो कानों स बहरे हैं
दीवारें कमज़ोर, लोनी झर रही
कर रही सिफ़ारिशें
भेज रही सौगातें
कुछ गोरी कुछ काली
मैं हूँ अब घबरा गया
सभी तो ज़ोरावर हैं
मेरा एक सवाल है
कौन अधिक कमज़ोर है
चारों तरफ़ देखूँ मैं
आँखें भर आती हैं
किसे ज़रूरत है ज़्यादा
मातृभाषा डोगरी को ही
अधिक अधिकार है
मुझे अक्षरदान दिया
उस का बड़ा उपकार है
लग गया मैं उसी की दीवार से
अब इसे आप के चंदों की
नहीं है ज़रूरत

उषा व्यास

एक ऋतु अनत

मोती बाज़ार
बाज़ार में सड़क सड़क के आसपास
घड़े ही घड़े सुराहियाँ मटके
लाल लाल कोरे नए नकोर कपड़ों में
बसी हुई है
कुम्हार के चक्के की घूँऽ घूँऽऽऽ
माथे का पसीना
आवे का ताप
मिट्टी की खुशबू
अनंत तृप्ति अनंत प्यास
जो प्रतीक्षारत है
किसी स्त्री की पारखी उँगलियों की टनक
या टनक

जो अभी बनी हुई है
चूल्हे पर चढ़ी दाल का उबाल
साग में तड़का
फूलते फुल्के की गर्म हवा
रज़ाई में सीवन
पोर में सुई
और सुई में चुभन
साये अभी दूर हैं
अभी तो खिलना है मोतिया
गर्मी की अभी नहीं खिली कलियाँ
आम अभी होने को हैं जवाँ
स्त्री के हाथों का कोमल स्पर्श
अपने आप में एक रंगीन ऋतु है
ऋतु अनत है

पहले स्वाद का सत्य

अँधेरे में बहती एक नदी
रोशनी में डूबता एक पुल
धूप में जलता एक वृक्ष
बारिश में भीगता एक घर
पोर भर गीले सब्जे की चाह में
सूखता तालाब
टूटी हुई खिड़की में पड़ा
दरका हुआ शीशा
और बाल सँवारती स्त्री
माँ की धुँधली नज़र के लिए
सुई में धागा पिरोती लड़की
मुँडेर पर छाई काशीफल की
पीले फूलों से लदी बेल
ओखली में धान
धान में चोंच मारते
लाल धारी वाली गर्दन वाले तोते
गिरी हुई दीवार ईंट झरोखा
झरोखे में रोशनी बहाता अकेला दीया
सूर्य कब आएगा
कब आएगा सूर्य
कब गुमशुदा ज़िन्दगी के सारे सच
बन जाएँगे

माँ की छाती से उतरे
पहले दूध का
पहला स्वाद

मोहन सिंह

बर्फ़

एक

बर्फ़ घुल रही है
ये उमस
ये ताव
ये गर्मी
सूरज की नहीं
सूरज तो अभी चढ़ा ही नहीं
ये गर्मी
ये उमस
य ताव
रॉकेट लांचरों और हथगोलों का है
ये ताव
मनुष्य की सोच
और
गमो गुस्से का है
आदमी के भीतर सुलगती
नफ़रतों की आग का है
नसल का
और हदों का सीमाओं का
सूरज तो अभी चढ़ा ही नहीं
बर्फ़ घुल रही है

दो

बर्फ़ चल रही है
इस की चाल में
मस्ती
सौन्दर्य
शबाब
कुछ भी नहीं
और न ही ये

जा रही है
नालों में झरनों में
गरजने
मीठे गीत गाने
इसे
फ़सलों को जीवन देने
या
जवान करने की भी लालसा नहीं
ये तो जा रही है
अपना
ज़ोर जुल्म दिखाने
अपना सिक्का मनवाने
मौत की शीत लहर चलाने
बर्फ़ चल रही है।

तीन

बर्फ़ गिर रही है
पर इस बार
इस के फाहे
रोओं की तरह
नर्म और कोमल नहीं हैं
जिन का स्पर्श
कोमल जवानी का स्पर्श था
और मन में
लाखों आशाएँ
स्वप्न जगाता था
इस बार
इस के फाहे
गोरी के होठों की तरह
नर्म और कोसे नहीं
ये गोलों की तरह हैं
जो सख़्त और
मज़बूत हैं
जो पकने पर आई
फ़सलों को
धरती पर गिरा कर
नष्ट कर देते हैं
इस बार
इस में

वो मीठा मीठा सेंक
और सान्निध्य भी नहीं
जो पस्त हुए
हौसलों का सिर
उम्मीद से बुलंद रखता था
और जीने की आशा को
जगाता था।
बस
चुपचाप शर्मिन्दगी है
खामोशी ही खामोशी है
कहीं उद्यम नहीं
हीला नहीं
आह नहीं
उत्साह नहीं
बर्फ़ गिर रही है।

पवित्र सिंह सलाथिया

मेरा अंबर मेरी धरती

मेरा रंग काला रंग
स्याह काला
अफ्रीका के कालों से काला
मेरा जीने का ढंग
मेरा अपना स्व भाव है
तेरा उलाहनों और एहसानों से उगाया हुआ सूर्य
मैं क्या करूँगा
ये तेरा सूरज
मेरा रंग ढंग बदल नहीं सकता
मुझे तुम्हारी तरह
बन ठन कर
चमक कर पालिश हो कर
बाहर निकलने की ज़रूरत नहीं
तुम्हारे दिए मेरे कपड़े
मेरा तन ढाँप सकते हैं
मेरा मन नहीं ढाँप सकते
मेरा मन
मेरा मन जो हुआ

इसे तुम्हारे मशविरे की ज़रूरत नहीं
मेरी दाढ़ी के नीचे छुपे
मेरे फोड़ों के दाग
मेरे लहू का दोष नहीं
तेरे अन्न का दोष है
जिस में मिलावट है
तुम्हारी करतूतों की
जो मेरे रंग से
मेरे काले रंग से
अफ्रीका के कालों के काले रंग से
उज्ज्वल नहीं हो सकती
और तुम अपने निजी स्वार्थों के लिए
जिन राहों पर हक़ जमाते हो
उन राहों को
मेरी कल्पना नकारती है
तेरे परमाणु और मिसाइलों का डर
सिर्फ़ तुम्हारे लिए है
मेरे लिए ये परमाणु सिर्फ़ शब्द हैं
तुम्हारी मिसाइलें हैं मेरी कविताएँ
जिन का वार तुम नहीं सह सकते
और तुम
मेरे अन्नदाता नहीं हो
मेरी मेहनत
मेरे फ़ौलादी कंधों की दौलत
तेरी अन्नदाता है
सुनो
तुम नहीं हो मेरे मालिक
मैं तुम्हारा मालिक हूँ
ये आकाश मेरा है
ये धरती मेरी है।

जितेन्द्र उधमपुरी

धुँधलाई शाम

वादी ख़ामोश है
जेहलम उदास है
विशाल चिनार हैं कुछ सहमे सहमे

वो मीठा मीठा सेंक
और सान्निध्य भी नहीं
जो पस्त हुए
हौसलों का सिर
उम्मीद से बुलंद रखता था
और जीने की आशा को
जगाता था।
बस
चुपचाप शर्मिन्दगी है
ख़ामोशी ही ख़ामोशी है
कहीं उद्यम नहीं
हीला नहीं
आह नहीं
उत्साह नहीं
बर्फ़ गिर रही है।

पवित्र सिह सलाथिया

मेरा अबर मेरी धरती

मेरा रंग काला रंग
स्याह काला
अफ़्रीका के कालों से काला
मेरा जीने का ढंग
मेरा अपना स्व भाव है
तेरे उलाहनों और एहसानों से उगाया हुआ सूर्य
मैं क्या करूँगा
ये तेरा सूरज
मेरा रंग ढंग बदल नहीं सकता
मुझे तुम्हारी तरह
बन ठन कर
चमक कर पालिश हो कर
बाहर निकलने की ज़रूरत नहीं
तुम्हारे दिए मेरे कपड़े
मेरा तन ढाँप सकते हैं
मेरा मन नहीं ढाँप सकते
मेरा मन
मेरा मन जो हुआ

इसे तुम्हारे मशविरे की जरूरत नहीं
मेरी दाढ़ी के नीचे छुपे
मेरे फोड़ों के दाग
मेरे लहू का दोष नहीं
तेरे अन्न का दोष है
जिस में मिलावट है
तुम्हारी करतूतों की
जो मेरे रंग से
मेरे काले रंग से
अफ्रीका के कालों के काले रंग से
उज्ज्वल नहीं हो सकती
और तुम अपने निजी स्वार्थों के लिए
जिन राहों पर हक़ जताते हो
उन राहों को
मेरी कल्पना नकारती है
तेरे परमाणु और मिसाइलों का डर
सिर्फ़ तुम्हारे लिए है
मेरे लिए ये परमाणु सिर्फ़ शब्द हैं
तुम्हारी मिसाइलें हैं मेरी कविताएँ
जिन का वार तुम नहीं सह सकते
और तुम
मेरे अन्नदाता नहीं हो
मेरी मेहनत
मेरे फ़ौलादी कंधों की दौलत
तेरी अन्नदाता है
सुनो
तुम नहीं हो मेरे मालिक
मैं तुम्हारा मालिक हूँ
ये आकाश मेरा है
ये धरती मेरी है।

जितेन्द्र उधमपुरी

धुँधलाई शाम

वादी ख़ामोश है
जहलम उदास है
विशाल चिनार हैं कुछ सहमे सहमे

मैला हो गया है धूप का दर्पण।

बेख़ौफ़ घूमते गलियों में
कुछ बदनाम चेहरे
नोच रहे
ज़ाफ़रान के फूलों की गंध
दरवेश पहाड़ियाँ अब कुछ कहती नहीं।

काँप-काँप रहा
डल का पावन नीला जल
लहरों में हो रही हलचल
नहीं सँभलतीं
नन्हीं-नन्हीं किश्तियाँ
हवाएँ खुलेआम करती हैं सरगोशियाँ।

कौन बाँध गया मेरे शहर के गले में
उजड़ी धुँधलाई शाम
एक ठंडी पथराई शाम?

अज्ञात दूरियों का आकाश

तुम एकाएक
हो गई कितनी बड़ी
अपनी परछाईं से भी बड़ी
तुम्हें आकार, विस्तार मिला
और मैं
सिमटते सिमटते
बौना हो गया हूँ

हो सकता है
कल तक बिखर जाऊँ
हवाओं में
पीले गुलाब की पत्तियों की तरह।

तुम धीरे-धीरे
उतर रही फूल की पंखड़ियों में
बिखेर रही
रूप यौवन की गंध
लज्जा की लालिमा।

नहीं जानता
किसलिए बँध रहा हूँ मैं

अपने आप
अनाम रिश्तों में
और
जी रहा इन
अनाम रिश्तों की कोख से
जन्मी नंगी अनुभूतियाँ।

हालाँकि
तुम्हारे और मेरे बीच
फैला है एक
अज्ञात दूरियों का आकाश।

प्रद्युमन सिह जद्राहिया

भाख (डोगरी गाने की एक विधा)

आम पके आम पर शहतूत पके झुरमुट में
खाने वाले दूर गए हम हुए हैं क़ैद यहाँ
तारों की रोशनी में चोरी चोरी पहाड़ी की चोटी पर
काटती हूँ घास
कोई नहीं साथ खड़ा होता कठिन बेला में
पानी भरने जाती हूँ तो खाँसते हैं लोग
बड़े निर्दयी लोग साथी आग लगे
बिना जल वाले इस प्रदेश में
बात-बात पर ताने देते बुराई से नहीं डरते
खाते-पीते देख दुख करने वाले जल मरते
लोग सोते सुंदर शैया पर हम ढीली खाट पर
अकेली का जीवन जैसे साँस अटकी गले में
मन होते जा बैठूं कहीं ठंडी छाँव में
कैसे जाऊँ मंडी राह में बैठे मियाँ बातें करते हैं।

अरविन्द

झुर्रियाँ

मेरी माँ
मैं हिम्मत करके

आज गिनने लगा हूँ
तुम्हारे चेहरे की झुर्रियाँ

एक झुर्री वो
जब तेरे बापू ने
अपने पिछवाड़ से उखाड़ कर
तुम्हें दूसरे के आँगन में रोपा था

एक झुर्री वो
जब मैं तेरे पेट में
तेरा खून पी पी कर
बढ़ता रहा था

एक झुर्री वो जब मैं ने
तुम्हारी छाती से
तुम्हारे मुँह की रौनक
पी ली थी

एक झुर्री वो
जब एक लड़की ने
मुझ तुम से छीन लिया था
मेरी माँ
और पता नहीं कितनी झुर्रियाँ हैं
आज मैं हिम्मत बटोर कर
तुम्हारी झुर्रियों के नीचे
वो लड़की ढूँढ रहा हूँ
जो समय की पर्तों के नीचे
दफ़न हो गई
खत्म हो गई
जो बड़े चाव से त्यौहार मनाती थी
नवरात्रों में तवी में नहाने आती थी
जौ बोती थी
रस्सी फलाँगती पत्थरों से खेलती थी
त्यौहारों के लिए रंग
दुपट्टे के लिए किनारी
तवी पार से रंगीन गोल पत्थर
मैं सभी तुम्हें ला कर दूँगा माँ
तुम सिर्फ़ एक बार वो लड़की बन जाओ
माँ
सिर्फ़ एक दिन के लिए

आनंद यादव

अंतिम जोड़ी चप्पल

गाँव जाना था। चप्पल खरीदने के लिए पुणे के लक्ष्मी रोड पर भटक रहा था। जगमगाते सोने चाँदी के गहनों की दुकानों के पास ही जूते, चप्पलों की दुकानें भी थीं। जूतों को आभूषणों सा सजाया गया था। किसी कीमती वस्तु की तरह सुंदर-सुंदर चप्पलें निकाल कर नौकर कुर्सियों पर आराम से बैठे ग्राहकों के पैरों में पहना रहे थे। जिस प्रकार माएँ शिशुओं को हौले से कपड़े पहनाती हैं, वैसे ही पैरों में नौकर चप्पलें पहना रहे थे। मालिक भी ग्राहकों के पैरों को मूल्यवान समझते हैं।

चप्पलों के नाप, रंग, आकार पैरों की बजाय मन में ठीक जँचने पर ग्राहक भौंहें ऊपर चढ़ा कर देख रहे थे। नौकर झुक कर कीमत के पहले 'सिर्फ' शब्द लगा रहे थे और पैरों के गहने पैक करके बड़े अदब से दे रहे थे। कीमत सुनते ही मैं भीतर-भीतर दहल जाता था। एक-एक जूते की कीमत का मतलब था खेतों में मजदूरी के लिए जाने वाले मेरे पिता के पूरे महीने का वेतन। अर्थात् बाबूजी यदि साल भर बिना नागा काम करें तो वर्ष में बारह जोड़ी जूते खरीद सकते हैं। मेरे घर में हम आठ भाई-बहन। माँ और बाबूजी समेत दस। इस तरह घर के सभी सदस्यों की चप्पलों के लिए पिताजी को सारी जिन्दगी ही खटना पड़ेगा। ये चप्पलें भी उन के पैरों में पत्थर-ढेलों में सिर्फ पाँच-छह महीने ही चलेंगी। इतनी नाजुक हैं। ऐसी चप्पलें कैसे खरीद सकते हैं। सभी मजदूरों को जो मिलता है वही बाबूजी को मिलता है। एक बात ठीक हुई। चमारों की चप्पलों का यहाँ सम्मान है। महँगे कपड़ों और सोने-चाँदी की दुकानों के पास इन्हें सजा कर रखा है। चप्पलों की हैसियत आभूषणों तक बढ़ गई है। गाँव में चमारपाड़ा है दिसा मैदान के पास। जूतों को कोई पादत्राण नहीं कहता। वहाँ उसे तिरस्कार ही मिलता। पैर का जूता पैर में भली। ऊँचा कर कोई उसे अलंकार समझ सजा कर न रखता। वे सारे गाँव की गंदगी पार कर, खेत-खलिहान भटक आते। वहाँ उन को उतनी ही कीमत। उन के नसीब में घर से मोटर, मोटर से ऑफ़िस और फिर ऑफ़िस के कालीन और हर चौथे दिन पॉलिश वाले लड़कों की सर्विस कहाँ थी? लक्ष्मी रोड की आलीशान दुकानों पर मेहता, बनातवाला के नाम झलकते हैं। चप्पलों पर बाटा की बँधी सील। चमारों के ऐसे नाम नहीं होते। चमार को इस लक्ष्मी रोड पर कौन आने देगा? 'लक्ष्मी' का रोड!

यहाँ चप्पल लेनी ही नहीं चाहिए। चप्पलों के लिए इतने पैसे देना मेरे लिए संभव नहीं। ऊपर से यह सब दिखावा। चार महीने इस्तेमाल करने पर रोज़ टूट जाती हैं। रोज़ एक-दो घंटा चप्पल मरम्मत में निकल जाता है। पचासों बार टाँके लगवाने पड़ते हैं। गाँव जा कर ही खरीदना भला।

दुकानों में घूमते हुए मन घिसटता रहा। चप्पल बिना खरीदे ही लौट आया। घर में हम चारों की चप्पलों का दो-ढाई वर्ष में एक ढेर ही लग गया था। गाँव जाते समय उन सारी चप्पलों को एक थैला में ठाक से रख लिया। दूसरे दिन गाँव के लिए रवाना हुआ। चप्पलों की थैला साथ थी। पत्नी की ससुराल और मायका एक ही गाँव में होने के कारण उसे उस के घर पहुँचा आया और रात आठ-नौ के आसपास घर पहुँचा। भाई-बहनें प्रतीक्षा कर

रहे थे। खाने के लिए रुके थे। घर पहुँचते ही छोटी फूली ने मेरे हाथ से थैली लगभग छीन ही ली।

'उस में खाने की कोई चीज़ नहीं है री! टूटी चप्पलें हैं।' उस के मन की बात जानते हुए मैं ने कहा।

'उन्हें क्यों इधर ले कर आया?' माँ को आश्चर्य था।

'ले आया, बस्स।' मैं हाथ-मुँह धो कर आया। वह चाय बनाने गई।

'रुको तुम्हें चप्पल दिखाता हूँ। कह कर मैं ने थैली खोली।

'राम राम, यह सब तेरे ही घर की है?'

'हाँ।

'अच्छी हैं रे। कहीं अँगूठा टूटा है, तो कहीं सिलाई उखड़ गई है। सिलाई कर आराम से पहन सकते हैं।

फिर सब यह देखने में व्यस्त हो गए कि किस के पैर में कौन सी चप्पल ठीक बैठती है। सब अपनी चप्पलों में खो गए। उन के रंगीन होने का कुतूहल भी था। मेरे पैर के नाप की बाबूजी के पैरों में ठीक बैठेंगी, यह मुझे मालूम था। वह जोड़ी भी मैं साथ लाया था। पैरों में दूसरा जूता था ही। उसे भी अब फेंकना ही था। टूटी चप्पलों की माँ की कल्पना कुछ और थी।

एड़ी पूरी तरह से घिस कर आधी रह गई हो, आधे का भी तल्ला घिस जाने पर उस पर पुराने जूते का तल्ला लगा कर सी लेना वह भी घिस-घिस कर उन में भी यदि छेद पड़ जाएँ, अँगूठा टूट-टूट कर बने बड़े छेदों में भी थिग्गल सी कर अँगूठा लगाना वह भी घिस कर जब सिलाई करना भी असंभव हो जाए तब उसे टूटी चप्पल कहती। ऐसी टूटी चप्पल मजबूरी में अनिच्छा से फेंक देती। ऐसी एक भी टूटी चप्पल इस में नहीं थी। इस कारण भाई-बहनों को इन चप्पलों को देख कर नई चप्पलों का ही आनन्द हुआ।

भोजन के समय माँ ने बताया, 'चप्पलों पर अकारण पैसा खर्च मत करो। अतिरिक्त पैसों की बचत करो। इस तरह मत उड़ाओ। एक जोड़ी जूता फट जाने पर ही दूसरा खरीदो। मैं 'हाँ हाँ। कह रहा था। शहरों की ज़िन्दगी से वह वाक़िफ़ नहीं थी और मेरे पास सादगी भरी मानसिकता का सामर्थ्य नहीं था। धीरे धीरे मैं पुराना सब कुछ भूल कर शहरी जीवन का शिकार होता जा रहा था।

सुबह उठ कर माँ ने भैंस का गोबर साफ़ कर दूध दुहा। दूध निकाल कर, टूटी चप्पलों की थैली उँड़ेल कर बैठ गई। एक-एक जोड़ी कतरों से बाँध कर रखी, 'यह शिवा के लिए, यह हिरी के लिए, यह लक्ष्मी के लिए,' कहते हुए थैली में रख कर आने लगी।

'कहाँ जा रही है माँ? मैं ने सहजता से पूछा।

'तुका चमार के पास हो आती हूँ।'

'मैं भी आता हूँ ना। मैं भी पैरों का नाप दे दूँगा। चार-छह दिन में वह जूते बना देगा?'

'बना क्यों नहीं देगा।

मैं कपड़े पहन कर उस के साथ हो लिया। जाते-जाते यूँ ही पूछा 'तुका चमार कौन-सा?'

'हमारा पुराना चमार ही। गोरा तुका, मालु के बाग के पास बैठता था याद है?

'हाँ ..हाँ. अब भी है वह?

'हाँ है पर अब बहुत बूढ़ा हो गया है।

पचीस-तीस वर्ष पूर्व के दिन याद हो आए। नौ-दस वर्ष का रहा हूँगा। तुका चमार को पिताजी ने आपसी लेन-देन पर तय कर लिया था। उन दिनों पिताजी दूसरों के खेत बटाई पर करने के लिए लेते थे। चमार का काम अक्सर ही होता। मैं मोट के लिए चमड़े का टुकड़ा लाने, टूटे चाबुक का छोर लगाने टूटी चप्पल ठीक कराने के

लिए उस के पास जाता था। पहले दिन शाम को यदि मोट लगाना तय हो तो पिताजी मुझे सुबह उस के घर दौड़ाते 'जा रे, देख आ तुका ने मोट लगा दी है या नहीं! यदि ठीक न की हो, अपने सामने ठीक करवा लेना। कहना, पिताजी पीछे-पीछे आ रहे हैं। अभी मोट ठीक कर दो। बगीचे में ले जाना है। मोट जोतनी है तब तक मैं आता हूँ। यदि रात को ही ठीक कर लिया होगा, तो भागते हुए मेरे पास आना बताने के लिए।

'हाँ' कह कर मैं निकल जाता।

कभी तुका स्नान कर दुकान में लगे सभी देवी-देवताओं के फ़ोटो को घंटी बजा कर अगरबत्ती लगाता। गोरा शरीर, कसा हुआ बदन। दाढ़ी रोज़ बनाता। धोती धुली हुई। जनेऊ पहनने पर ब्राह्मण लगे, इतना साफ़ सुथरा रहता। बातचीत में चतुर था। कभी-कभार काम में व्यस्त भी होता।

दुकान में खूँटियों के ऊपर रंगीन तस्वीरों की क़तार थी। सब देवी-देवताओं के फ़ोटो। तीनों दीवारों पर पसरे हुए। फ़ोटो के नीचे मज़दूर चमार नीचे गर्दन गड़ाए चमड़ा काटते राँपी तेज़ करते सिलवट ठीक करते, चमड़े के टुकड़ों की वेणी बनाते, कोई सिरेस चिपका कर तल्ला बिठाते। दुकान घर में ही थी। पत्थरों के बड़े कमरे थे। सड़क से लगा बरामदा ही दुकान थी। सामने तख़्तियाँ लगी होतीं। सुबह की खुली दुकान रात को तख़्तियाँ लगा कर बंद होती। दीवारों पर सफ़ेदी होती। दुकान के ऊपर पीला चमड़ा सूखता होता और नीचे काम की व्यस्तता काम ही काम था।

एक ओर कुर्सी डाल कर तुकामा सारे काम पर नजर रखता। दुकान पर आए लोगों या ग्राहकों से बतियाता रहता। आगंतुक बेंच पर बैठते।

पाँच-छह साल तक वह हमारे लेन-देन पर कार्य करता रहा। ऐसे कई किसान उस के ग्राहक थे। उसे एक के बाद एक लड़कियाँ ही थीं। लड़का हो, इस के लिए कई मनौतियाँ माँगता। बेटियाँ सुंदर थीं। इधर उधर भटका करतीं। दरवाज़े पर ही गोटियाँ खेलतीं। पारू मौसी कभी-कभी दुकान से लगी दीवार से टिक कर बैठती। छरहरे बदन की, सीधी नाक वाली, पचकोणी चेहरा था उस का। पान खाती। मुँह हमेशा रंगा हुआ। हँसते हुए बोलने की आदत थी। लालज़र्द जीभ होती। कभी-कभी बग़ीचे की ओर कुछ माँगने निकल पड़ती। तब लगता कि बग़ीचे की सुकोमल मालकिन ही आ गई है। काम करते लोग, आने-जाने वाले चप्पलों के ग्राहकों से बच्चियों से घर हमेशा भरा भरा रहता।

सातवाँ बेटा ही हुआ। पैदा होते ही तुकामा ने सारे चमारपाड़ा को छठी का भोजन खिलाया। हम से गेहूँ और मक्के का आटा पहले ही ले कर छठी की व्यवस्था की। सौ के क़रीब पत्तलें चमारपाड़ा के कोने पर पड़ी थीं।

इन सारी कल्पनाओं में मैं डूबा हुआ था आज तुकामा कैसा दिखता होगा पारू मौसी कैसी होगी बच्चियाँ कैसी होंगी, उस का बेटा कितना बड़ा हो गया होगा बस यही कुछ सोचता हुआ मैं तुकामा के घर के सामने खड़ा था। दुकान अभी तक नहीं खुली थी। केवल किवाड़ों के दो पट ही खुले थे। भीतर सब शांत शांत सा।

'तुकामा ऽ!' माँ ने बाहर से ही पुकारा।

- 'कौन है?' एक डूबती आवाज़ उभरी।

'मैं हूँ री पारू।'

माँ भीतर गई। पीछे-पीछे मैं गया। बरामदे से भीतर झाँका तो केवल अँधेरा था। दुकान से सजा बरामदा मनहूस लग रहा था। धीरे धीरे भीतर का अँधेरा आकार लेने लगा और वह एक लाठी के सहारे आती जर्जर बुढ़िया बन गई।

'क्यों मालकिन? इतना कहने भर से उस की साँस फूल आई। धूप में घायल गौरेया-सी उस ने आँखें मींच

क्षण-भर रापी रोक कर उसने मेरी ओर देखा। माथे पर पसीने की धार थी। उसे बुढ़ापे में [illegible] पहचान कैसे न होगी? सुबह घर गया था न। उसने ट्रांजिस्टर की आवाज धीमी की। पिता की रोबदार आवाज अब थरथराने लगी थी।

'बुढ़ापे में यह काम क्यों चला रखा है? घर बैठ कर शांति से रहना नहीं होता?'

'घर बैठा कर कौन खिलाएगा? हमारी क्या जमींदारी है? सारा जीवन भर गांव के जूते ठीक किए तो क्या कोई हमें पेंशन देगा?'

'नहीं तो।'

'फिर तुम कैसे कहते हो? ऐसे ही जूते सीते मर जाएंगे एक दिन इसी गटर के किनारे।'

'ऐसा नहीं, तुम्हारा बेटा अब बड़ा हो गया होगा।'

'तब क्या बात थी? उसे मरे तो दस वर्ष हो गए।'

'कैसे?' मैं हक्का-बक्का-सा लगा।

'लिकमा के पैट्रोल पंप पर उस का खून हो गया। क्या करें!' उस ने हकीकत बयान की, 'मेहनत से बच्चे को पढ़ा रहा था। हाईस्कूल की पढ़ाई पूरी होते आई थी। परीक्षा के बाद गर्मी की छुट्टियां लगी थीं। घर बैठ के क्या करें, सोच कर, वहां नए खुले पैट्रोल पंप पर काम करने जाने लगा। रात को उस पंप पर किसी ट्रक वाले ने उस की रकम लूटने की कोशिश की। उस छीना झपटी में उस के सिर पर लोहे की सलाख दे मारी और उस की खोपड़ी फूट गई। दूसरे दिन अस्पताल में वह मर गया। मेरी ऊंचाई का हो गया था वह। पर ईश्वर देख नहीं पाया। उसे लगा यह जोड़ी तोड़ दें। उसे गाने का बहुत शौक था। परीक्षा खत्म होते ही गर्मी में वह इधर उधर घूमता। [illegible] रोजगार के लिए भी जाता। ऐसी कर कुछ पैसे भी कमाता। कभी कपड़े खरीदता, कभी किताबें। उसी में से यह ट्रांजिस्टर खरीदा। बस यही निशानी रह गई है उस की। मैं भी किसी तरह मसाला भर कर इसे जीवित रखता हूं। गाना बजा कर काम करने में अच्छा लगता है।'

'बच्चियों का क्या हाल है? छह बेटियां थीं न?'

'हां, उन का ठीक ही चल रहा है। अपने-अपने घर खट कर पेट भर रही हैं। यह क्या कम है? अच्छे दिनों में पहली चार बेटियां कुछ खाते पीते घरों में दीं। छोटी दो बेटियों के घर वाले बूट पालिश करते भटक रहे हैं बंबई में। सगे भाई हैं दोनों। सोचा मौका आया है तो निपटा दें। क्या करें?' उजड़े वैभव का अफसोस चेहरे पर ओढ़े बिना ही वह सब बता रहा था। उत्पन्न स्थितियों का सामना कर रहा था। हाथ कुछ न लगे तो फिर भी जीने की लालसा खत्म न होती। इधर उस के बारे में मेरी जिज्ञासा बढ़ती रही।

'तुकामा, पहले धंधा तुम्हारा बहुत अच्छा चल रहा था। अब अचानक इतनी खराब हालत कैसे हो गई?'

'मेरे अकेले की बात क्या ले कर बैठ गए? सारा चमारपाड़ा ही जमीन से उखड़ गया है।'

'क्यों?'

'रबड़ की चप्पलें आईं। फिर चमार का माल कोई क्यों ले?'

'मेरा अनुभव तो यही है कि आप का माल ही टिकाऊ है।'

'टिकाऊ चीज कौन देखता है? अब तो बस फैशन चाहिए न। आगे के पुणे, बंबई में फैशन के जूते चप्पलों का कारखाना खुला और हमारा धंधा [illegible] फिर भी शुरू शुरू में ठीक चल रहा था। अब गांवों [illegible] में पक्की सड़कें आ गईं। गन्ने वाले किसानों के पास जीपें आ गईं, मोटर साइकिलें हैं, ट्रैक्टर भी आ गए हैं। आप को क्या बताऊं, ट्रक भी आ गए हैं। किसी न किसी का ट्रैक्टर, जीप, ट्रक रोज कोल्हापुर जाती है। फिर क्या, उसी में

आधे खर्च में कोल्हापुर जाते हैं। सिनेमा देखते हैं। होटल में खाते पीते हैं रंडियाँ सूंघते हैं रबड़ के जूते चप्पल खरीदते हैं। सस्ता कहें तो सस्ता या महँगा चाहें तो महँगा मिलता है। खरीद कर यहाँ आ जाते हैं हम यहाँ अभागे हो गए। दस वर्षों में सब बदल गया। चमार के हाथ से सारा धंधा ही निकल गया। अब ऐसे बैठ कर रबड़ की चप्पलें धागे से सीते हैं। अब के चमार के बच्चों को सल यानी क्या, यह भी नहीं मालूम।'

'पर तुकामा, मैं उन्हीं रबड़ की चप्पलों से ऊब कर तुम्हारे पास आया हूँ। मेरे लिए चमड़े की सादी कोल्हापुरी चप्पल बाँध दो। पहले तुम्हारी बनाई चप्पल जंगल में भी दो तीन साल चल जाती थी। अब मुझे वे तीन-तीन साल तक शहर में टिक जाएँगी। पैरों का नाप देने के लिए ही मैं तुम्हारे पास आया हूँ।

अब पहले के दिन गए साहब। पहले चमार का धंधा डूबता, फिर भी चमड़ा मिलता था। अब वह भी नहीं मिलता।'

'क्यों नहीं मिलता? जानवर तो रोज़ लाखों की संख्या में कसाईखाने जा रहे हैं।

'जाते हैं न। पर सारा माल फोरेन में जाता है। अब यहाँ बस रबड़ का उपयोग रह गया है।'

'मतलब अब चमड़ा नहीं मिलता, है न!'

'वैसे मिलता है। पर महँगा कितना है? इसलिए रबड़ की चप्पलें ही ठीक पड़ती हैं। अब देखिए, आप के लिए यदि चमड़े की चप्पलें बनाएँ तो चालीस रुपए लगेंगे। इतना रुपया कौन देगा? उस की तुलना में रबड़ की चप्पलें गरीबों के लिए दस-बारह रुपए में बन जाती हैं। ऊपर से दिखने में अच्छी।

'पर वह टिकाऊ नहीं होतीं। बरसात में अचानक टूट जाती हैं। मुझे चमड़े की ही चाहिए। कम से कम तीन साढ़े तीन साल तक पैरों की ओर देखने की ज़रूरत नहीं होगी।

'इच्छा होगी तो बनाऊँगा परंतु मुझे तीस रुपए पेशगी चाहिए। चमड़ा लाने के लिए मेरे पास पैसे नहीं हैं। बचे हुए पैसे चप्पल बनाने के बाद दीजिए।'

नाप दे कर उठा। उस ने अपनी गर्दन बहुत झुका ली ट्रांजिस्टर की आवाज़ कुछ बढ़ा दी।

घर आ कर चप्पल के लिए तुकामा को पेशगी तीस रुपए की बात बताई।

माँ झट बोली 'ना रे बाबा उसे पहले तीस रुपए मत देना। पाँच-दस दिन ही तू रहने वाला है। वह यदि "आज दूँगा, कल दूँगा" कहता रहे तो तू क्या कर लेगा? उस के घर में अब जहर खाने के लिए भी पैसा नहीं है। तेरे तीस रुपए से दोनों पति पत्नी घर बैठ कर खाएँगे और तान कर सो जाएँगे। इस से तो अच्छा है कि कोल्हापुर जा कर रबड़ की चप्पल खरीद ले।

'तुकामा ऐसा नहीं कर सकता।

'सारे चमार अब ऐसा ही करते हैं। मेरा जनम बीत गया है रे यहाँ? मुझे उन की आदतें अच्छी तरह मालूम हैं। उस की बात से मैं सोच में पड़ गया। फिर काफ़ी देर तक यूँ ही बैठा रहा। माँ चली गई।

मैं उठा और तुकामा को तीस रुपए दे कर आ गया। तीन दिन में चप्पल तैयार करने का उस ने आश्वासन दिया। तीसरे दिन मैं और पत्नी क़िले की ओर घूमने गए। लौटते समय तुकामा के घर में झाँका।

अच्छा हो गया आप आ गए। मैं आप के घर आने ही वाला था। आज दोपहर को सब कुछ छोड़ कर आप की चप्पल ही बना रहा हूँ। पाँच मिनट बैठिए। पैर का नाप ले कर उस पर वेणी लगाता हूँ।

ऊपर की वेणी तैयार थी। सर्र से उस ने दोनों चप्पलों में उसे गूँथ दिया। उम्र हो गई थी फिर भी हाथ उतनी ही फुर्ती से चल रहे थे।

'पैर में डाल कर देखिए।'

मैं ने चप्पल पैर में डाल ली। उस ने पट्टी का अदाज़ लिया और पैर हटाने के लिए कहा।

'जाइए अब। अब कल सुबह आइए। मेरा आना बच जाएगा और कोई सुधार जरूरी हुआ तो कर दूँगा। चप्पल पहन कर ही आप जाइए और मैं स्टैंड चला जाऊँगा।

'ठीक है।'

मैं और पत्नी बाहर आ गए। अच्छे-ख़राब चमड़े की पहचान थोड़ी बहुत मुझे थी। चप्पल का तल्ला उस ने अच्छा बनाया था। ऊपर का काम भी मन लायक़ हो गया था।

'चप्पल अच्छी बन गई। मुझे पसद आई। पत्नी ने कहा।

'बच्चों के लिए, तुम्हारे लिए एक एक जोडी बनाने के लिए कहूँ? एक बार बनवाई कि तीन साल की छुट्टी।'

'मुझे नहीं चाहिए और न बच्चों के लिए! मुझे ऐसी चप्पलें अच्छी नहीं लगतीं और बच्चे एक ही चप्पल तीन साल पहनते पहनते ऊब जाएँगे। हर दीवाली पर वे नई चप्पल माँगते हैं। ऐसी चप्पलें वे नहीं पहनेंगे।

बच्चों की बात सही थी। उन के मन में गाँव के बारे में और गाँव के लोगों के सबध में प्रेम होने का कोई कारण ही नहीं था। उद्योग प्रधान दुनिया के सिद्धातों को मानने वाले शहर में वे पैदा हुए। जन्म से ही उन के आसपास फ़ैशन और रबड़ की चप्पलें थीं। नई नई चप्पलों का उपभोग उन का स्थायी भाव बन गया था। मेरे लिए यह सभव नहीं था। इस के लिए पैसे बरबाद करने की मेरी मानसिक तैयारी नहीं थी। समय भी नहीं था। तुकामा को छोटी मदद भी हो जाएगी इसलिए मैं बेचैन था। पर मैं वह नहीं कर पाया।

घर आने पर चप्पल बन जाने की बात माँ से कही। वह खुश हुई।

'अच्छा हुआ बाबा, तुका आज भी अपनी जबान निभाता है। सिर्फ उस की पत्नी थोड़ी अच्छी होती तो ठीक रहता।'

'वह किस कारण इतनी बूढी हो गई असमय?'

'पहले से ही उसे थोड़ा दमा है। उम्र के उतार पर और बढ़ता जा रहा है।

'दवा-पानी क्या कुछ होता ही नहीं शायद?'

'जवानी में देखा होगा भरपूर। दमे की क्या कोई दवाई है? जन्म भर पान ही तो खाती रही।

'अच्छा, पान इसीलिए खाती है?'

'और नहीं तो क्या? ऐसे में इकलौता बेटा भी गया। सभी बेटियों की शादी की। पहले का सब कुछ खिसकने पर डगमगा गए। कैसे टिक पाएँगे ये लोग?'

माँ अपनी पिछली सारी बातें भूल कर अचानक भावुक हो कर बोल पड़ी 'सच है।

सुबह उठ कर मैं तुकामा के पास गया। मुझ से भी पहले वह अपने काम में लग गया था।

आइए! बस हो गया देखिए। पाँच मिनट बैठिए। पारू मौसी हाथ मुँह धो कर दरवाज़े से टिक कर बैठी थी। परसों की तुलना में आज तबियत कुछ ठीक थी। मैं बेंच पर बैठ गया।

तुकामा रॉपी से चप्पल को बारीकी से छाँट रहा था। घोंट कर चमड़ा चिकना कर रहा था। नीची नज़रें किए हुए उस का काम चल रहा था। पास पड़े ट्रांजिस्टर ने मीराबाई के धीमी गति के भजन का विरही सुर पकड़ लिया था। तुकामा को ट्रांजिस्टर की आदत लग गई थी। सेल डाल कर वह उसे हमेशा गाता हुआ और जावित रखता है। बेटे की यादों का साथ आवश्यक लगता होगा। पूरे घर का ख़ालीपन उस आवाज़ से भर उठता है।

दरवाज़े के पास ही पुराने जूतों चप्पलों और टायर के टुकड़ों का बोरा फटा मुँह लिए पड़ा था। पास ही मोटर-बैटरी का ख़ाली काला डिब्बा। उस की ओर देख कर मैं ने पूछा 'इस की क्या ज़रूरत होती है?

शत्रुघ्न

यात्रावसान पर भी वर्षा

यात्रा का अंतिम समय आ गया। एक बार और परदेश यात्रा का अंतिम छोर।

काँच के दरवाज़े के इर्दगिर्द लोग जमे हैं। बोर्डिंग क एनाउसमेंट के इंतजार में अधार। एनाउसमेंट सुनते हा वहाँ व्यस्त लोगों की क्यू लग जाएगी।

डिपार्चर लाउज में पंक्तियों म रखी कुर्सियों में से एक में एक तरफ़ कण्णन कुट्टी बैठ गए। यात्रा हमेशा सभी के लिए व्यस्तता ले आती है।

उन के लिए एक प्रकार की थकावट भी।

बीच की पंक्ति में एक युवक और उस की बीवी ने अपना हैंडबैग खोल कर एक बार और चीज़ों को समेट कर रखा। उन के साथ वाली पाँच बरस की बच्ची कुर्सी पर चढ कर नीचे कूदती फिर चढती खेल रही थी। उस के हाथ में चॉकलेट बार पिघल कर उँगलियों से टपक रहा था।

उस के पार बुर्के वाली अरबी औरतें जोर-जोर से बोल रही थीं। अँगूठियाँ और चूडियाँ पहने हाथों ने हवा में ऐसी तसवीरें खींची जो कि भाषा नहीं खींच सकती।

एक बार और परदेश यात्रा का अंतिम अध्याय आ गया है।

काँच की दीवार के पार, रनवे के छोर पर वर्षा हिचकती हिचकती बरसती है। नापसद वर्षा। यह वर्षा किन्हीं स्मृतियों को मन में ले आती और उसे जलाती है। न जाने क्यों।

बचपन में कहीं स्कूल जाने की कोई यात्रा होगी।

सड़क के किनारे ढाबे की गदी काली मज़ों की होगी।

पहाडी पर के काँटेदार झाड झखाडों का कोई छोटा मोटा रहस्य होगा।

नहीं तो इन्हीं थकावटों की ही होगी।

पता नहीं।

आँखें झपकती हैं। कल रात में बहुत देर हो गई। पाँच सितारे वाले होटल के बार में कोई बूढा सितार बजाता रहा। सुनता रहा बैठ कर बहुत देर तक। एयर लाइस वालों का मुफ्त में दिया कमरा। बटुए का भार देख कर बार के बैरे का विनम्र व्यवहार। बूढे की उँगलियों से अनायास बहती रागमालिका।

रात बहुत लबी रही।

यहाँ बैठे सोचने पर लगता है कि सब सपना था, सब माया थी।

उठ कर टॉयलेट के वाश-बसिन पर मुँह धोया। उम्र से ज्यादा पके बालों की तरफ़ देखा। एक क्षण खडा रहा। मुख की प्रतिच्छाया मन में एक निन्दा भरी हँसी निकली क्या?

पीछे बैज वाला युवक सारे दाँत दिखाता हँसा। फिर धीरे से उस ने हाथ फैलाया।

नहीं अपने देश का पैसा अब मेरे पास नहीं रह गया है—अनजाने ही मन में कह गया। इस युवक को डॉलर का ही हिसाब चाहिए। जैसी आप की मर्ज़ी हो।

सब माया है। सब सपना है। कुर्सी पर आ बैठा।

अब यह अकेले-अकेले यात्रा क्यों?—विमला ने पूछा था। विमला की आँखों में मकर-सध्या का कोहरा छाया हुआ था। अब कितने दिन ऐसे रहें—कभी इस डाल तो कभी उस डाल।

साल में एक बार की यह यात्रा एक सपना नहीं तो क्या है? एक महीने लबा सपना।

अनीता और अरविन्द स्कूल का एक और पड़ाव चढ़ने को तैयार खड़े हैं। उन के लिए पिताजी साल में एक बार आ जाने वाले अच्छे मेहमान हैं। है न!

और कितने दिन अनीता के पिताजी यों अकेले

विमला ने पूछा।

विमला के घर-आँगन में आम के पेड पर छोटे-छोटे आमों के गुच्छे थे।

नहीं।

यह यात्रा ज्यादा से ज्यादा पैसा कमाने के लिए नहीं। यह चुस्ती बरक़रार रखने के लिए है जो खो जा रही थी। गाँव की अलाली में बीमार न पड़ जाएँ, इसलिए।

यह मेरी थकावट दूर करने के लिए है।

कहूँ तो समझोगी? कहने की कोशिश ही नहीं की है। जो कुछ कहा है उसे गलत ही समझा गया है।

वर्षा कुछ थम गई। फिर किसी कर्तव्य की तरह वह फिर बरसने लगी।

क्या छींटों के साथ ही यह यात्रा शुरू हुई थी?

बीच की पंक्ति क युवक की पत्नी बच्चे का हाथ पकड़े टॉयलेट की तरफ़ चली। बच्चे के चेहरे और सफ़ेद फ्रॉक के कॉलर पर चॉकलेट बह रही थी।

युवक ने यूँ ही समय बिताने क लिए एक सिगरेट जलाई।

अरबी औरतें थोड़ी देर चुप रहीं। माना फुहारों की ठड असर कर गई हा।

इस छोर पर किसी पुलक में खोई अकली लडकी—बाहरी दुनिया को एकदम भुलाए वह अक्षरों की दुनिया में मानो खो ही गई थी।

आँखें दुख रही थीं। थाड़ा सिर दर्द भी है क्या?

काँच के दरवाज़े पर लोगों का जमघट। विमान पर चढ़न का एनाउमर्मेट किसी आकाशवाणी की तरह हवा में बहता रहा।

यह भीड़ ज़रा कम हो जाए कृष्णन कुट्टी इंतज़ार करते रहे।

बाहर एक जबो जेट यात्रियों के इतजार में कुछ देर स खड़ा था। फूले हुए पेट वाले विकृत पक्षी की तरह।

कृष्णन कुट्टी उठे।

यात्रा शुरू भी एक फुहार के साथ हो हुई थी। कितने साल पहले—अब यों लगता है। तब विमला को जानते तक नहीं थे। कृष्णन कुट्टी अकेले थे इस दुनिया में।

नहीं।

एक अम्मिणी थी।

घर के आँगन में फुहारों में खड़ी अम्मिणी।

हवाई-अड्डे की वर्षा का मन में डाल कर उस एक ज्लती आग बना देने वाली याद है अम्मिणा। अब थाड़ा थोड़ा स्पष्ट हा रहा है।

बहुत पी कर, नींद के बिना तकिए में सिर घुसाए पडे रातो में माथे पर ठडी उँगलियों का स्पर्श हथेली पर ठडे अधरों का स्पर्श।

एक अम्मिणी ही थी जो नींद और जागरण के बीच किसी 'बाधा की तरह नापसदी दिखाए बग़ैर उस के शरीर और फिर मन पर फैल गई थी।

अब पता नहीं अम्मिणी कहाँ है। अम्मिणी का बेटा (या कि बेटी?) भी कहाँ हैं—यह भी मालूम नहीं।

वो सब यादों और सपनों के नीचे दब गया

सीट बैल्ट बाँधने की कोशिश कर रहे थे कण्णन कुट्टी।

अकल दैट बैल्ट इज टू शार्ट फ़ॉर यू!' पास ही मुस्कान बिखराती शीतल आवाज आई।

सफेद में लाल वृत्तों वाली मिडी। कानों पर तारों की बिंदिया जैसी बाली। गर्दन पर छाती की ओर थोड़ी झुकी काली मणियों की माला। काली भौहो के ऊपर, ललाट पर एक छोटा सा लाल बिन्दु। मुख को घेरे फैले हुए घुँघराले बाल।

वह सीट पर पसर कर बैठे। उन्हें लगा कि इस लडकी को कहीं देखा तो नहीं! किसी यात्रा के बीच कहीं? यादें अनुभव और सपने—सब के सब उलझे हुए हैं।

पीछे से एयर होस्टेस ने पूछा 'डू यू वांट ए विन्डो सीट?

लड़की ने सिर हिलाया—नहीं। फिर उसे देख कर मुस्कराई।

सीट बैल्ट को खोल कर ढीला करने के बीच कण्णन कुट्टी ने हँस कर कहा 'बस दिस वाज़ टू लॉंग फ़ॉर मी!

लड़की फिर से एक बार मुस्करा कर उन के पास वाली आइल सीट पर बैठ गई। फिर उस ने सिर पीछे मोड कर पाज़ेब बजाते हुए पैर हिलाया। उस के गोरे पैरो में लाल चप्पल थी।

कृष्णन कुट्टी ने उस एक बार और देखा। चेहरा देखने से लगा बारह या तेरह साल की होगी। पर उस से ज्यादा पुष्ट शरीर।

वह पैर हिलाते हुए ही सिर घुमा कर उसे देख कर फिर मुस्कराई।

'माई डैडी ऐंड मम्मी आर वर्किंग देअर, यू नो! आयम ट्रैवलिंग अलोन।

उस के शब्दों में अभिमान भरा हुआ था। वह धीरे से मुस्कराए।

अनीता और अरविन्द एक बार छुट्टियों में आए थे। एयरपोर्ट पर जब उन का इतज़ार कर रहे थे तब विमला किसी अनिष्ट से चिन्तित हो बीच-बीच में कह रही थी 'बच्चों का रास्ते में कुछ तकलीफ़ न हो तो ग़नीमत है।

अनीता ने लिखा था। आते वक्त जो चीजें लानी थीं उन की लिस्ट। पेटी खोलने के पहले ही वह पास आ कर शिकायत के लहजे में कहने लगी 'पिताजी सब चीजें लाए ही नहीं होंगे। कुछ न कुछ ज़रूर भूल गए होंगे।

हँसने की कोशिश की। लिस्ट जेब में डाल कर वह बाजार से सब चीज़ें खरीद लाए थे।

पर अरविन्द को कोई ज़रूरत नहीं। वह बाहर कहीं गया था।

विमान के पहिए धीरे धीरे घरघराने लगे।

ऑक्सीजन मास्क और लाइफ़ जैकेट का विवरण शुरू होते ही कण्णन कुट्टी ने सामने की सीट के थैले से इनफ्लाइट मैगज़ीन उठाई।

अकल मे आई सिट दअर? उस के पास खाली विन्डो सीट की ओर इशारा करके लड़की ने पूछा।

'हूँ! वह मान गया।

लड़की जल्दी से सीट बैल्ट खोल कर उस सीट पर आ बैठी और सामने को झुक कर खिड़की से बाहर देखने

लगी।

'कैबिन क्रू प्रेट देअर स्टेशस!'

कृष्णन कुट्टी ने सिर झटक कर उस से कहा 'फ़ासन युअर बैल्ट।

'आ हेल! उस न थोडा पीछे हट कर बैल्ट बाँधी।

विमान की गति बनी।

बाहर तब भी पानी की फुहार थी।

आ इट इज जस्ट ब्यूटीफुल। लडकी ने उस का मज़ा लेते हुए न जान किसी से कहा।

विमान न जब आसमान को छुआ तो उस ने सीट बैल्ट खोली। इनफ्लाइट मैगज़ीन अलग रखी। फिर सिर टिका कर आँखें मूँद लीं। पहले जो सिर दर्द का एहसास हुआ था वह ठीक ही था। नींद की कमी ही वजह रही होगी, वरना सिर चकराने की उस को कोई बीमारी तो है नहीं।

या है?

पहले उस डॉक्टर ने जिस न उसे देखा था कहा था कि थोड़ा सा ब्लड प्रेशर है। इस क अलावा कोई बीमारी नहीं।

यह पहले की बहुत पहले की बात है।

'अंकल आर यू आलसो ट्रैवलिंग अलोन?

'हूँ। उस ने आखें खोल, चेहरा मोड़ के हामी भरी।

'युअर वाइफ़ ऐंड चिलड्रन?'

'ऐट होम।

'ह्वेअर?

'केरला।

वह एकाएक हिल गई।

अंकल केरल म हैं? आप मलयाळम जानते हैं?'

'जी जानता हूँ।

'स्कूल में अंग्रेज़ी ही पढ़ी जा सकती है। घर पर डैडी को भी मलयाळम बोलना पसंद नहीं। मम्मी कभी-कभी बोल लेती हैं। नानी ही उस पर ज़ोर देती हैं। मुझे कितनी ही कहानियाँ सुनाई हैं। मैं ने कुछ मलयाळम गाने भी सीखे हैं मम्मी को सुनाने के लिए।

'बेटी तुम्हारा नाम क्या है?

'निशा। पर मुझे यह नाम पसन्द नहीं है। लक्ष्मी या मीनाक्षी जैसे नाम अच्छे हैं। है न? हमारी क्लास में एक लक्ष्मी है। लंबे बाल और बड़ी आखों वाली।

उस ने फिर कुछ सोच कर बाहर देखा। उस की घनी भौंहों के नीचे एक छोटी सी चमक दिखाई पड़ी।

'निशा किस कक्षा में हो?

'ऊँ! लगा कि उस न यह सवाल सुना ही नहीं। उस ने दुहराया।

'एथ में।

अब वकेशन है?

'ऊँ ऊँ .. वह विचारों की दुनिया से बाहर आए बिना बोली 'मैं न छुट्टी ली है। टैन डेज़। डैडी मुझ दरअस

चाहते थे। उस की छाती को उठते गिरते उन्होंने देखा। उन्हें तुरत ऐसा लगा कि ऐसे देखते रहना ठीक नहीं है।

'पर आज हॉलिडे है। किसी मर हुए नैशनल डिगनिटरी का बर्थ डे।

'आज गाधी जयती है।

'ऊँ समथिंग लाइक दैट। क्लास में सर्कुलर आया था।'

उस ने फिर यादों स जागते हुए पूछा अकल विनोद अच्छा नाम है क्या?'

'हाँ है तो!'

उस के चेहरे पर हँसी खिल गई।

'मेरे फ्रेंड्स को यह नाम पसद नहीं। अजीब लोग।'

'सभी नाम अच्छे हैं। निशा भी तो अच्छा नाम है। ख़ैर, यह विनोद कौन है?'

उस ने जवाब नहीं दिया। कपोलो पर लालिमा छा गई।

कॉन्वेंट के गेट के बाहर किसी लड़की की कामल उँगली का छूते हुए पास खड़ा दुबला पतला युवक। उस के चेहरे पर दुनिया जीतने का भाव।

नहीं। यह तसवीर सही नहीं होगी। इस के कपोलों की लालिमा उस से ज्यादा कुछ कहती है।

निशा उठ कर उस के घुटने को छूते हुए रेल सीट पर ही आ बैठी।

अब देखना कुछ नहीं है। ख़ाली आसमान है।

उस की हँसी अधरो के बीच तक आ कर रुक गई।

आसमान!

आसमान हमेशा उन के लिए एक आश्चर्य रहा है खिडकी क बाहर देखते हुए कृष्णन कुट्टी न सोचा। बादलों के ऊपर का यह नीला आसमान। मन भरे खड़ा यह आकाश जो कुछ बोल नहीं पाता। अतिलोल यह आसमान।

'वुड यू लाइक टु हैव ए ड्रिंक सर! एयर होस्टेस की कृत्रिम आवाज़। उस की आँखें कुछ धँसी सी थीं और भौंहें रँगी हुईं।

'जस्ट ए ग्लास ऑफ़ वॉटर, प्लीज़।' उन्होंने उस की लखियन आँखों की ओर देख कर कहा। फिर अचानक निशा से बोले 'ह्वाट अबाउट यू, निशा?

आई विल हैव ऑरेंज जूस।

एयर हास्टेस ने लिपिस्टिक से गीले होंठ खाले।

उस ने ठडा पानी थोड़ा थोड़ा पीते हुए, ऑरेंज जूस पीती निशा को देखा। सपनों की तरलता उस की आँखों से अब ग़ायब हो गई थी। उस के बदले एक अलस विषाद था।

नानी ने कहा था 'मेरे कृष्णन कुट्टी क पूर्व जन्म का पाप है जो जीने के लिए परदेश जाना पड़ा।

क्या नानी ने कहा था? या कि यह उस का सपना था जो उस ने कभी देखा था। जब कई सपने देखे जाते हैं तब सपने और सच्चाई आपस में गड्ड-मड्ड हो जाते हैं।

'मेरे डैडी को आप जानते हैं? वहाँ वाटिज़ इट्ज नेम स्टार एंटरप्राइजेज़ में हैं।

'क्या नाम है?'

'मुकुदन।

'सुना है।'

डैडी के कई फ्रेंड्स हैं। जब उस ने यह कहा तब उस के होंठों के छोर पर अहकार की छोटी-सी डाली फूल

उठा।

'ऊँ।

आसमान की अनतता से हो कर, किसी कर्त्तव्य की तरह विमान बहता रहा। उस का शोर उस के कानों में बजता रहा। आरोह और अवरोह के बिना एक ही धुन पर चलता गाना।

लगा कि यह शोर बद नहीं होगा।

एयर होस्टस गिलास ले गई।

विमान के पख से टकरा कर रोशनी का एक टुकड़ा जब आँखो पर पड़ा तब उस ने खिड़की का प्लास्टिक ढक्कन गिरा दिया।

चाहा कि थोडा सुस्ताऊँ। नहीं जब सपनों के झूले झूल रहे है तब कैसी नींद?

विमला के घर का फ़ोन नबर बदल गया है। कहीं भूल न जाए, यह सोच कर विमला ने लिख कर पेटी में कहीं डाला है। 'पहुँचते ही फ़ोन करना' वह बराबर कहती रही।

लच लाया गया तो उन्होंने कहा नहीं चाहिए।

'यू कैरी ऑन निशा।

अंकल का चेहरा एसा क्यों?'

'नींद की वजह से है।

आ के। यू टेक रेस्ट।

कृष्णन कुट्टी ने आखें मूँद कर सिर झुका लिया।

विमला का कहना ठीक है। अब कितना समय इस पार और उस पार रहेंगे? फ़ैसला उसे ही करना है। चाहे तो कल ही लौट सकता है। घर के आँगन में आम के पेड़ तले स्कूल से आते बच्चो के साथ खिलवाड़ में लग सकता है।

अकल शायद सो गए? निशा ने धीरे से कहा। उस ने लंच लिया होगा। धँसती आँखों वाली एयर होस्टेस क्या उन्हें देख कर ही फिर से हँस रही है?

कृष्णन कुट्टी कुछ बोले नहीं।

हाँ।

खिलवाड करूँ। उन्हें कुछ कहानियाँ सुनाऊँ। जब वे ठहाका मार के हँसें तब उन्हें देखने का मज़ा लूँ।

लाल शाम के अँधेरे में विमला का हाथ पकड़ बरामदे में बैठूँ।

सवेरे देर तक सोएगा।

फिर?

फिर, कुछ नहीं।

निशा ने पैर पसार कर, धीरे से उन के कंधे पर सिर रख दिया। थोड़े से भार से उन का कंधा कुछ दब गया।

सवेरे उठ कर अरब कंपनी चलाना वहा की छोटी मोटी समस्याएँ हल करना नहीं तो उन्हें बढ़ा चढ़ा कर अरबों के सम्मुख प्रस्तुत करना।

पहली तारीख़ को बड़ी रक़म वाला ड्राफ्ट विमला को भेजना। विमला की ज़रूरत के लिए भी उसे ख़र्च न कर जमा करते जाना।

शाम की तनहाई में फ्लैट की ठडक में बर्फ़ के टुकड़े डाल कर विस्की पीते रहना।

बीच में कभी-कभी ख़तों के आदान प्रदान में विछोह का दुख बखान करना।

फिर?

फिर भी कुछ नहीं।

वह जान गए कि कंधे पर भार ज्यादा पड रहा है।

फिर वह सपनों के आसमान की सैर करते रहे। विमान का उतरना और नीचे आना। वे कुछ भी जान नहीं पाए। वह सपना जो देख रहे थे। मरुस्थल में विमान के बाहर, चाँदी के हल्क तारों की तरह पानी बरसने का सपना।

निशा ने देर तक उन्हें झकझोर कर जगाया, लेकिन वे घने आसमान को छोड़ जागना नहीं चाहते थे।

यह—यह कोई गीला सपना है।

या कि यह वर्षा एक सच्चाई ही है? या विमान मरुस्थल में नहीं उड पा कर लौट कर अपने देश में आ उतर गया है क्या? निकलते वक्त वर्षा के होने की याद है।

ओ!

अब कहाँ जा रहा है? नौकरी की जगह के झझटों की ओर, कि विमला के घर की अलसता की ओर?

क्या यह अनीता पुकारती है?

विमला है?

ललाट पर यह ठडा स्पर्श पहले कभी हुआ? या कि उस का सपना देखा है?

फिर वह जागे। उन की अधखुली आँखों की तरफ़ निशा की मीठी हँसी।

अकल आइए! क्या मैं पकड़ूँ आप को?

उन्होंने निषेध में सिर हिलाया। फिर धीरे से उठ कर उस के घुँघराले घने बालों के पीछे हो लिए।

बाहर वर्षा नहीं थी।

मलयाळम से अनुवाद **वी डी कृष्णन नंपियार**

हृदयेश

शिविर

जिन को शिविरार्थी कहा जाता था वे वहाँ इकट्ठा होन लगे थे, अपन ठहरन के स्थान स आ आ कर। हवा में सालन और ठंडक था। सूरज आसमान में अपनी उपस्थिति जताना चाह रहा था किन्तु इसे जताने के लिए अभी बादलों स उसे जद्दोजहद करनी पड रही थी। यों इधर भी बरसात का मौसम अक्तूबर तक समाप्त हो जाता है किन्तु फ़रवरी के इस महीने में भी बरसात वाले क़िस्म का पानी दो रातों से गिर था। स्वाभाविक था कि तब सर्दी भी बढ़ जाती। शिविरार्थियों के पास जो भी ऊनी कपड़ थे, वे उन्होंने पहन रखे थे।

केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय हिन्दीतर नवलेखकों के शिविर देश के विभिन्न अहिन्दी भाषायी क्षेत्रों में समय-समय पर लगाता था। उद्देश्य था कि एक तो इस से संपर्क भाषा की पौध हर स्थान पर लगेगी, दूसरे अनेकता में एकता तथा मानवीय मूल्यों के प्रति समझदारी और आदर वाली दृष्टि विकसित होगी। साहित्य ऐसे कार्य कुछ ज़्यादा सही ढंग से करता है।

इस बार मणिपुर की राजधानी इंफाल में वैसा शिविर आयोजित था। स्थान था 'मणिपुर हिन्दी भाषा परिषद' का भवन।

शिविरार्थी अभी बाहर ही खड़े थ, कुछ अंदर बरामद में और कुछ गेट के पास। गेट से होटल दिखाई देता था जो बमुश्किल सौ मीटर के फ़ासले पर था। उस होटल में ही मार्गदर्शक साहित्यकार ठहरे हुए थे। कुछ शिविरार्थी साहित्यकारों के प्रति सम्मान प्रकट करने के लिए पहले दिन होटल गए थे। होटल के हर कमरे में टी वी हीटर, मेज़ कुर्सियों का व्यवस्था थी। असम्बला रोड पर स्थित होने के कारण उस के आसपास के परिवेश में एक अभिजातपन की ठसक थी। शिविरार्थियों को दूर पुरानी बस्ती की एक धर्मशाला में ठहराया गया था जहाँ सुविधा के नाम पर बस अँधेरे में बच सकने वाली बिजली की ही व्यवस्था थी। आवास की मद में उन पर जितना व्यय होना चाहिए, उतने में वहाँ उस से अच्छा स्थान मुहैया कराना मुश्किल था।

उन के लिए अहम बात यह थी कि साहित्य के क्षेत्र में प्रवेश के लिए उन को उपयुक्त पात्र मान कर शिविर में बुलाया गया था।

बरामदे के शिविरार्थियों में से भी कई गेट के पास आ कर खड़े हो गए और वे भी सडक ताकने लगे।

बाज़ार की ओर से दो साहित्यकार प्रकट हुए। वे छोटे छोटे डग रखते हुए आ रहे थे। उन के चेहरों पर डट कर नाश्ता पानी करने से आया तृप्ति का चिकना भाव था।

पाँच मिनट बाद दूसरी तरफ़ से दो साहित्यकार प्रकट हो गए। उधर भी बाज़ार था अच्छे क़िस्म वाला हो। उन के साथ केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय से भेजा हुआ वह सहायक निदेशक था जो शिविर का संचालक भी था और पर्यवेक्षक भी। उस की आठ-दस कहानियाँ और कुछ कविताएँ सरकारी अर्द्ध सरकारी रिसालों में शाया हो चुकी थीं। इस बिना पर वह अपने को अफ़सर के साथ साथ साहित्यकार भी मानता था और उस के लिए भी यह बताना मुश्किल था कि वह अफ़सर बड़ा है या साहित्यकार। उस ने आने पर शिविरार्थियों से पूछा कि क्या वे सब आ

गए हैं?

'जी सब आ गए हैं'। एक शिविरार्थी ने कहा।

'तो फिर देर क्या की जाए। अदर चला जाए।

वे सब एक कमरे में आ गए। दरअसल परिषद के भवन में जूनियर क़िस्म की एक पाठशाला लगती थी और वह कमरा उसी पाठशाला का था। पाठशाला की उन दिना छुट्टी कर रखी गई थी।

शिविर के लिए तीस शिविरार्थी बुलाए गए थे जबकि आए थे केवल दस ही। सहायक निदशक ने बताया था कि इतने कम शिविरार्थी पहली बार ही किसी शिविर में भाग ले रहे हैं। फिर सफ़ाई में यह भी कहा था कि यह अशात क्षेत्र है और गुवाहाटी तक की रेल यात्रा के बाद इम्फाल तक की सडक यात्रा काफी लबी है पूरी रात सवेदनशील इलाकों से गुज़रते हुए बस में बितानी होती है। सच में जिस तरह रास्ते में जगह-जगह चकिंग के लिए बस रोक ली जाती था और उसे सशस्त्र जवान दौड कर घर लेते थे वह भय की उस अधी गुफा में से गुज़रना होता था जो छूट जाने पर भी देर तक छूटती नहीं थी। दस में से पाँच शिविरार्थी महाराष्ट्र के थे तीन बगाल के एक गुजरात का और एक उडीसा का।

मार्गदर्शक साहित्यकार चार बुलाए गए थे और चारों ही आए थे। दो कवि थे एक कहानीकार और एक आलोचक। साहित्यकारों को कलकत्ता से इम्फाल तक की हवाई-यात्रा करने की छूट थी और इस छूट का एक अपना आकर्षण था। वैसे मार्गदर्शक साहित्यकार बनना भी कम आकर्षण की बात नहीं थी। सरकारी कागज़ों पर यह मान्यता मिलना तो था ही यात्रा-व्यय तथा भत्ता भी ख़ासा मोटा था। साहित्य से रिश्ता रखने वाली कुछ स्थानीय सस्थाओं से भेंट उपहार अलग से मिल जाते थे।

गोल मटोल जिस्म का कवि जो दिल्ली का रहने वाला था और कहानीकार, जो दिल्ली के सामावर्ती क्षेत्र साहिबाबाद का था अक्सर केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय में दिखाई देते थे। मानदेय से जुड़ा कार्य उन को जब तब मिल जाता था। वे दो बार इस से पूर्व भी शिविरों में भाग ले चुके थे। गले में चश्मा लटकाए रहने वाले उत्तर प्रदेश के कवि के एक सासद से अच्छे सबध थे और यह सासद राष्ट्रभाषा समिति का सदस्य था। आलोचक मध्य प्रदेश के एक कॉलिज में प्रोफ़ेसर था। पिछले वर्ष भाषा और सस्कृति सबधी एक सगोष्ठी में निदेशालय के निदेशक और आलोचक दोनों ने शिरकत की थी। निदेशक और आलोचक द्वारा अभिव्यक्त विचार काफ़ी दूर तक सहयात्री जैसे थे। निदेशक ने चाय पान के दौरान योजना की जानकारी देते हुए उस से पूछा था कि क्या वह ऐसे शिविरों में नए लेखकों का मार्गदर्शन करना पसद करेंगे।

'इस प्रस्ताव पर मेरा क्या उत्तर होना चाहिए, यह भी आप ही तय करें।

निदेशक इस पर ठट्ठा मार कर हँस दिया था 'मैं ने तय कर लिया है।

आठ दिवसीय शिविर का वह चौथा दिन था। पहले दिन शिविर का केवल उद्घाटन हुआ था। उद्घाटन मणिपुर सरकार के सास्कृतिक सचिव ने दीप जला कर किया था। उन्होंने हिन्दी में केवल एक वाक्य कहा था। कहा नहीं लिखा हुआ पढा था 'इस शिविर का उद्घाटन करते हुए मुझे अपार प्रसन्नता हो रही है। इस के बाद उन्होंने हिन्दी में न बोल सकने के लिए क्षमा माँगते हुए अग्रेज़ी में साहित्य की भूमिका के बारे में कहा था। उन का कुछ ज़रूरी प्रशासकीय कार्य था इसलिए वह दस मिनट के अदर चले भी गए थे।

दूसरे और तीसरे दिन कविता का शिविर था। शिविर दो सत्रों में था पहला नौ से बारह बजे तक और दूसरा दो से पाँच बजे तक। कविता के शिविर के सचालन की रास दिल्ली वाले कवि ने पकड ली थी। उसे पूर्व अनुभव तो था ही वह दूसरे कवि से अपने को वरिष्ठ भी मानता था। पद्धति यह अपनाई गई कि शिविरार्थी अपनी कविता

का पाठ करेंगे और पहले दूसरे शिविरार्थी पढ़ी गई कविता पर अपने विचार प्रकट करेंगे और इस के बा मार्गदर्शक साहित्यकार और यों कविता के विभिन्न पहलुओं पर ज़रूरी बातचीत हो जाएगी।

पहले दिन केवल छह शिविरार्थियों की कविता ही बातचीत का माध्यम बन सकी थी। एक की कविता अपनी झोली में लगभग एक घंटे का समय डाल लेती थी।

दूसरे दिन दो स्थानीय जन भी शिविर में हिस्सेदारी करने आ गए थे। इन में एक युवती थी।

सहा निदे ने टिप्पणी की थी, इस से पूर्व के हर शिविर में लड़कियाँ भी थीं। यह कमी पूरी हो गई है।

दिल्ली वाले कवि ने रात अपनी डायरी में एक कविता टाकी थी जिस में अल्हड़ नारी को एक जागा हुआ राग कहा था।

कहानीकार ने अपनी डायरी में लिखा था कि औरत की सुंदरता बहुत-कुछ उस की आँखों में होती है उजली मुस्कराहट बिखेरने वाली उस की उजली दंतपंक्ति में भी।

आलोचक ने अपनी उस दिन की डायरी में लिखा था 'सड़कों और बाज़ारों में यहाँ जगह जगह सशस्त्र सैनिक तैनात हैं शाम को सात बजे के बाद घरों के अंदर रहने की भी सलाह है किन्तु जीवन चारों ओर अपनी सारी हलचलों के साथ फैला है। जिजीविषा प्रतिकूल स्थितियों में भी मानव-जीवन को गति और रंग दिए रहती है।

दूसरा कवि डायरी नहीं लिखता था। उस ने सपने में देखा कि उस ने मोटे लटके ओंठ वाली अपनी पत्नी से चाय ठंडी देने पर कहा है कि उस का उस के साथ निर्वाह कर सकना नामुमकिन है और वह अपनी माँ या भाई जिस के भी पास चाहे चला जाए।

धर्मशाला के कमरे में लेटे एक शिविरार्थी को अपने माथे और सीने पर पसीने का गीलापन लगा। शाम से ही उस का बदन टूट रहा था और जब बगल में लेटे एक अन्य शिविरार्थी ने उस का हाथ छू कर कहा था कि हाँ उसे ज्वर है तो उस ने इबराफ़िन की एक टेबलेट खा ली थी। पसीना निकलने का मतलब है कि ज्वर उतर गया। दरअसल इस शिविरार्थी की जो बंगाल के एक दूरस्थ अंचल से आया था तबियत एक माह से गिरी पड़ी चल रही थी। जब-तब उसे ज्वर पकड़ लेता था। उस की बूढ़ी माँ ने उसे जाने से मना किया था। उस ने माँ से झूठ बोल दिया था कि डॉक्टर ने उसे एकदम चंगा बताया है और कहा है कि बिना किसी चिन्ता के सफ़र कर सकता है। शिविर में भाग लेने का सुअवसर वह खोना नहीं चाहता था। बतौर सावधानी वह साथ में दवा लेता आया था।

आज कहानी का शिविर था। केवल चार शिविरार्थियों का ही लगाव कहानी विधा से था। कल लड़की ने अपनी रुचि बताते हुए कहा था कि वह कहानियों को भी मनोयोगपूर्वक पढ़ती है। वह लड़की आज आई नहीं थी यद्यपि उस ने शिविर में भाग ले कर ज्यादा से ज्यादा सीखने की बात कही थी। स्थानीय युवक ने बताया कि हो सकता है विनाजी को कोई ज़रूरी काम आ गया हो।

एक शिविरार्थी ने जिस कहानी को पढ़ा वह आधे पन्ने की थी। उस को ले कर बात कहानी पर ठीक से उठी नहीं। अधिकांश लोगों ने उस को एक वाक्य में ख़ारिज कर दिया। कहानीकार ने भी अपनी कहानी के बचाव में बस इतना ही कहा 'मैं ने इसे कल रात लिखा था।

दूसरे किसी शिविरार्थी ने न तो वैसा कोई प्रयास किया था न उन के पास पहले का ही लिखी कोई कहानी थी।
उन लोगों के मन में ऐसा कोई प्रसंग या घटी कोई घटना या ऐसा कोई पात्र जिस से आप रू-ब-रू हुए हों और

जिस ने आप को छुआ छेडा हो, जरूर होगा। हम उस पर विचार कर सकते हैं कि कैसे उसे केन्द्र में रख कर कोई कहानी लिखी जा सकती है। कहानीकार बोला। आज के शिविर का भार उस पर था।

'हाँ, बातचीत का यह तरीका बढ़िया रहेगा उपयोगी। सहायक निदेशक की आँखों में कहानीकार के लिए सराहना का भाव तिर आया था।

'देसाई ऐसे किसी पात्र या घटना के बारे में बताइए जिस से आप आम ज़िन्दगी में रू-ब रू हुए हों। आप को झाँकने पर अपने अंतस में इस तरह का कोई बीज ज़रूर पडा मिल जाएगा। कहानीकार ने गुजरात से आए शिविरार्थी से कहा। कह कर वह अपनी दाढ़ी पर अँगुलियाँ हलके से फिराता हुआ शिविरार्थी की ओर देखने लगा। कविता से जुडा एक शिविरार्थी कहानीकार से पहले दिन बोला था 'सर, मुझे अज्ञेयजी को देखने का सौभाग्य मिला है। आप का चेहरा अज्ञेयजी से मिलता है।'

और अज्ञेय अमरीकन राइटर अर्नेस्ट हेमिंग्वे से मिलते थे जिन्होंने आत्महत्या कर ली थी। अज्ञेय और हेमिंग्वे दोनों अपनी दाढ़ी सजाने में काफ़ी समय देते थे। मेरी दाढी सजी हुई नहीं है। कहने से शेष वच को कहानीकार ने अपनी मुस्कराहट से कह दिया था।

देसाई गर्दन डाल कर दो मिनट तक सोचते रहने के बाद बोला 'सर, मेरी कालोनी में एक स्कूटर कंपनी में अच्छे पद पर काम करने वाला एक आदमी रहता है। इस का बूढा पिता या तो बाहर के एक कमरे में बना रहता है या सडक पर इस उस दुकान के आगे पडी बेंच पर जा कर बैठ जाता है। मुझे इस पात्र से हमदर्दी है।

'हिन्दी में बूढ़ों पर बहुत सी कहानियाँ लिखी गई हैं। बच्चे जब स्याने हो जाते हैं पिता उन के साथ एडजस्टमेंट नहीं कर पाते। मूल्यों और संस्कारों की टकराहट रहती है। एक ऐसे पिता पर उषा प्रियंवदा की लिखी हुई कहानी ''वापसी' काफ़ी चर्चित रही है। कहानीकार ने कहा।

'राजेन्द्र यादव की कहानी, नाम यदि मैं भूलता नहीं हूँ 'बिरादरी बाहर' भी इसी थीम पर एक चर्चित कहानी है। आलोचक ने जानकारी में जानकारी जोडी।

'सर, उसी थीम पर लिखी गई कहानी क्या अपने से पहले वालों की नक़ल नहीं मानी जाएगी? कविता से जुडे एक शिविरार्थी ने सवाल उठाया।

थीम एक होते हुए भी रचनाकार का थीम के साथ ट्रीटमेंट और थीम को मूर्त देने वाले भिन्न प्रसंग उसे एक नई रचना बना देते हैं। आलोचक उत्तर में बोला।

'कहने को प्रेम एक ही विषय है किन्तु इस पर हजारों कविताएँ, कहानियाँ और उपन्यास लिखे गए। दिल्ली वाले कवि ने भी कुछ बताना ज़रूरी समझा।

कुछ और उठी बातचीत को समेटने के बाद कहानीकार ने महाराष्ट्र से आए शिविरार्थी को कुरेदा 'जागलकर, आप के पास भी बताने को कहानी बन सकने लायक़ कोई वाक़िया होगा।

'सर, मैं एक बार पुल से गुज़र रहा था। पैदल था। शाम को चुकी था। मुझ से कुछ दूर एक आदमी पुल के रेलिंग से अपनी साइकिल टिकाए नीचे झाँक रहा था। मैं अभी थोड़ा फ़ासले पर ही था कि आदमी ने गर्दन उठा कर मेरी ओर देखा और फिर नीचे नदी में कूद पड़ा। शोर होने पर कई लोग जमा हो गए। एक ने ऊपर से टार्च की रोशनी डाली। आदमी जहाँ गिरा था वहाँ पानी से ऊपर उभरी चट्टानें थीं। आदमी का खून से लिथड़ा धड़ चट्टान पर था और टाँगें पानी को छू रही थीं।

'साइकिल के पास कोई लिखा हुआ पर्चा पाया गया?

'सर, कोई पर्चा नहीं पाया गया। मुझे एक आदमी से ज़रूरी मिलना था। मैं दस मिनट रुक कर चला आया

था।

आप ने इस वाक़िए को ले कर कथा कहानी लिखने का विचार बनाया?

'सर, दो एक दिन तक उस युवक की लाश मेरे दिमाग़ में रही। काफ़ी बेचैनी भी रही। फिर मैं ज़िन्दगी की आपाधापी में उसे भूल गया। आज जब आप ने किसी बड़े हादसे के बारे में पूछा तो मुझे याद आ गया।

अच्छा अगर अब आप से इस हादसे पर कहानी लिखने को कहा जाए तब इस को कैसे रूप देंगे?

'सर, युवक की आत्महत्या का कारण बेरोज़गारी दिखा कर मैं कहानी बनाऊँगा। जागलेकर एक मिनट तक सोचने के बाद बोला।

दूसरे शिविरार्थियों से पूछे जाने पर जब किसी ने आत्महत्या का कारण पत्नी से तकरार, किसी ने प्रेमिका का धोखा देना किसी ने भारी नुकसान हो जाना जैसा कुछ बताया तो कहानीकार बोला कि इन में से किसी को भी आधार बना कर कहानी रची जा सकती है किन्तु ध्यान यह रखना होगा कि कहानी न वैयक्तिक बने न भावुकतासिक्त जिसे भी कुछ लोग एक गुण मान लेते हैं। या देखें आत्महत्या का कारण अगर युवक का बेगुनाह हो कर भी पुलिस द्वारा उस को किसी जुर्म के संदेह पर पीटे जाना और अपमान को उस सँकरी गली में जो सिर्फ़ मौत की खाई में खुलती हो ढकेल देना दिखाया जाए, तो कहानी व्यवस्था के क्रूर और जनविरोधी चरित्र को उजागर कर अधिक अर्थवान बन जाएगी।

'सर, पुलिस को खलनायक बना कर एक मुद्दत से फ़िल्म टी वी और कहानियों में पेश किया जाता है। उदासी से आया शिविरार्थी बोला। शिविर में शामिल होने की ख़ातिर इस ने नौकरी से संबंधित एक प्रतियोगितात्मक परीक्षा छोड़ दी थी। साहित्यकार बनने के लिए थोड़ा-बहुत त्याग तो करना ही होता है। इस शिविरार्थी ने कल जो कविता पढ़ी थी उस में लोक जीवन से गहरे जुड़े कई बिम्ब थे।

आप की हमदर्दी पुलिस वालों से कुछ ज्यादा दीखती है। घर का कोई आदमी पुलिस में तो नहीं है? निदेशालय ने शिविर में भाग लेने वालों के यात्रा भत्ते आदि का नक़द भुगतान करने के वास्ते अपना एक एकाउंटेंट भी भेजा था। एकाउंटेंट भी बीच-बीच में आ कर शिविर में बैठ जाता था। यह चुटकी इस एकाउंटेंट की ही थी।

आलोचक को लगा कि शिविरार्थी आगे कहेगा कि कहानियों का एक जैसे ढाँचे में ढल जाना कहानी के अपने विरुद्ध जाता है। आज के शिविर के प्रारंभ में आलोचक ने हिन्दी कहानी का इतिहास और उस की प्रवृत्तियाँ बताते हुए यह भी उक्ति सुनाई थी कि नक्शा हो कर इमारत चले और वृक्ष चले निज लीला और साहित्य की हर विधा खास तौर से कथा संबंधी विधाओं की प्रकृति वृक्ष जैसी ही होती है।

'मेरा कहने का मतलब यह था ।

'कहने का मतलब भी आप बताएँ, मगर पहले एकाउंटेंट साहब की बात बताएँ। सहायक निदेशक ने हँसते हुए टोका।

'सर, पुलिस विभाग में मेरा कोई संबंधी नहीं है चाहे आप पता लगा लें।

शिविरार्थी का पता लगा लेने की किसी बच्चे जैसी मासूम बात से तो वहाँ लोगों के चेहरों पर हँसी थिरकी ही थी कहानीकार का इस बात से और भी थिरक उठा कि पता लगाना भी पुलिस के ज़रिए होगा जिस का जाँच कभी भी सही नहीं होती है।

दोपहर में शिविर स्थल से ही राधा माधवजी मार्गदर्शक साहित्यकारों को भोजन के लिए बुला ले गए। माधवजी वहाँ हिन्दी प्रचारक थे। सिर के सफ़ेद बालों में ही नहीं चेहरे पर पड़ी झुर्रियों से भी लगते था

कि वह आयु की ढलान पर हैं। वह साइकिल पर सवार हो गए जबकि दूसरे लोग रिक्शो पर बैठ गए। जल्द ही रिक्शे एक पिछडे इलाके से हो कर गुजरने लगे। रास्ते में जगह ब-जगह बरसाती पानी भरा था। एक ऊबड-खाबड़ गली के अंतिम छोर पर आ कर उन्होंने रिक्शे रुकवा दिए। रिक्शा का किराया स्वयं दिया।

मकान आधा कच्चा आधा पक्का था। एक टीनपोश बाहरी कमरे में खाने का व्यवस्था की गई थी। लकड़ी की दावारों की कुरूपता छिपाने के लिए औरतों द्वारा पहनी जाने वाली लुंगियाँ और शालें टाँगी गइ थीं या फिर चटाइयाँ। खाने की मेज़ के आगे बैठने के लिए लकड़ी की बिना पीठ वाली बेंचें डाली गई थीं। खाने में चावल दाल और केले के फूल के कोफ्ते थे। सलाद में प्याज टमाटर के साथ कच्ची कमल-ककडी कटी थी। जल्द ही पानी के गिलास उठाए जाने पर माधवजी बोले 'लगता है भोजन आप को पसंद आया नहीं। उन के चहरे पर उदासी घिर आई थी।

'मैं चावल कम लेता हूँ।' दिल्ली वाला कवि बोला।

'इधर चावल ही खाए जाते हैं। यहाँ चावल की ही पैदावार होती है। आप लोगों को थोडा रुकना पड़ेगा। आटे की व्यवस्था कर पूड़ी बनवाए देता हूँ।

'नहीं कष्ट करने की आवश्यकता नहीं है। आप की अनन्नास की चटनी मुझे बहुत पसंद आई है। सहायक निदेशक ने कहा।

'हम लोगों की तरफ़ चावल में इतनी मिठास नहीं होती है जितनी इधर है। दूसरे कवि ने कहा। उस ने अपने सलाद में से कमल-ककडी इस तरह छाँट दी थीं जैसे कबाब में से हड्डियाँ छाँटी हो।

आधे बदन साडी लपेटे हुए नंगे पैर माधवजी की बूढ़ी माँ आई और हर किसी के सिर पर अपना काँपता हाथ रखती हुई बोली, 'आप लोग हम ग़रीब के घर आए, हमारा सौभाग्य है।

कहानीकार पास बैठे एकाउंटेंट के कान में फुसफुसाया 'हिन्दी बेचारी बहुत गरीब है।

वापसी में गली को पार करते हुए उन लोगों ने पाया कि घरों के बाहर खडी औरतें व बच्चे उन को ताक रहे हैं। कुछ औरतें छतों पर भी थीं। कई चेहरे ऐसे थे जिन से निगाह जा कर बरबस बिंध जाती थी। बादलों को फाड कर निकल चुकी धूप जितनी उजली थी उस से कहीं अधिक उजली लग रही थी। उजली के साथ साथ शोख भी।

पक्की सडक पर भी रस और मस्ती की छलकती गगरी बने कई चेहरे दिखाई दिए।

दिल्ली वाले कवि ने रिक्शा पर पास बैठे कहानीकार से कहा कि भीम की हिडिम्बा और अर्जुन की चित्रागदा इस क्षेत्र की ही थीं। रूपवती स्त्रियों से खिचे हुए पांडु पुत्र यहाँ तक आ गए थे।

'पांडु पुत्र अगर इधर अब आए होते तो उन का एड्स हो जाता। कहानीकार ने जवाब दिया।

वहाँ एड्स की बीमारी होने की बात सहायक निदेशक ने शिविरार्थियों के बीच पहले ही दिन 'किसी को बुरा लग सकता है पर इसे बताना मैं अपना कर्त्तव्य समझता हूँ के वाक्य-खंड के साथ कही थी।

दूसरा सत्र भी विलंब से प्रारंभ हो पाया था। दरअसल मार्गदर्शक साहित्यकारों ने माधवजी के घर से आते हुए पहले एक रेस्टोरेंट में रुक कर कॉफ़ी पी थी फिर वे होटल चले गए थे। दिल्ली वाला कवि हर सत्र में कपडे बदलता था। दूसरे दिन से दूसरा कवि भी वैसा करने लगा था। दिल्ली वाले कवि का मानना था कि कवि को कवि की तरह दीखना चाहिए। इस वक्त उस ने उन्नाबी रंग का कढ़ा हुआ कुर्ता पहना था और उस में इत्र भी लगाया था। दूसरे कवि ने कंधे पर मणिपुरी शाल डाल लिया था जो उस ने कल खरीदा था। कहानीकार ने शहर में दाम

का जायजा लिया था। कल्ले के ऊपरी भाग तक में बाल जमे थे। तराशे जान से जो दाढ़ी का विन्यास बनाए हुए थे। विन्दासपन याना खाटापन। आदमी का खाँटा होना आज वक्त की एक बड़ी जरूरत है। सहायक निदेशक ने चैक डिजाइन की कादूसवूल की शर्ट पहनी थी जिस से वह एकदम अफसर लग रहा था।

दूसरे सत्र में महाराष्ट्र के ही एक अन्य शिविरार्थी अनिल वाजाराव का कहानी के कच्चे माल के रूप में कुछ पेश करना था। वाजीराव को सोचने के लिए पर्याप्त समय मिल गया था। वैसे भी वह चाज़ों को गमारता से लेने वाला युवक था। उस ने हिन्दी विषय ले कर एम ए, किया था और काफ़ी कुछ नया पुराना पढ़ रखा था। उस की चार कहानियाँ यहाँ वहाँ प्रकाशित हो चुकी थीं। शिविर के लिए उस ने एक प्रकाशित कहानी निकाल कर रखी थी लेकिन वह अटैची में रखने से छूट गई थी। वह शिविर के दौरान नोट्स लिया करता था।

'यह एक पखवाड़ा पहले की बात होगी। मेरे वाले प्रसंग में भी शाम का ही समय है। बात यह है कि मैं शाम को कुछ देर के लिए घूमने निकल जाता हूँ। यह मेरी दिनचर्या का अंग बन गया है। जिधर मैं जा रहा था वह शहर का बाहरी हिस्सा था। आबादी उधर भी थी मगर था खुलापन। मैं ने देखा कि मुझ से आगे कुछ फ़ासले पर चल रहा शख्स पान की एक दुकान पर रुक गया है और उस ने दुकानदार से पांच रुपए माँगे हैं कि उस के अपने रुपए गिर गए हैं और उसे गाँव जाना है। दुकानदार ने उसे वहाँ से हटने के लिए यों हाथ हिला दिया जैसे मक्खी उड़ा रहा हो।

'वह शख्स फल की एक दुकान पर रुक गया और रुपए माँगने लगा। फल वाले ने उस की ओर एक गला हुआ केला बढ़ा दिया। उसे लेते न देख कर वह तुर्शी से बोला 'चला बन। मैं कह रहा हूँ लाट साहब यहाँ से जल्द फूटो।

'वह शख़्स उस दुकान के आगे रुक गया जिस पर अलमानियम के बर्तन सजे थे। दुकानदार ने पूछा कि उस ने अपने रुपए कैसे गिरा दिए।

'वह शख़्स बोला 'मैं ने बीड़ी पीने के वास्ते जेब से बंडल निकाला था। साथ में रुपए भी निकल कर हाथ में पकड़ लिए। एक दस का नोट था एक पाँच का रुपए का एक सिक्का भी था। सामने से एक ट्रक आ रहा था। मैं पटरी पर खड़ा हो गया। ट्रक एकदम पटरी पर हो कर गुज़रा। घबराहट में मेरे हाथ के सारे रुपए नाले में गिर गए।

'रुपए निकाले नहीं?

'बहुत कोशिश की। नाले में पानी ही पानी था। रुपए मिले नहीं।

'मैं रुपए गिरने का चश्मदीद गवाह नहीं था। पर मैं क्षेत्र की भौगोलिक स्थिति और बूढ़ों की मानसिकता को दृष्टि में रख कर उस घटना को भी बयान कर सकता हूँ। वह शख़्स सत्तर के आसपास होगा। उस की भौंहें भी सफ़ेद हो चली थीं। जिस तरह उस की मूँछों के बेतरतीब बाल थे और आँखों में डरी डरी सी चमक थी और जिस तरह वह ऊँची ऊँचा धोती पहने था और अपने पैरों में बड़ी चप्पलें, उस से वह एक सीधा-सादा इंसान दीखता था बकरी या गाय सरीखा। ऐसे बूढ़ों के पास अगर कुछ पैसे होते हैं खास तौर से जब ये घर से बाहर हों तो बार-बार हाथ में ले कर इत्मीनान करते हैं कि पैसे सुरक्षित हैं या नहीं। कभी पैसे भी उन के लिए बाधा होते हैं। पर बूढ़े कितनी बार इस इत्मीनान करने में ही अपने पैसे गँवा चुके हैं। जिस सड़क पर वह बूढ़ा शख़्स था वह कम चौड़ी है। बड़े ट्रकों के आमने-सामने से गुज़रने पर एक को पटरी पर आना ज़रूरी होता है। दोनों ओर नाले भी हैं कहीं पर ढके और कहीं खुले। इन नालों में कीचड़ और पानी दोनों रहता है। किसी फ़ैक्टरी से छूटे पानी के दबाव से कहीं-कहीं ये उफनते हुए बहते हैं।

'इस शख्स ने आसपास के किसी आदमी से बाँस या डडा ले कर गिरे रुपयों की तलाश जरूर की होगी। कुछ लोगों ने मना भी किया होगा कि नाहक सिर मार रहा है छोटी मोटी चीजों क लिए यह नाला सुरसा का पेट है। इस ने उन का कहना माना न होगा। घटा, आध घटा कीचड़ यहाँ वहाँ खदबदोन के बाद ही हाथ पैर डाल हागे।

'उस ने दुकानदार के पूछने पर अपना जो गाँव बताया, वह क़रीब तीम किलोमीटर दूर था।

'उधर जा रहे किसी ट्रक पर बैठ गया होता। दुकानदार बोला।

"मैं ने दो ट्रक वालो की खुशामद की। पैसे न होने की बात जान कर बैठाया नहीं। उलटे बेकार में रोकने क लिए गालियाँ दीं।"

"क्या गालियाँ दीं?

'हम जैसो के लिए माँ-बाप की थू करन क सिवा उन के पास कहने को होता ही क्या है। चुपचाप सुन लीं।

'वह बूढा अब दुकानदार से कुछ ज्यादा आग्रह के साथ रुपए देने के लिए कहने लगा। दुकानदार ने जिस तरह से उस की बातें पूरी सुनी थीं उस से उसे आशा जगी थी। माँगते हुए उस का स्वर तो पिघला पिघला था ही उस ने हाथ भी जोड़ रखे थे।

'दुकान पर तभी लॉटरी का एक टिकट बेचने वाला आ गया। दुकानदार ने टिकट खरीद कर उस बूढ़ से कहा 'तेरी ओर से मैं ने टिकट ख़रीद लिया है। लॉटरी चौथे दिन खुलेगी। नबर निकल आया तो पाँच क्या पूरे पचास रुपए ल जाना।

'बूढे को डटा पा कर वह अपने दाँत जो बडे बडे थे चमकाता हुआ बोला अब जा। ट्रक के ड्राइवरा वाली गाली मुझे भी आती है। नाटकबाजी लबी नहीं खिचनी चाहिए।

'मेरी जेब में रुपए थे। मुझे उस की जरूरत सच्ची लग रही थी। उस पर दया भी आ रही थी लेकिन मैं ने रुपए दिए नहीं।

'होते हुए भी रुपए नहीं दिए?' कहानीकार की आँखों में हलका सा विस्मय था।

'सर, मुझ पर उस समय यह विचार या कहिए भाव हावी था कि देखें यह शख्स अभी किस किस के आगे हाथ फैलाता है इस के साथ कौन कैसे कैसे पेश आता है।

'साहित्य से जुडा व्यक्ति यों तो बडा सवेदनशील होता है किन्तु अपने अदर के रचनाकार के लिए खाद्य-सामग्री जुटाते समय वह एकाएक निर्मम हो जाता है। बल्कि या कहें कि उस मायने में अदर का रचनाकार एक हिंसक पशु होता है। आलोचक ने शिविरार्थी के आचरण की जैसे व्याख्या की।

'सर, जो सही बात थी वह मैं ने बता दी। जब मुझे लगता है कि अमुक आदमी या अमुक घटना को अच्छा तरह देखना चाहिए, तब मैं उस कुछ ज्यादा ध्यान से दखता हूँ। मरी ऐसी आदत पड गई है सर। इस शिविरार्थी ने साहित्यकारों के लिए प्रारभ में श्रीमान का प्रयोग किया था किन्तु जब सहायक निदेशक ने कहा कि 'सर अब हिन्दी में शामिल हो गया है तब वह अन्य शिविरार्थियों की भाँति 'सर कह कर ही उन का सबोधित करन लगा था।

'हाँ जिस तरह से आप उस वृत्तात का बयान कर रहे हैं वह भी इस बात का सूचक ह कि आप सूक्ष्म निरीक्षण करना जानते हैं। कथाकार के लिए यह निहायत जरूरी है। आलोचक उस के पक्ष में दोबारा बोला।

'उस बूढे ने दो-तीन राहगीरों स भी रुपए माँगने की असफल कोशिश की। वह फिर एक आटा चक्की पर रुक गया। चक्की उस वक्त चल नहीं रही थी। वह पटे हिस्से क नीच कुर्सी पर बैठे भारी जिस्म क उस आदमी क पास चला गया जो चक्की का मालिक दीखता था। दीखता ही नहीं था था भी। चश्मे क पीछे स अपनी नजर बूढे पर

गड़ाए हुआ वह उस की बातें सुनने लगा। बूढ़े के पूरी बात कह लेने पर वह बोला 'ठीक है रुपए मिल जाएँगे। ज़रा करा य" सामने रखा ड्रम भर दो।

'बाहर खुले हिस्से में हैंड पप लगा था। उस बूढ़ े ने वहाँ रखी बाल्टी को पहले खँगाला फिर उस से पानी भर भर कर ड्राम में डालने लगा। या तो नल भारी चल रहा था या बूढ़ा उस चलाना ठीक से जानता नहीं था कि पानी पूरी धार बाँध कर निकलता नहीं था।

'चक्की की जमीन पर ही एक कोने में चाय का खोखा था। मैं चाय पीने के बहाने से वहाँ बेंच पर बैठ गया था और सारी गतिविधियों को चोर नज़र से देखने लगा था।

'ड्रम अभी भर नहीं पाया था कि घर और चक्की को जोड़ने वाले दरवाजे से किसी जनानी आवाज़ ने पूछा कि पानी कौन भर रहा है? फिर कहा कि घर की भी चार बालटी भरी जानी हैं। सरकारी नल मरा न जाने कब आए?

'जब घर का भी पानी भर गया चक्की मालिक ने बूढ़े से कहा कि बाहर कुछ पत्तियाँ जमा हो गई हैं। आँखों को अच्छा नहीं लग रहा है। वह एक आग कर दे।

'बूढ़ा एक मिनट चुपचाप खड़ा रहा जैसे उस ने चक्की मालिक का कहा हुआ सुना नहीं। फिर झाड़ू उठा कर उस ने बाहर का जगह-जगह से पपड़ा छोड़ा फ़र्श साफ कर दिया।

'चक्की मालिक अब अपने भारी जिस्म को सँभालता हुआ एक सिरे पर जा कर खड़ा हो गया और बूढ़े को पास बुला कर बोला 'नाली में इधर कुछ कचरा फँसा लगता है। इसे भी ज़रा ठेल दो।

'सरकार अब मुझे छुट्टी दें। गाँव सड़क से अंदर दूर है। सवारी से उतर कर पैदल जाना पड़ता है। रात घिर आने पर मुझे परेशानी हो जाएगी। बूढ़े ने इस बार हाथ भी जोड़ दिए।

'घंटे-दो घंटे का काम थोड़े है! मुश्किल से पाँच मिनट लगेंगे।

'बूढ़े को असमंजस में पा कर चक्की मालिक ने फिर कहा 'गंदी वाली नाली नहीं है। अंदर के रसोईघर और आँगन का पानी ही इस में आता है। बाँस से बस ठेलना है।

'नाली में कचरे के साथ ईंट फँसी थी। कई ठोकरें मार जाने पर ही हट सकी। चक्की मालिक ने गंदगी धुल जाने के लिए फिर चार बालटी पानी भी छुड़वाया।

'जब पाँच रुपए ले कर वह बूढ़ा चला मैं उस के पीछे लग लिया। वहाँ पास के किसी दूसरे घर से आ गया दुनिया देखा हुआ एक शख़्स चक्की मालिक से बोला था कि गाँव का आदमी भी अब बड़ा चार सौ बीस हो गया है। हो सकता है कि यह किसी और से भी अभी इसी तरह रुपए ऐंठे या किसी भट्ठी पर बैठ कर शराब पिए। उस के अपने इल्म में एक आदमी ने अपनी बीमारी का रोना रो कर रुपए जमा किए थे और फिर एक औरत के साथ जा कर लेटा था।

अगले एक तिराहे को पार हो किया था कि पीछे से आवाज़ आई 'ताया रुका मैं भी आ रहा हूँ। आवाज़ के साथ जो एक नौजवान लपक आया। वह उस बूढ़े का भतीजा था। भतीजा बूढ़े के चले आने के दो घंटे बाद होने की जुगाड़ करने शहर आ गया था। जुगाड़ हो नहीं सका था और वह गाँव लौट रहा था।

'बूढ़ा अपने रुपए गिर जाने और किराया जुटाने की ख़ातिर क्या-क्या करना पड़ने की बात बताने लगा।

'तुझे झाड़ू लगानी पड़ी और नाली साफ़ करनी पड़ी? भतीजे की आँखें हैरत से टँग गई थीं।

'करता क्या मजबूर था।

'तू मुझ को देखने आया था तो यहीं लौट जाना।

'सच्ची वह सामने से गुज़रे बहुत परेशान हैं। दो मन तब पीछे भी लौटना होता।

भतीजे ने पहले शहरियों के लिए दो एक कड़वी गालियाँ बकीं फिर घृणा से थूका। इस से पहले कि व आग बढते वहाँ एक औरत एक कोढ़ी को गाडी पर ढोती प्रकट हो गई।

'बूढ ने भतीजे से पूछा "रुपए इसे द दूँ? '

"हाँ, दे दो।'

'बूढे ने चक्की वाले से मिला पाँच का वह नोट कोढी के कटोरे में डाल दिया।'

अनिल बाजीराव के उस वृत्तात पर जबकि शिविरार्थियों ने 'बहुत अच्छा है', अपने में एकदम मुकम्मिल कहानी है' जैसी टिप्पणियाँ कीं या कुछ शीर्षक सुझाए, कहानीकार ने कहा 'अभी इस में कुछ रद्दोबदल की जरूरत है। चक्की मालिक को काम करा लेने क बाद पहले दा एक रुपए कम देते हुए दिखाया जाना चाहिए। जब बूढ़ा मिन्नत समाजत करते हुए उस के पैर पकड़ ले, तभी वह कम रह गए रुपए पूरे करे। इस से पूँजीवादी प्रवृत्ति की अमानवीयता कुछ ज्यादा नग्न रूप में बेपर्दा होगी। कोढी वाले प्रसग को भी निकाल देना चाहिए। उस की बजाय यह दिखाया जाना चाहिए कि भतीजा अपने बूढ ताया को ले कर चक्की पर लौट आता है और पाँच का नोट फेंकता हुआ चक्की मालिक म कहता है "लो इस अपने व्यापार में लगा लेना। साल भर में पाँच सौ बन जाएँगे।" आज का नौजवान उत्पीडन, शोषण के विरुद्ध अपने आक्रोश को छिपाता नहीं है, खुल कर ज़ाहिर करता है। इन सशोधनों से कहानी अपने लक्ष्य की ओर अधिक सधी हुई हा जाएगी।

'सर, किन्तु ऐसा करने से कहानी क्या यात्रिक नहीं हो जाएगी मतलब है कृत्रिम? बाजीराव बोला।

'कहानी में सच के साथ झूठ का समावेश कहानी को दिशा और दृष्टि देने क लिए हाता है। कहानी मनोरजन क साथ-साथ अन्याय, अनीति अत्याचार के विरुद्ध हस्तक्षेप भी है। एक अच्छी कहानी का उद्देश्यपरक होना जरूरी है, अनिवार्य जैसा। कहानीकार ने अपने कथन को मतलब लायक मजबूत बनाया। मजबूती के इत्मीनान मे वह अपनी दाढी को सहलाता हुआ थोड़ा मुस्कराया भी।

'सर, कोढ़ी वाल प्रसग को बनाए रखने से भी, मेरी अपनी समझ से, कहानी में उद्देश्यता बनी रहती है। बाजीराव ने आधा मिनट रुक कर आगे कहा 'यथार्थ भी अपनी बात कहता है मगर अपने तरीक़े से सर!

आलोचक को शिविरार्थी का कहना सही लग रहा था। वह कहानी में उद्देश्यता के उस रूप का हिमायता नहीं था जा कहानी में तल क धब्बे की तरह उतराती तिराती है। उद्दश्यता कहानी में वस्तु में उस की तासीर की तरह बन कर आनी चाहिए। किन्तु आलोचक चुप रहा। कल आलोचक ने कविता के शिविर म शिविरार्थियों का आगाह करते हुए कहा था कि यह तो सभव है कि बिना जड के वृक्ष में फल उग आएँ और उबले हुए अड में से चूज़े निकल आएँ, लेकिन कवि सम्मेलनों से जुड़ा व्यक्ति कवि बन जाए, असभव है क्योंकि आज का मच प्रतिभा का कब्रगाह है। इस स पहले दिल्ली वाले कवि ने आदर्श कविता क रूप में अपनी तीन चार कविताएँ लय और तान के साथ सुनाई थीं। वह कवि सम्मेलनों में भी हिस्सेदारी करता था आलाचक को इस की जानकारी नहीं थी। शाम को अपन कमरे म साहित्यकारों की हाने वाली बैठक में शराब की चुस्कियों के बीच सहायक निदेशक वाला था कि अच्छा यह रहेगा कि मार्गदर्शक साहित्यकारों के विचारों में एकरूपता रह। एक दूसर का खडन करन से शिविरार्थियों की निगाह में उन का अपना वह क़द नहीं रहेगा जो रहना चाहिए।

कहानीकार क अगले उत्तर में कहे गए इस कथन पर कि जीवन स सीधा उठाया गया यथार्थ अपन में बहुत-कुछ एक छूछा दीया होता है और इस दाए को रचनाकार का तेल बाती डाल कर जलाना हा काफ़ी नहीं है इसे किस स्थान पर रखा जाए, इस का सही चुनाव करना भी उस क लिए ज़रूरी है जब सहायक निदेशक का

लगा कि वाजारव प्रत्युत्तर में फिर कुछ बोलेगा उस ने उस चर्चा पर पटाक्षेप करने के लिए कहा कि कहानीकार पच्चीस वर्ष स साहित्य के क्षत्र में है उस के पाँच कहानी-सग्रह प्रकाश में आ चुके हैं और वह यशपाल पुरस्कार स सम्मानित है उम के विचारों का इसलिए साख के रूप में अगीकार किया जाना चाहिए।

फिर उस ने यह कहत हुए कि प्रकृति के चमत्कारों और लीलाओ से परिचित होना भी ज्ञानर्जन करना होता है वल्कि साहित्यकारो क लिए इस पूँजा कहा जाना चाहिए, सूचना दी कि कल व सत्र एक टूरिस्ट वस स लोकनक झाल दखन जाएँगे। चारो ओर पर्वतो मे घिरा होन तथा जल में तैरते छोटे-वड़े सैकड़ों द्वीपों क कारण यह झाल विश्व में प्रकृति की एक अनुपम भेंट मानी जाती है। वहीं डाक वँगल में व पिकनिक टाइप खाना खाएग और गपशप करेंगे।

'सर, क्या हम लोग मोइरग कगला में भी रूकेंग जहाँ सुभाषचंद्र वास ने द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान अपना आज़ाद हिन्द फ़ौज के साथ वर्मा के रास्ते से वन्त हुए प्रथम वार तिरगा झडा फ़हराया था। यहाँ उन का स्मारक और सग्रहालय है। पूछन वाला शिविरार्थी वही था जिस न लोक-जावन से जुड़ी हुई कविता पढ़ी थी।

'हम आप को मोइरग म छोड़ देंगे। सहायक निदशक का तड़ से जवाव आया।

रचनाकारो से निवेदन

- ☐ रचनाएँ कागज़ के एक ओर हाशिया छोड कर डवल स्पस टाइप कराके ही भेजें। पता सपादक **समकालीन भारतीय साहित्य** साहित्य अकादमी रवीन्द्र भवन 35 फ़ीरोज़शाह रोड नई दिल्ली 110001
- ☐ रचना को प्रति अपन पास अवश्य रखें। रचनाएँ किसी भी दशा में वापस नहीं की जाएँगी।
- ☐ अनूदित (केवल भारतीय भाषाओ स) रचना के साथ मूल रचना का शीर्षक रचनाकार की अनुमति और रचनाकार तथा अनुवादक का परिचय अवश्य भजें।
- ☐ रचना भेजने क वाद डढ़ माह म स्वाकृति या अस्वाकृति की सूचना न मिलन पर पत्र लिखें।
- ☐ रचना क साथ टिकट लगा पता लिखा लिफाफ़ा क़तई न भजें।

यादवेन्द्र शर्मा 'चद्र'

कहाँ है देवता

धोरों यानी स्वर्णिम रेत के टीबों के बीच वह धार्मिक स्थल किसी सफेद हाथी की तरह सोया हुआ लगता था। कुछ उस स्थल की बनावट ही ऐसी थी। अर्ध गोलाकार सफ़द सगमरमर और दरवाज़े स लवा लईड़ रास्ता। जैस हाथी की सूँड हो। मेरी कहानी इस स्थल के देवता की है पर इसे आप प्रत्येक पूजा स्थल के देवता की समझ सकत हैं। वह स्थल किसी कोने म हा सकता है। यदि आप समझदार हैं तो इस कहानी का यह प्रतीकात्मक स्वरूप भी हो सकता है। जहाँ साकार और निराकार देवता विराजमान है। जहाँ प्रतिदिन हजारों लोग प्रार्थनाएँ और इबादत करते हैं मत्था टेकते हैं और अपने स्वार्थ की पूर्ति के लिए मनौतियाँ माँगत हैं। मदिर में नि स्वार्थ भाव से कोई नहीं आता। अनेक लोग माक्ष और मुक्ति का कामना करते हैं। अनेक लाग सपदा की श्रीवृद्धि के लिए प्रार्थना करते हैं। डाकू धाड़ेती अपने रक्त रजित अभियान की सपूर्ति के लिए सिर झुकाते हैं पशु बलि चढाते हैं। तो कुछ सिरफिरे जूत चप्पल भी माथा टेक कर चुरा ले जाते हैं।

पर मेरी यह कहानी धोरों वाले मदिर की है।

पुजारी न एक भद्दी गाली निकाल कर सुखले के बाल पकड़ कर निर्ममता से खींचे। उस के मुख से एक सीत्कार निकली। आँखों में पीड़ा। शरीर में विचित्र सा टेढापन। उस ने अस्फुट शब्दों म कहा 'छोड दीजिए पुजारीजी छोड़ दीजिए। अब एसी गलती नहीं होगी। छिमा करें छिमा।

'साला हरामजादा, आटा चुराता है। बता कितने दिनों स यह धधा चला रखा है?

'पहल आप छोडिए तो सही फिर बताता हूँ। उस ने पीडा से तडपते हुए कहा।

पुजारी गुणीराम ने उस के बाल छोड़ दिए। सुखला बालों को सहला कर हाथ जोड कर बोला 'पुजारीजी! जब घर म खाने को आटा नहीं होता है तो मैं चुराता हूँ। बडी लाचारी में चुराता हूँ। आप तो जानत हैं कि मरे सात छोट भाई बहन हैं।

'तो अपने उस लुगाईखोर बाप को जा कर बक जो एक पर एक वच्चे पैदा करता जाता है। मना तो वह लगा और सजा तू मुझे दगा। रीस तो ऐसी आती है कि मरे को थाने में बन्द करवा दूँ।

'बस एक बार और छिमा कर दाजिए। ईश्वर की सौगध खाता हूँ कि अब चोरी नहीं करूँगा।

अरे नीच सौगध भी खाता है तो ईश्वर की तरे जैस झूठे मक्कार लागों की झूठी सौगधों के कारण हा ता देवता पृथ्वी पर स कूच कर गए। अपन बाप की सौगध खा।

अच्छा बाप की सौगध खाता हूँ।

'जा उल्लू के पट्ठे इस बार छाड़ दता हूँ, वरना हरामजाद के मिर्चें भरवा दता।

उस ने रिरियात हुए कहा 'नहीं अब एसी गलती नहीं करूँगा।

'जा कर बाड़े की गायों को नारा (घास) डाल दे और वहाँ झाड़ू भी लगा द।

सुखला सिर का सहलाता पुजारी का मन ही मन गालियाँ दता हुआ चल पड़ा। उस की आकृति स लग रहा था कि उम क वाला की जड़ तक हिल चुका ह।

पुजारी गुणाराम क्रूर तटस्थता स घिरा जड़वत उस हिंस्र नेत्रों म देखता रहा। फिर उस ने उम गन्दी गाली दी।

अचानक पतला मधुर स्वर सुनाइ पड़ा 'पुजारीजी! पगलागूँ।

जस कोई चमत्कार होता ह वैसा ही चमत्कार हुआ कि पुजारी की हिंस्र आकृति एकदम प्रसन्नता से नहा उठा। अपन भातर का मिठास का अपन स्वर म उँड़लत हुए उस न कहा 'आ आ मँगली आ आज क्यिाँ रम्ता विसरगी। मैं ता आँन्हें फाड फाड कर तने सदैव उडीकू हूँ।

मगली न एक खतरनाक अँगड़ाई ले कर लबा साँस लिया। फिर पूजा स्थल के बाहर बनी चौकी पर बैठ गई। कसूंबल रग क आढ़न क पल्लू स गार ललाट का पसीना पाछ कर उलाहन भर स्वर में बाली अरे पुजारीजा थाड़ा थावस रख। एक छिन भर विसाँई ता खान द। वळत तावडै (धूप) में आई हूँ। गला सूख रहा है। पैला ठंडा पाणा पाव।

वह उल्लसित हा कर बाला 'पाणा क्या मं तुझ शर्बत पिलाऊँगा। चन्दन का असली चदन का है। सठ जगदाश चद ने आज ही तान बातलं दवता के चढाई हं। तू विसाँई खा मं अभी शर्बत लाया।

पुजारा गुणाराम की विनम्रता व कामलता अपूर्व था। मगली का दख कर कुछ क्षण पूर्व उस में जो क्रूरता और हिंस्रता थी वह लुप्त हा गई थी।

मँगली न एक दृष्टि चारों आर दौड़ाई। मदिर क आगे पापल का पुराना पड। थाड़ी दूर पर दा घन गहरे खेजड़े। एक सूखा नाम। फिर वियाबान रेगिस्तान। उस क ऊँच-नीच टीब। उन धारों की तलहटी में बसा है एक कस्बा।

खजड की छाया में एक साँप कुडली मार बैठा था। कुछ काग काइ इधर-उधर रेंग रह थ। उसा समय दो कौवों ने काँव-काव करना शुरू किया। अचानक कौवे न शांत पड़ साँप पर चाच मारी। साँप न जल्दी स फन उठाया। थाड़ा दूर कैर का बिना पत्तों का छाटा पड था। इस पड़ का जड़ों में चूहों क बिल थ। एक चूहा बाहर निकला और साँप का दख कर जल्दी स भातर चला गया। साँप भा शीघ्रता स उस बिल का आर लपका। कौवे अभी भा काँव-काँव कर रह थ। साँप चूहे वाले बिल मं घुस गया।

मँगला जानती थी कि साँप चूहे का दबाच कर मार दता ह आर फिर उस धीरे धीरे निगल जाता है—साबुत।

यह पुजारा भी साँप है। मँगला न साचा—बरसों स यह चुहियाआ को अपन पाखड और पैसों का शिकार बना कर उन्हें निगल रहा है। न जान परमात्मा इस दुराचारा आर पापा को दड क्यों नहीं दता?

गुणीराम आ गया था। मँगली न दखा कि उस क होंठ सहमा सूख गए हं। आँखों में साँप सी चमक है और एक काँइयापन उस का आकृति पर रग रहा है।

'ले शर्बत पा एकदम ठडाटीप है। कलजा तरा ठडा हा जाएगा। भूल जाएगा कि तू गर्मी मं आई है।

मँगला न गटागट शर्बत पा लिया। फिर वह सात्वना का साँस ले कर बाला अब जा मं जा आया बरना ता मुझ लगा कि कै हान वाला है।

पुजारा न इधर-उधर दखा और कहा 'किया पधारा ह मँगला रानी। अरी निगोड़ी तू ता मरे बुलान पर भा नहीं आता।

आज भा नहीं आता। तू मुझ जरा भ अच्छा नहीं लगता, पर आज एक जरूरी काम स आई हूँ। तने म्हारा म्हा ... और पापन (अवश्य) करना है।

पुजारी गुणीराम ढीठ कुत्ते की तरह अपनी राफें फाड कर मुस्कराया। वह कभी भी अर्थहीन नहीं मुस्कराता था। पैंतालीस वर्षीय गुणीराम इस मदिर का पुश्तैनी पुजारी था। उस के दादा परदादा और बाप भी इसी स्थल के पुजारी थे। मदिर में वर्ष में दो बार मेला लगता था। तब लाखो का चढ़ावा आता था पर गुणीराम ने दान पात्र के ताले की एक डुप्लीकेट चाबी बना रखी थी उस में से वह बडी सफाई से इतने रुपए निकाल लेता जितने में किसी को हेराफेरी का वहम नहीं होता था। वह दर्शनार्थियों को आशीर्वाद के फूलों से लाद देता था और मनोकामनाओं के पूर्ण होने को कहता था। वैसे भी यह देवता 'मनोकामनापूर्ण देवता के नाम से विख्यात था। दूर दराज में स्थित होने के बावजूद सुबह शाम भक्तजनो का आवाजाही रहती थी। श्रद्धा भक्ति और आस्था से परिपूर्ण भक्तजन। पर गुणीराम ने देवता की महिमा समझ रखी थी। वह देवता के नाम पर खूब सुख भोगा करता था।

तभी तो वह अपने प्रभु के नाम पर एक अय्याश जीवन व्यतीत करता था। दुष्ट स्वभाव विसगतियो से भरा जीवन, ईश्वर का पाठ पढाते पढ़ाते देह की किताब पढने वाला विलासी। पर हर समय मुखारविंद से प्रभु प्रभु, हरे कृष्ण हरे राम शिव शिव उच्चारण करने वाला।

पुजारी ने चार चार शादियाँ कीं। पहली पत्नी बाँझ थी। उसे छोड दिया। दूसरी पत्नी के भी कोई सतान नहीं हुई। तीसरी भी बजर धरती रही और चौथी ने ही वास्तविक वशज एक पुत्र दिया। सब का पीठ पीछे कहना था कि वह अत्यत चालाक थी। वह भी बिना खूँटे की गाय की तरह भटकती रहती थी। उस ने तीनों पत्नियों को अलग अलग मकान बनवा दिए थे। उन्हें गुजारे को भत्ता देता था। आय भी खूब थी न? इस के अतिरिक्त उस ने अनेक पर स्त्रियो से अनुचित सबध बना रखे थे। पुजारी अत्यत ही पुष्ट देहधारी था। रग गोरा चिट्टा। बडी-बड़ी आँखें। त्रिपुड निकाले कानों में सोने की मुरकियाँ पहनता था। गोपद लबी चोटी। अत्यत ही आकर्षक व्यक्तित्व था उस का। वह समझौतावादी था। वह बड लोगों, सेठ साहूकारो और सरकारी अधिकारियो से कभी भी नहीं उलझता था। उन की हाँ में हाँ करना उस का परम धर्म था। किन्तु अपने से निर्बल व्यक्तियों को वह घास भी नहीं डालता था। कई बार तो उस ने अत्यत निर्भीकता से मदिर के देवता के समक्ष वह सब कुछ किया था जिसे करते हुए धर्मभीरू आम आदमी की आत्मा तक काँप जाती है।

वह सदा दर्शनार्थियों को भाग्यवाद पर भाषण दिया करता था। कहता था भाग्य सर्वोपरि है और भाग्य का निर्माता ईश्वर होता है। जरा सोचो मेहनत एक मजदूर भी करता है और एक सेठ भी। सेठ एक दिन में हजारों के वारे न्यारे करता है और मजदूर रूखी सूखी भी प्राप्त नहीं कर सकता यह सब क्या है? यही तो भाग्य है ईश्वरीय वरदान ।

पुजारी कभी भी आत्म विश्लेषण नहीं करता था। उसे इस से भय लगता था। आदमी अपने भीतर झाँक ले तो घिनौने सच के दर्शन न कर ले ? इसलिए पुजारी अतर्लोक की यात्रा कभी करता ही नहीं था।

इस बीच मँगली ने शर्बत का गिलास खाली कर प्रसन्न हो कर कहा, आह कलेजा ठडा हो गया। जी मोरा हो गया। उस ने पल्ले से फिर मुँह को पोंछा। काँचली में उस का यौवन दिख रहा था। पुजारी ने उधर उधर देखा। फिर गहरी आत्मीयता से पूछा 'आज तू इधर क्यों आई?

'मुझे पाँच हजार रुपए चाहिए। उस ने साफ़ साफ़ कहा।

'पाँच हजार, क्या जेवर बनाने हैं?' पुजारी ने जरा विस्मय से पूछा।

'जेवर बनाने नहीं हैं जो मेरा असली जेवर है उस की रिच्छा करनी है।

असली जेवर यह कौन सा असली जेवर है तेरा मेरी पूगलगढ की पद्मिनी।

'मेरा धणी मरद। उस ने सगर्व कहा।

सुखला मिर को सहलाता पुजारी को मन ही मन गालियाँ देता हुआ चल पडा। उस की आकृति से लग रहा था कि उस के बालों की जड तक हिल चुकी है।

पुजारी गुणाराम क्रूर तटस्थता से घिरा जडवत उसे हिंस्र नेत्रों से देखता रहा। फिर उस ने उसे गंदी गाली दी।

अचानक पतला मधुर स्वर सुनाई पडा 'पुजारीजी! पगेलागूँ।

जैसे कोई चमत्कार होता है, वैसा ही चमत्कार हुआ कि पुजारी की हिंस्र आकृति एकदम प्रसन्नता से नहा उठी। अपने भीतर की मिठास को अपने स्वर में उँड़ेलते हुए उस ने कहा 'आ आ मँगली आ आज कियाँ रस्तो बिसरगी। मैं तो आँखें फाड़ फाड़ कर तेरी सन्थ उडीकूं हूँ।

मंगली ने एक खतरनाक अगड़ाई ले कर लंबा सांस लिया। फिर पूजा स्थल के बाहर बने चौके पर बैठ गई। कसूमल रंग के ओढ़ने के पल्लू से गोरे ललाट का पसीना पोछ कर उलाहने भरे स्वर में बोली अरे पुजारीजी थोड़ा नी धवरय रख। एक छिन भर बिसाँई तो खान दे। बळते तावडै (धूप) में आई हूँ। गला सूख रहा है। पैला ठंडा पाणी पाव।

वह उल्लसित हो कर बोला 'पाणी क्या मैं तुझे शर्बत पिलाऊँगा। चंदन का असली चंदन का है। सेठ जगदीश चन्द ने आज ही तीन बोतलें देवता के चढ़ाई हैं। तू बिसाँई खा मैं अभी शर्बत लाया।

पुजारी गुणाराम की विनम्रता व कोमलता अपूर्व थी। मँगली को देख कर कुछ क्षण पूर्व उस में जो क्रूरता और हिंस्रता थी वह लुप्त हो गई थी।

मँगली ने एक दृष्टि चारों ओर दौड़ाई। मंदिर के आगे पीपल का पुराना पेड़। थोड़ा दूर पर दो घने गहरे खजड़। एक सूखा नाम। फिर बियाबान रेगिस्तान। उस के ऊँचे-नीचे टीबे। उन धोरों की तलहटी में बसा है एक कस्बा।

खजड की छाया में एक साँप कुडली मारे बैठा था। कुछ काल कोई इधर-उधर रेंग रहे थे। उसी समय दो कौवों ने काँव-काँव करना शुरू किया। अचानक कौवे ने शांत पड़े साँप पर चोंच मारी। साँप ने जल्दी से फन उठाया। थोड़ी दूर कर का बिना पत्ता का छोटा पेड़ था। इस पेड़ की जड़ों में चूहों के बिल थे। एक चूहा बाहर निकला और साँप को देख कर जल्दी से भीतर चला गया। साँप भी शीघ्रता से उस बिल की ओर लपका। कौवे अभी भी काँव-काँव कर रहे थे। साँप चूहे वाले बिल में घुस गया।

मँगली जानती थी कि साँप चूहे को दबोच कर मार देता है और फिर उसे धीरे धीरे निगल जाता है—साबुत।

यह पुजारी भी साँप है। मँगली ने सोचा—धर्म्मों से यह चुहियाओं को अपने पाखंड और पैसों का शिकार बना कर उन्हें निगल रहा है। न जाने परमात्मा इस दुराचारी और पापी को दंड क्यों नहीं देता?

गुणाराम आ गया था। मँगली ने देखा कि उस के होंठ सहसा सूख गए हैं। आँखों में साँप सा म्हक है और एक कोईयापन उस की आकृति पर रेंग रहा है।

'ले शर्बत पी एकदम ठण्डाठाप है। कलेजा तक ठंडा हो जाएगा। भूल जाएगी कि तू गर्मी में आई है।

मँगली ने गटागट शर्बत पी लिया। फिर वह सांत्वना की साँस ले कर बोली अब जी में जी आया वरना तो मुझे लगा कि कै हाल चला है।

पुजारी ने इधर-उधर देखा और कहा 'किया पधारी है मँगली रानी। अरी! निगोड़ी तू तो मेरे बुलाने पर भी नहीं आती।

अब भी न आती चल्ती। तू मुझे जरा भी चोखा नहीं लागता पर आज एक जरूरी काम से आई हूँ। तेरे म्हारा मन्तर जाप और परदपता (अवसर) करना है।

पुजारी गुणीराम ढीठ कुत्ते की तरह अपनी रार्फे फाड कर मुस्कराया। वह कभी भी अर्थहीन नहीं मुस्कराता था। पैंतालीस वर्षीय गुणीराम इस मदिर का पुश्तैनी पुजारी था। उस के दादा-परदादा और बाप भी इसी स्थल के पुजारी थे। मदिर में वर्ष में दो बार मेला लगता था। तब लाखों का चढ़ावा आता था पर गुणाराम ने दान पात्र के ताले की एक डुप्लीकेट चाबी बना रखी थी, उस में से वह बडी सफाई मे इतने रुपए निकाल लेता जितने में किसी को हेराफेरी का वहम नहीं होता था। वह दर्शनार्थियों को आशीर्वाद के फूलों से लाद देता था और मनोकामनाओं के पूर्ण होने को कहता था। वैसे भी यह देवता 'मनोकामनापूर्ण देवता के नाम से विख्यात था। दूर दराज में स्थित होने के बावजूद सुबह शाम भक्तजनों की आवाजाही रहती थी। श्रद्धा भक्ति और आस्था से परिपूर्ण भक्तजन। पर गुणीराम ने देवता की महिमा समझ रखी थी। वह देवता के नाम पर खूब सुख भोगा करता था।

तभी तो वह अपने प्रभु के नाम पर एक अय्याश जीवन व्यतीत करता था। दुष्ट स्वभाव विसगतियों से भरा जीवन ईश्वर का पाठ पढ़ाते पढ़ाते देह की किताब पढने वाला विलासी। पर हर समय मुखारविंद से प्रभु प्रभु, हरे कृष्ण हरे राम शिव शिव उच्चारण करने वाला।

पुजारी ने चार-चार शादियाँ कीं। पहली पत्नी बाँझ थी। उसे छोड दिया। दूसरी पत्नी के भी कोई सतान नहीं हुई। तीसरी भी बजर धरती रही और चौथी ने ही वास्तविक वशज एक पुत्र दिया। सब का पीठ पीछे कहना था कि वह अत्यत चालाक थी। वह भी बिना खूँटे की गाय की तरह भटकती रहती थी। उस ने तीनों पत्नियों को अलग अलग मकान बनवा दिए थे। उन्हें गुजारे को भत्ता देता था। आय भी खूब थी न? इस के अतिरिक्त उस ने अनेक पर स्त्रियों से अनुचित सबध बना रखे थे। पुजारी अत्यत ही पुष्ट देहधारी था। रग गोरा चिट्टा। बड़ी-बड़ी आँखें। त्रिपुड निकाले कानों में सोने की मुरकियाँ पहनता था। गोपद लबी चोटी। अत्यत ही आकर्षक व्यक्तित्व था उस का। वह समझौतावादी था। वह बड़े लोगों सेठ-साहूकारों और सरकारी अधिकारियों से कभी भी नहीं उलझता था। उन की हाँ में हाँ करना उस का परम धर्म था। किन्तु अपने से निर्बल व्यक्तियों को वह घास भी नहीं डालता था। कई बार तो उस ने अत्यत निर्भीकता से मदिर के देवता के समक्ष वह सब कुछ किया था जिसे करते हुए धर्मभीरू आम आदमी की आत्मा तक काँप जाती है।

वह सदा दर्शनार्थियों को भाग्यवाद पर भाषण दिया करता था। कहता था भाग्य सर्वोपरि है और भाग्य का निर्माता ईश्वर होता है। जरा सोचो मेहनत एक मजदूर भी करता है और एक सेठ भी। सेठ एक दिन में हजारों के वारे न्यारे करता है और मजदूर रूखी सूखी भी प्राप्त नहीं कर सकता यह सब क्या है? यही तो भाग्य है ईश्वरीय वरदान ।

पुजारी कभी भी आत्म विश्लेषण नहीं करता था। उसे इस से भय लगता था। आदमी अपने भीतर झाँक ले तो घिनौने सच के दर्शन न कर ले ? इसलिए पुजारी अतर्लोक की यात्रा कभी करता ही नहीं था।

इस बीच मँगली ने शर्बत का गिलास खाली कर प्रसन्न हो कर कहा 'आह कलेजा ठडा हो गया। जी मारा हो गया। उस ने पल्ले से फिर मुँह को पोंछा। काँचली में उस का यौवन दिख रहा था। पुजारी ने इधर उधर देखा। फिर गहरी आत्मीयता से पूछा 'आज तू इधर क्यों आई?

'मुझे पाँच हजार रुपए चाहिए। उस ने साफ़-साफ़ कहा।

'पाँच हजार, क्या जेवर बनाने हैं?' पुजारी ने जरा विस्मय से पूछा।

'जेवर बनाने नहीं हैं जो मेरा असली जेवर है उस की रिच्छा करनी है।

'असली जेवर. यह कौन-सा असली जेवर है तेरा मेरी पूगलगढ़ की पद्मिनी।

'मेरा धणी मरद। उस ने सगर्व कहा।

पुजारी की आकृति के भाव तुरत बदले। वह क्रूरता का परिचय देते हुए बोला अरी! मरने दे न उस साले को फिर तू बिना पखों का चिड़िया हो जाएगी। मैं तुझ उम्र भर राजरानी की तरह रखूँगा।

मँगली ने तीक्ष्ण दृष्टि से पुजारी को देखा। फिर शाप भरे स्वर में वह बोली 'तू आदमी नहीं राखस है। राखस हो नहीं भड़भाखस है। अरे! सदा ईश्वर की छत्तर-छाया में रहता है और दया हया का बान भी नहीं करता।

पुजारी ने उसे चेतावना देते हुए कहा 'सुन मँगली तू मुझे अणूति बात मत कहा कर, कलेजे में शूल चुभता है। उस ने एक पल नीले आकाश की ओर देखा। फिर जैसे उस सच का परिचय कराते हुए कहा 'कौन सा सुख पा रहा है तू उस के साथ? वह साला बीमार रहता है। कमजोर है सूगला है। उस के पास है एक टूटा झोंपड़ी टूटे बर्तन भाँडे पहनने के चिथड़े नरक में रह कर भी तू उस का चिन्ता करता है। गोली मार उसे।

'तू तो सारे काम इस देवता के कहने पर ही तो करता है? और तुझे तेरा यह देवता कभी भी क्या चोखा काम करने के लिए नहीं कहता? गुणी मेरी बात कान खोल कर सुन मुझे पाँच हजार रुपए चाहिए। अपने धणी का इलाज कराना है। वह उठ खड़ी हुई। घृणा मिश्रित तल्ख़ स्वर में बोली 'मुझे तुझ से घिन है। थूकना चाहती हूँ तेरे डील (शरीर) पर। सोचा था कि कुछ भी हो जाय पर तेरे सामने घाघरा नहीं खोलूँगी। तुझे अपना डील नहीं दिखाऊँगी पर धणी की माँदगी ने मुझे बेरम कर दिया। तू मेरे धणी को नहीं जानता। तू जितना दुष्ट और चालाक है वह उतना ही दयालु और भला है। सुन मुझे पाँच हजार रुपए चाहिए। मुझे उसे किसी भी कीमत पर बचाना है।

'यदि मैं यह सौदा मंजूर न करूँ तो?

'फिर मेरा डील देखने की मरते मरते मन में ही ले जाना। तू पिछले पाँच साल से यही तो चाहता है। अपनी चेलियों से तूने संदेशे भी भेजे थे। अच्छा मैं चलती हूँ।

पुजारी ने उस का हाथ पकड़ना चाहा कि वह आहत साँपिन की भाँति फुन्कार कर बोली 'मुझे छूना मत. पहले मेरी शर्त मान। एक बात सोच लेना कि मैं मँगली हूँ—मेरे साथ घात करेगा मैं जिस जाति की हूँ उस में खसम बदलना कोई मैणा (उपालम्भ) नहीं। पर तू पुजारी है भरे बाजार में एक-एक कपड़ा खोल दूँगी। इज्जत मिट्टी में मिल जाएगी।

उस ने शांत स्वर में कहा 'तू बिरथा ही बात का बतगड़ बना रहा है। मैं पिछले पाँच सालों से तुझे पाना चाहता हूँ। पागल हूँ तेरे लिए। यह गोरी देह। पाँच हजार रुपयों से बसी थोड़े ही है। तू '

उसी समय धुआँफुआँ होती पुजारी की दूसरी लुगाई जैनका आ गई। गहुँए रंग का गठीले बदन वाली स्त्री थी वह। आते ही बोली 'कल तुम मेरे घर क्यूँ नहीं आए। तुम नहीं जानते थे कि मेरी तबीयत खराब है।

'तबीयत खराब और तुम्हारी? सुन किसनू की माँ!' पुजारी ने रुखाई से कहा 'तू खुद बीमारी है।

'फिर मुझे किसनू की माँ कहा?' उस ने अंगार की तरह दहकते हुए कहा 'जीभ जले। मैं ने तुम्हें लाख बार कहा है कि मुझे किसनू की मा मत कहा करो। मैं गंगा की माँ हूँ। अपनी बेटी की माँ।

'मैं उस हरामजादी को अपनी बेटी नहीं मानता। न जाने कौन पापिन उस लड़की को मन्दिर के अहाते में फेंक गई। किस पापी का यह पाप है। और एक तू है नीच रॉड उस गंगा के नाम से पुकारती है। जानती भी है गंगा का बच्ची कि गंगा का क्या मान्य है? वह पाप नाशिनी है जग तारिणी है। और तू ने

जैनका का गुस्सा से जबड़ा भिंच गया। वह जमीन पर पाँव पटक कर बोली 'किस का पाप है मैं जानती हूँ। यह तुम्हारा पाप भी हो सकता है। पर यह तुम्हारा पाप कैसे होगा। तुम तो नामर्द हो। पर यह देवता के मन्दिर में मिली है। उस्य इस की माँ की गठजी का किसी ने अनूठा लाभ उठाया है। अपने पाप को पुण्य स्थान पर छोड़

गई यह तुम्हारे देवता का आशीष है। मैं ने इसे बेटी बना लिया। पाल लिया। समझे। एकाएक उस की निगाह मगली पर पड़ी। वह घृणा से अपनी दृष्टि मँगली के चेहरे पर चुभोती हुई बोली 'तू कुण है रूपाली? सुन यह अजगर है। लुगाइयाँ का निगलने वाला अजगर. क्यों इस के पास आई है। यह किसी भी तरह फूटरी लुगाई को पाना चाहता है। बडा लुगाईखोर है। लेकिन यह भी सच है कि पाप का घडा जरूर भरता है।

'तू राँड अपनी जबान के लगाम देगी या तुझ पर नालदार जूतो की बरखा करूँ।

और तुम कर भी क्या सकते हो? उस ने सहसा बात बदल कर कहा 'मुझे सौ रुपए चाहिए। गगा के लिए दवा लानी है।

'इतना पैसा मेरे पास नहीं है। धर्मार्थ औषधालय में जा कर दवा ले आ। मुझे इस से कोई लेना देना नहीं बाँझड़ी कहीं की।

मँगली तो स्वय जानती थी कि पुजारी वास्तव में जाति का कुत्ता है। धर्म और भलमनसाहत का एक रामनामी चोगा इस न पहन रखा है। हर बड व्यक्ति को उस ने पटा रखा है। काम निकल जाने पर तो रू का एक बाल भी नहीं दिखाता। बहुत स्वार्थी है। घुन्ना है।

जैतकी उस पर लगभग झपटती हुई बोली, 'तुम्हार पास पैसा नहीं है। झूठे कहीं के हजारों रुपयों का घोटाला करते हो। भगवान के गल्ले में से रुपए चुरा लेते हो। पुजापे म हेराफेरी करते हो भक्तों को लूटते हो तुम इतन पापी हो कि तुम ने स्वय भगवान का हीरा का हार चुरा कर बेचारे सूरतिए को फँसा कर उसे जेल करवा दी। मैं तुम्हार सारे पोत (रहस्य) खोल दूँगी। बता दूँगी कि

'चुप मर राँड। ले सौ रुपए, । पुजारी ने सौ रुपए अटी में से निकाल कर दे दिए। वह जात-जाते बोली 'मैं टेढी अँगुली स भी घी काढ़ना जानती हूँ मेरे भरतार। और बहन सुनना। वह मँगली के सन्निकट आ कर बोली 'इस लुगाईखोर स बचना। मैं इस की घरवाली हूँ पर इस ने मुझे खुजलाई कुतिया की तरह सूँघ कर फक रखा है। कह दिया कि तू माँ नहीं बन सकती या यह माँ बना नहीं सकता यह तो प्रभु जान।

वह चली गई।

पुजारी कई पल तक निस्पद रहा। मँगली क नयन सँकरे हो गए थे। आकृति गभीर।

फिर जैसे चौंक कर एक कृत्रिम मुस्कान अपन होठो पर लाता हुआ पुजारी बोला 'इस नालायक की बार्ता म मत आना। यह अध पागल है। बच्चे न होने के कारण इस के मस्तिष्क का लेखा-जोखा बिगड गया है। बहुत ही मूढमति है। मेरे मदिर क देवता की आराधना वदना छोड़ कर एक तात्रिक के चक्कर में पडी। अपना सरवस गँवा कर भी यह कुछ नहीं पा सकी। फिर उस झाडगर क चक्कर में आ कर मुझ पर मूँठ (मृत्यु मत्र) फिंकवाई पर जिस का प्रभु रखवाला है उस का कौन क्या बिगाड सकता है। मूँठ मदिर में प्रवेश नहीं कर पाई और उस नाम पर गिर पडी। सामने देखो वह सूखा हुआ नीम जा एकदम हरा भरा था एक हा दिन में सूख गया। मृत्यु क मत्र की भयानकता दखो।

मँगली ने व्यग्य से मुस्करा कर कहा, भला ईश्वर तेरा क्या बिगाड़ सकता है? वह भा तो निरबल का हा सताता है। बलवान का तो भगवान भी कुछ नहीं करता।

'तू नास्तिक हो रही है।

'सुन मुझे कब आना है। मुझे पूरे पाँच हजार रुपए चाहिए। मैं इस स कम नहीं लूँगी। धणी की माँदगी का उपचार कराना है न? मुझ उस पर दया आती है।

'परसों से मला शुरू है। मले के दूसर दिन आ जाना। मल में हा तो वार-न्यार होंगे इतनी बडा रकम है।

अच्छा पचास रुपए अभी दे तो? धणी के लिए दवाइयाँ ले जानी हैं।

'पचास? पहले मुझे ?

मँगला उस की बाँहों में चली गई। कुछ पलों के बाद वह पचास रुपए ले कर चल पड़ी। पचास रुपए लेते हुए उसे अपना पति याद आ गया। वह कोमल आर्द्रता से भर आई। मन ही मन बोला 'तेरा इलाज कराना है। तेरी मौत की सोचती हूँ तो मेरा कलजा मुँह को आता है।

वह विचारों में लीन चलती रही। उसे अपना पति बार-बार याद आ रहा था।

मेला भरपूर था। पुजारी पीताम्बर, रुई की जाकेट सिर पर टोपी गले में रुद्राक्ष की माला पहने एकदम पुजारी लग रहा था। उस के सारे वस्त्र पीले रंग के थे। वह मुख्य मंदिर के बाईं ओर चनी चौकी पर बैठा था। स्त्री पुरुष और बाल-वृद्ध उस के चरणों को स्पर्श कर रहे थे। उन्हें वह आशीर्वाद दे रहा था।

कभी-कभी कोई जिज्ञासु उस से प्रश्न करता 'पुजारीजी कौन-सा व्यक्ति श्रेष्ठ है।'

'जो चरित्रवान है अवैध सम्बंध नहीं करता है मांस-मदिरा का सेवन नहीं करता है छल प्रपंच नहीं करता है चोरी-जारी नहीं करता है ईश्वर में गहरी आस्था रखता है, दान पुण्य करता है दुर्बल पर दया करता है वही श्रेष्ठ नर है। उसे ही ईश्वर इहलोक में सुख-संतोष और शांति देता है और परलोक में मोक्ष।

मँगला भी मेले में आई थी। उस ने पुजारी के चरण छू कर कहा 'मेरी बात याद है न कल से मेरे धणी की तबीयत ज्यादा खराब होती जा रही है।

तभी मन्दिर का एक ट्रस्टी-सेठ पन्नालाल आ गया। उसे देखते ही पुजारी ने पैंतरा बदला। कहा 'माई! तेरा धणी निरोग हो जाएगा। फिर सेठ से बोला 'सेठजी! यह बहुत गरीब है इस का पति बीमार है। इस बेचारी को सौ रुपए दे दीजिए। जा माई जा भगवान तेरा भला करेगा।

सेठ पन्नालाल ने सौ का नोट दिया। मँगला ने उसे मुट्ठी में बंद किया। पुजारी ने सेठ को आशीर्वाद दिया 'कल्याण हो आप का आप के पुण्य प्रताप से यह धरती अपनी धुरी पर घूम रहा है।

मँगली उस नाटकबाज का श्रेष्ठ नाटक देख कर मन ही मन मुस्कराने लगी।

मँगली ने देखा—अपार जनसमूह उमड़ा हुआ है। पुजारी के सारे रिश्तेदार मंदिर की व्यवस्था व चढ़ावे को सँभालने में लगे हैं। दान पात्र की ताला बंद पेटिका के अलावा बाहर भी रुपए बहुत आ रहे हैं। मँगली ने एक बात की ओर ध्यान और दिया कि जब कोई पैसे वाला आता है तो चढ़ावा लेने वालों की आँखों में आदरभाव व्याप्त हो उठता है। वे भीड़ को हटा देते हैं। जितने अधिक पैसे उतने ही नजदीक से दर्शन।

मँगला ने एक चवन्नी चढ़ाई। कई बार सिर झुका कर हाथ जोड़े पर देवता से नजर नहीं मिला सकी। फिर वह धक्के खाती हुई बाहर की ओर चल पड़ी। मन्दिर के बाहर पुजारी का इकलौता बेटा दिख गया। कानों में सोने के लौंग हाथ में सोने का कड़ा और गले में सोने की जंजीर।

मँगली के मन में एक बार देवता के प्रति अरुचि पैदा हुई। सोचने लगी कि उस की दृष्टि बराबर क्यों नहीं है। वह एक को भूखा-नंगा रखता है और दूसरे को सात तरकारी और चौंसठ व्यंजन देता है। यह भेदभाव क्यों?

सहसा उसे पुजारी की बात याद आई कि मनुष्य अनेक जन्मों के कर्मों का फल भोगता रहता है।

वह राह में चलती चलती सोच रही थी कि 'फिर यह कम्बख्त पुजारी किस जन्म के अच्छे फल भोग रहा है। सरासर दुराचार करता है मंदिर के पैसों का घोटा करता है न जाने क्या-क्या नहीं करता? यह उस के कौन-से जन्मों के पुण्यों के इतने मीठे फल हैं जिस देवता दंड नहीं दे पाता और बड़े बड़े धर्मात्मा-धर्मिष्ठ इस का

घोर भरोसा करत हैं। पाँव छूते हैं और यह पापी-नीच दुराचारी देवता की नाक के नीचे अधरम करता रहता है और इस का कुछ नहीं बिगड़ता? हे भगवान! ऐसा क्यो ऐसा क्यों? वह तो आज इस पुजारी के कारण कि उस उस के पास सरबस देन जाना है—सोच कर दवता से नजर भी चार नहीं कर सकी। पर वह कर क्या? उस अपने पति का उपचार कराना जरूरी है। उस के लिए इतने ढर सारे रुपए लाए कहाँ से? ह प्रभु! यह कौन स जन्म का दड है। पर मैं जानती हूँ इस शरीर के जूठन मात्र से उस का पति नारोग हो जाय तो कितना बडा पुण्य हागा। वह उसे कितना प्यार करता है। पहले तो हिवड़ का हार हर घडी बना कर रखता था उस के लिए कठोर मेहनत कर दूध मलाई लाता था। पर उस के भाग फूटे हुए थे कि उस को इतनी पाजी बीमारी लग गई। भगवान उसे अच्छा कर दे। उस ने आकाश की आर देखा। मन ही मन कहा, 'मैं तो तिरिया धरम निभा रही हूँ। हे मनोकामनापूर्ण देव मुझ पर और मेरे धणी पर दया कर। मुझे इलाज के लिए रुपए तू ही दे दे। वह हाथ जोड़े चलती ही जा रही थी। हालाँकि चारों आर यात्रिया का शोर था पर वह इतनी आत्मलीन थी कि उसे बाहरी ससार की सुध बुध ही नहीं थी।

रात्रि का गहन तिमिर। बीच बीच में कुत्ते की भौं भौं या विचित्र तरह का रुदन। चारों ओर सन्नाटा। उस सन्नाटे में मँगली के पाँवों की पगरखी की हलकी हलकी थप थप। हर क़दम पर रेत उड रही थी।

वह मदिर के आगे आ कर रुकी। एक भय जनित प्रश्न ने उसे घेर लिया। यह देवता का मदिर है। वह कैसा पाप करन जा रही है। इस पुजारी के बच्चे को इस का भी भय नहीं लगता। सच वह देवता स भी नहीं डरता। वह काँप उठी। क्षणिक जडता उस में समा गई। फिर वह मदिर के पिछवाडे के छोटे दरवाज़े की आर गई। किवाड़ को धक्का दिया। किवाड खुल गए। वह भीतर घुसी। पुजारी उस का बेचैनी से इतज़ार कर रहा था।

आ गई मँगली तू ओह! इतजार की घडियाँ कितनी लबी होती हैं। मैं सोच रहा था कि तू झाँसा दे गई।

मँगली ने जैसे उस की बात को सुना ही नहीं वैसे बाली 'मैं पूरे पाँच हजार लूँगी?

'तू गैली (पागल) है। एसे मजे के समय में पैसों की बात करती है।

'मैं जरूर करूँगा। मैं पैसों के लिए ही तो अपन मन को मार कर तरे पास आई हूँ।

'ठीक है, ठीक है।' कह कर उस ने निज मदिर का दरवाजा धीमे से खोला। उस में अखड ज्याति जल रहा थी। उस के प्रकाश में देवता की आकृति और मदिर का सर्वस्व दृष्टिगोचर हो रहा था।

मँगली ने मन ही मन देवता की ओर बिना देखे ही हाथ जोड़े और कहा क्षमा करना दवता। इस बीच पुजारी उन्मादित हो गया था। उस न मँगली को बाँहों में भर कर ताबड़तोड़ चूमना शुरू कर दिया। उसे निर्वस्त्र करने लगा कि मँगली न झटक स उसे रोक दिया, 'तू पागल है क्या? देवता क सामने इतना बडा पाप ? अरे डाकण (डायन) भी एक घर टाल दती है।

'मुझे तू मूर्ख लगती है। उस ने उसे धीमे से डाँटा 'मेरे देवता को तू वेसी जानती है कि मैं? मैं हर काम उन का आज्ञा से करता हूँ। जानता है जो कुछ भी हाता है उस की आज्ञा स हाता है। उस का आज्ञा के बिना एक पत्ता भी नहीं हिलता। फिर परम प्रसन्न करन वाला यह कार्य तो प्रभु इच्छा के बिना हो ही नहीं सकता। पुजारा का आकृति उत्तेजना और व्यग्रता क कारण ताम्रवर्णी हो गई। हाठ सूख गए थे उस क।

'तर देवता ने तुझे आज्ञा दी है पर मुझे नहीं। मैं यहाँ तर सग गन्दा काम नहीं करूँगा। इतना बडा पाप?

'जिद छोड। वह फिर उस अनावृत करने लगा। वह नहीं मानी। उस न दृढ़ता स कहा 'यहाँ कभी

नहीं।

पुजारी न बहुतेरा समझाया पर वह राज़ी नहीं हुई। वह गुस्से में भर गया। बोला 'छिनाल बेसी नखरे मत दिखा। तू धर्म शास्त्र ईश्वर और पाप पुण्य को क्या समझती है। मैं पुजारी हूँ मेर आदेश का पालन कर।

'नहीं बाहर चल फेरी में।

कामुकता से आहत पुजारी ने उस के सतीत्व का हरण किया। फिर उसे दो हज़ार रुपए देते हुए कहा 'परसा फिर आना तीन हजार और दे दूँगा।

'नहीं पाँच हजार द अभी। अपनी बात से मुकरता है।

'समझती क्यों नहीं। परसों दे दूँगा। आज अलमारी की चाबी पत्नी के पास रह गई है। अपने देवता की सौगंध।

मँगली ने शात निशीथ पहर के सन्नाटे में राड़ बढ़ाना ठीक नहीं समझा। उसे पता था कि पुजारी घृणित हिंसा भी कर सकता है। वह कुछ भी नाटक करके उसे चोर बना सकता है। यह बड़ा नीच है। वह लाचार थी। इस तरह की अकड़ और हठ उस के पति के उपचार में बाधा बन सकते हैं। वह विष का घूँट पी कर रह गई। पराजिता की तरह धीरे धीरे वह मंदिर के बाहर निकलने लगी। निकलते निकलते उस ने धमकी भर स्वर में कहा 'मुझ से छल किया तो मैं तीसरी करके रहूँगी। समझे। उस के मन में ग्लानि क काँटे चुभ रहे थे। उस ने सब कुछ विवशता और जानकारी में किया पर उस लगा कि मंदिर में किया यह पापाचार सुफल की प्राप्ति नहीं देगा। अमगल की आशकाएँ रह-रह कर उसे सताने लगीं। अनिष्ट हान का सदेह उसे घेरने लगा। अपनी ग्लानि स उबरने के लिए उस ने मन ही मन कहा 'हे ईश्वर मैं ने जो कुछ किया अपने धणी के खातिर।

वह अँधेरे में तेज़ी स चलने लगी। वह बार-बार अपनी उस छाती पर जलन महसूस कर रही थी जहाँ रुपए खोंसे हुए थे।

दूसरे दिन ही मंदिर और मंदिर के अहाते में स्थित पुजारा के निवास स्थान में एक भयकर हत्याकाड हो गया। पुजारी की पत्नी और उस के एक मात्र दस वर्षीय पुत्र की अत्यत ही निर्ममतापूर्वक हत्याएँ कर दी गईं। पुजारी क सिर पर भी गहरी चोट आई थी वह अस्पताल म भर्ती था। चोर हत्यारे पचास तोले सोना चार किलो चाँदी हज़ारों रुपए, देवता के छत्र मालाएँ और बर्तन ले गए। मंदिर के मनोकामनापूर्ण देवता का मुकुट हार और उस के हीरे जड़ित नेत्र भी निकाल ले गए।

मंदिर में भीड़ थी। पुजारी को अस्पताल में भर्ती करा दिया गया था। उस की हालत चिन्ताजनक थी। उसे खून दिया जा रहा था। उस का आपातकालीन ऑपरेशन करने की स्थिति बन गई थी। शहर म आतक छा गया। लोग क़ानून-व्यवस्था के विरुद्ध प्रदर्शन करने लग। स्वय डी आई जी (पी) मामले की छानबीन कर रहे थे।

ग्यारह दिन बीत गए। अपराधिया का सुराग नहीं मिला। पुलिस व खोजी कुत्तों की मदद स और पाँवों के निशानों से इतना पता अवश्य चला कि हत्यारों की सख्या तीन चार थी। क्योंकि पाँवों के निशान पक्की सडक तक आ कर लुप्त हा गए थे।

मँगली तो दहशत से घिरी अपन कच्चे मकान में गुमसुम सी बैठी थी। उस का पति उदास और आत्मलीन सा बैठा रहता था या कभी-कभी सोया सोया कराहता रहता था। हालाँकि मँगली का सहारा टूट गया था पर वह अपन पति को आश्वस्त करती रहती थी कि [illegible] ।। मँगली की हिम्मत भी नहीं होती थी कि वह पुजारीजी के [illegible] । मे अतर बहुत था। अफ़वाहों

का घोल बहुत था।

आखिर वह एक माह बाद मदिर गई। उस का साहस मदिर में जाने का नहीं हुआ। वह कहीं से मदिर के सदर्भ में अपराधी महसूस करती थी फिर भी वह राम राम करती भीतर गई। दवता के दर्शन किए। मन ही मन क्षमा माँगी, 'मजबूरी में किए पाप के लिए मुझे छिमा करना देवता।

पुजारी के भतीजे से चरणामृत लते हुए सहमते सहमते पूछा 'पुजारीजी की तबीयत कैसी है भाई सा।

उस के भतीज ने कहा 'हमारा तो सब कुछ लुट गया बहन पुजारीजी का तो वश ही मिट गया। और वे अधे भी हो गए हैं। सिर पर कोई गहरी चोट लगी कि नेत्रा की ज्योति ही चली गई। भगवान की माया अपरपार है। न जाने मनुष्य कौन से जन्म के पाप का फल पाता है।

उस ने आह छाड कर फिर कहा फिर भी ईश्वर जो करता है वह अच्छा ही करता है।

मँगली उन बार्ता का मर्म और रहस्य नहीं समझ पाई। बहुत गूढ़ बातें थीं। पर वह फिर दवता की ओर नहीं देख पाई। एक विचित्र सा आतक था उस के भीतर। वह बाहर निकल आई। बाहर पुजारी की तीसरी पत्नी खडी खडी एक स्त्री स बतिया रही थी, 'नीच और पापी मेरा पति दड पा गया न? पाप की कमाई जैसे आई थी वैसे ही चली गई।

'पर हमारे देवता?'

'देवता समय के साथ मर जाते हैं। यदि ऐसा नहीं होता ता क्या निज मदिर में गदे काम हाते मेरा पति उस के नाम पर अन्याय, अत्याचार, लूट खसोट करता। चार चार ब्याह करता? क्यो नहीं उस की मनोकामना पूर्ण हुई। यदि देवता में सत्व हाता तो वह पुजारी की पहली लुगाई को बेटा बेटी जरूर दे देता। क्यों पुजारी का चार चार शादियाँ करनी पडतीं? नहीं बहन नहीं, देवता भी समय के साथ स्वर्ग चले जाते हैं और रह जात हैं पत्थर। कलियुग है न जो नहीं देखा है उसे देखना पडेगा।

और दवता की आँखें तक निकाल ले गए वे हत्यारे।

'कहा न देवता नहीं रहे। देवता होते तो क्या वे हत्यारा को पकड़वा नहीं दते? पुलिस खोज कर रही ह। देवता ने अपने आप तो चोर हत्यारों को नहीं पकड़ा। फिर कहाँ है देवता। जो पुजारी की भी मति को नहीं सुधार पाया वह ससार को क्या सुधारेगा। वह एक पल रुक कर फिर बोली 'तू मान चाहे न मान स्त्री की हाय देवता क आशीष से भी अधिक असर करती है। इस लुगाईखोर पुजारी न तीन तीन गरीब लुगाइयो का जीवन जहर किया है अब खाएगा उम्र भर ठोकरें।

मगली चल पडी। विचित्र विचार उस के भीतर आ-जा रहे थे। उस लगन लगा कि सचमुच देवता मर गए हैं। उन में सत्व नहीं रहा यदि एसा होता तो पुजारी वह सब कुछ कभी नहीं कर पाता जो उस ने मामा क बाहर हो कर किया।

और वह तेज तेज चलने लगी आशकाओं व प्रश्नों से घिरी।

राजस्थानी से अनुवाद स्वय लेखक

मोतीलाल जोतवाणी

प्रेम की प्रेरणा

महेश नींद से जागा तो उस ने बिस्तर पर पासा पलट कर देखा कि पारो पास नहीं थी। वह बिस्तर पर से न जाने कब उठ कर सुबह सवेरे के काम-काज में जा लगी थी। उस ने बेडरूम में चारों ओर देखा उसे बेडरूम गूँगा गूँगा-सा लगा। रात भर उस में एक अजीब क़िस्म के तनाव के कारण गूँगापन छाया रहा था।

उस ने सोचा कुछ महीनों से यह सब ऐसा क्यों हो रहा है? पहले तो कभी ऐसा नहीं था। उसे याद हो आया कि पति पत्नी दोनो की आँखें न जाने किस प्राकृतिक नियम के अतर्गत लगभग एक ही समय खुला करती थीं। कुछ दिन पहले उस ने उस सबध में पारो से पूछा भी था 'क्यों पारो पहले तो सुबह सवेरे लगभग एक ही समय हम दोनों नींद से जागा करते थे और हमारी आँखें एक-दूसरे से मद-मद मुस्करा कर बतियाती थीं अब यह बेडरूम इस तरह गूँगा क्योंकर हो गया है?

पारो ने पहले उस के चेहरे में अपनी नजरें गड़ा दी थीं फिर जल्द ही वह उन नज़रों को वहाँ से हटा कर बोली थी 'यह इसीलिए हुआ है कि अब हम दोनों अपने आप को लगभग एक ही समय नींद की गोद में अर्पित नहीं करते अब तुम्हारा ज़िन्दगी का टाइम टेबल बिगड गया है ' और फिर वह वहाँ से चली गई थी और महेश सोच में पड़ गया था। वह इस बात को ले कर आज भी सोच में पड गया कि सुबह नींद से जागते समय उन के चेहरों पर जो नई ताजगी दिखती थी वह कहाँ खो गई है।

उस ने सामने दीवार पर लगी घडी में समय देखा सात बज चुके थे। उस के मन में एक बार आया कि वह बिस्तर से उठ कर टॉयलेट चला जाए। लेकिन उसे इतज़ार था कि अभी पारो चाय के दो बड़े मगो ले कर उस के पहलू में आ बैठेगी। वे दोनों साथ बैठ कर इत्मीनान से चाय पीएँगे और एक दूसरे से गुज़रे हुए कल मौजूदा आज और आने वाले कल की बातें करेंगे। उन में कुछ बातें उन की जवान हो रही बेटी अनीता के बारे में भी होंगी। वह बिस्तर पर लेटा ही रहा। उस ने आँखें उठा कर ऊपर छत में निहारा। उसे लगा उस के घर की छत बड़ी मज़बूत है। उस ने चारों ओर देखा और महसूस किया कि वह छत जिन चार दीवारों पर टिकी हुई है वे चार दीवारें भी बड़ी मज़बूत हैं। फिर उस का ध्यान पास वाले कमरे की ओर गया। उस में से हलचल का अहसास न पा कर उस ने समझा कि अनीता अभी तक सोई हुई है। वैसे वह इतनी देर तक सोती तो नहीं है। आज क्या उसे अपने कॉलिज नहीं जाना है? पिछली रात को जब वह बडी देर से घर लौटा था तब अनीता अपने बेडरूम में जा चुकी थी। कल शाम को उस की बर्थ डे पार्टी थी और वह उस में सम्मिलित न हो सका था। उस ने उस के कमरे का दरवाज़ा खोल उस उस के जन्म दिन की मुबारकबाद जा कर देनी चाही थी पर पारो ने उसे एकदम रोक कर कहा था 'नहीं अनीता यह कह कर जा सोई है—डैडी मुझे न जगाएँ।

उस ने उस मे अदाज़ा लगाया था कि माँ-बेटी दोनों उस से बड़ी नाराज हैं। उस ने पारो को स्पष्टीकरण देते हुए बडे प्रेम से कहा था 'देखो पारो मैं क्या करूँ? फ्लाइट देर से आई। बम्बई हवाई अड्डे पर ही एअर-क्राफ्ट में कोई नुक्स पैदा हो गया था। वहीं से एअर-क्राफ्ट काफ़ी देर से चला लेकिन पारो की उस की बात में कोई दिलचस्पी

न था। उस ने उसे न कोई उत्तर दिया था न ही कोई प्रश्न किया था। रात भर बेडरूम में कोई बातचीत नहीं हुई थी। रात भर बेडरूम गूँगा रहा था।

पास वाले ड्राइंगरूम की घड़ी से आठ बार मदिर-मदिर घटा ध्वनि हुई तो बेडरूम में महेश के बिस्तर तक ट्रॉली सरका कर ले आने की आवाज़ हुई। उस ने अपनी बद आँखें खोल कर देखा रामू सुबह की चाय बड़े ही औपचारिक ढग से टी पॉट मिल्क-पॉट और शुगर-पॉट में ट्रॉली पर रख कर ले आया था। वह महेश के लिए प्याले में चाय बनाने लगा तो महेश ने उस से पूछा 'क्यों रामू आज मेम साहिबा कहाँ हैं?'

उस ने दबी ज़ुबान से कहा 'साहब मेम साहिबा ने कहा तुम साहब के लिए चाय ले जाओ मैं ने चाय पी ली है महेश ने फिर पूछा और क्या अनीता अभी तक सोई हुई है?

रामू काफ़ी समय से उस के घर का नौकर था उसे घर परिवार की कई बातों का पता था। उस ने उत्तर दिया 'साहब छोटी मेम साहिबा तो आज बड़े सवेरे ही उठी थीं। आप कल उस की जन्मदिन पार्टी में नहीं थे इसीलिए उस ने आप से कुट्टी की है और वह आप से रूठ कर पाँच एक मिनट पहले अपने कॉलिज चली गई है

'इस समय कॉलिज गई है? महेश ने अपना गुस्सा नौकर पर निकाला। लेकिन क्षण भर में ही वह न जान किस सोच में खो गया। रामू मौक़ा पा कर कमरे में से धीरे धीरे बाहर निकल गया। चाय पीते पीते महेश ने चारों ओर की दीवारों और उन पर टिकी हुई छत की तरफ़ देखा। उसे महसूस हुआ कि इन पर ऑयल पेंट कराने से और बड़ी-बड़ी तसवीरें टाँगने से ये दीवारें मजबूत नहीं बन पाएँगी। और छत? अगर यह छत इस बड़े शैंडेलियर का बोझ उठा सकती है तो यह भी इसी कारण से मजबूत नहीं हो जाएगी। पारो और अनीता दोनों उस पर बड़ी नाराज़ हैं। लेकिन वे उस की मजबूरी को क्यों नहीं समझतीं? ठीक है कल वह अनीता की बर्थ ड पार्टी में शरीक नहीं हो सका था। इस से आसमान तो नहीं गिर पड़ा था! अनीता के साथ उस की माँ तो पार्टी में थी न? माँ-बेटी यह क्यों नहीं समझतीं कि वह एक बड़ी कपनी का चेअरमैन कम मैनेजिंग डायरेक्टर है और उस की कई बड़ी जिम्मेदारियाँ हैं। वह कल बम्बई में था आज दिल्ली में अपने घर में है। अपने घर में भी वह भला कितने समय बैठ सकेगा? उसे दफ़्तर जाना होगा। और कल? कल उसे न जाने कहाँ जाना पड़े!

वह चाय पी कर बाहर निकला। उस ने देखा, पारो बालिमा बन झूले में बैठी *टाइम्स* अख़बार पढ़ रही थी। उस के पास बिजनेस वर्ल्ड से जुड़े अन्यान्य अखबारों का पुलिन्दा जैसे-का तसा पड़ा था—भला उस वाणिज्य-व्यापार के अख़बारों से क्या लेना-देना! उस ने कुछ कहना चाहा। लेकिन उस ने ध्यान से देखा—पारो ने उस की मौजूदगी को नकार दिया था। फिर सामने रसोई घर में 'कुक' भी आ गई थी। उस के सामने हारते हुए वह पारो से क्या कहेगा? वह सीधे आगे जा कर टॉयलेट में घुस गया। उसे लगा वह गूँगेपन का दरिया पार कर टॉयलेट में पहुँचा था।

टॉयलेट की सीट पर बैठ कर महेश को एक क़िस्म की नजात हासिल हुई। उसे लगा वहाँ बैठ कर वह सभी बातों को उन के सही सही परिप्रेक्ष्य में देख सकता है उसे कई तनावों से मुक्ति की अनुभूति होती है और समस्याओं के समुचित समाधान सूझते हैं। उस ने सोचा वह इतना बड़ा प्रपच क्यों पालता रहे? क्यों न अपनी कपनी के इतने शेयर बेच दे जितने उस के चेअरमैन-कम मैनेजिंग डायरेक्टर के पद से हट जाने के लिए काफ़ी हों? कपनी का चेअरमैन होना सरदर्दी का काम है। उस के लिए उसे जी-तोड़ मेहनत करनी पड़ती है और फिर उस पद पर टिके रहने से उस का अपना घरेलू जीवन भी सही ढंग से नहीं चल पाता। पारो के चाँद से चेहरे को उस की लड़ाई सम्बन्धी का ग्रहण लग गया है। लेकिन क्षणांश के पश्चात् उस ने सोचा नहीं नहीं वह एक 'सेल्फ मेड आत्मा

है उस ने अपने जीवन में परिश्रम कर वह मान मर्तबा हासिल किया है। कपनी की ओर स बहुत-सी सुविधाएँ प्राप्त हैं। यह बँगला ये नौकर चाकर चेअरमैन की हैसियत से ही तो उसे मिले हैं।

उस ने उठ कर टॉयलेट की टकी का हैंडल घुमाया तो पॉट में पानी गडगडाहट कर बह निकला। उस ने वाश बेसिन में हाथ धोए, दाँत साफ किए और बढी हुई दाढी को सफ़ाचट मूँड़ा। फिर भीतर से ही रामू का आवाज़ दी 'रामू वहाँ से मुझे अडरवीयर और बनियान ला कर दो

रामू को पता था कि अब साहब उसे आवाज़ देंग। वह पहल से ही इन वस्त्रों को ले कर टॉयलेट के बाहर खड़ा था और आधे भिड़े दरवाजे में से कपड़े पकडा दिए।

महेश न शॉवर खोल कर अपने बदन पर खुशबूदार साबुन मला। देखा गदगी उस के तन पर स नालियाँ बना-बना कर बह रही थी। उस ने सोचा क्या तन की गदगी की नालियों की तरह मन की गदगी की भी नालियाँ हैं? साफ सुथरा कच्छा बनियान और उन के ऊपर थोड़े समय के लिए रात वाले कपड़ पहन कर वह टॉयलेट स बाहर निकला। दरवाज़े के बाहर पारो टॉयलेट क भीतर जाने के लिए तैयार खड़ी थी। वह भीतर गई। लेकिन महेश अभी वहाँ से चार-छह क़दम ही आगे बढा होगा कि पारो बाहर भी निकल आई। महेश ने साश्चर्य पीछे मुँह घुमा कर पारो की ओर निहारा। उसे पता न लग सका कि पारा को टॉयलेट में से क्या चाहिए था। एक क्षण के लिए उस के मन में आशका उत्पन्न हुई कि वह वहाँ उस का मैला कच्छा-बनियान देखने गई थी। फिर उस ने अपने मन में कहा नहीं नहीं वह ऐसा क्यों करेगी?

महेश वहीं जडवत् खड़ा रह गया। पारो की ख़ामोशी उस क लिए असह्य हो उठी थी। उस ने गूँगे दरिया में स सिर ऊपर उठा कर पारो से कहा 'तुम इतनी ख़ामोश खामोश क्यों हो? और यह अनीता? अनीता समय से इतना पहले ही अपने कॉलिज क्यों चली गई है?

'तुम मुझ से बात मत करो। कहे देती हूँ, मुझ से कुछ मत बोलो। तुम वर्क-ॲल्कोहोलिक हो—काम-काम, सदा काम यह कपनी क्या हुई, माँ-बेटी के लिए एक मुसीबत हो गई

गूँगा दरिया उबल पड़ा था। उस में अचानक ही एक ज़ोरदार लहर उठी थी। उस लहर का रग रूप हाव भाव और लबो लहज़ा कैसा था कुछ मालूम नहीं हुआ। महेश उस उथल पुथल की दहशत में आ गया। उस ने अपने चारों ओर देखा और कहा 'पारो देखो तुम नौकरों के सामने तमाशा कर रही हो नौकर क्या कहेंगे?

'कुछ भी कहें। इन नौकरों ने ही हमारी ज़िन्दगी बरबाद की है।

उस ने फिर भी धीरे स पूछा 'बरबाद?

'हाँ हमारी ज़िन्दगी बरबाद की है। क्या तुम यह नहीं देखत कि घर परिवार का कोई काम न करने से और इन नौकरों पर सिर्फ़ हुश् हुश् करने से मेरे तन पर चर्बी चढ गई है?—तन में विकार पैदा हो गया है?

अब दूसरी लहर भी ज़ोरों पर थी। दोनों लहरें एक-दूसरे का सिर फोड़ने के लिए टकरा उठीं।

'तन में विकार पैदा हो गया है? महेश ने चिल्ला कर पूछा।

'हाँ मेरे तन में विकार, और तुम्हारे मन में विकार पैदा हो गया है।

'तुम जानती हो कि तुम क्या कह रही हो?

'तुम जब-जब दौरे से लौटते हो तब तब अपना यह अश्लील गदा कच्छा टॉयलट की बाल्टी में डुबा आते हो। आज भी तुम ने यही किया।

'तो क्या तुम अभी टॉयलेट में यह सब देखने गई थीं? मुझे पहले से ही लगा था कि

'इन हालात में घर में ऐसी फुर्सत ही फुर्सत होने से मैं भी घर से बाहर जा कर थूथन मार सकती हूँ। मेरे मन

में भी विकार पैदा हो सकता है। लेकिन तुम्हें पता है मैं एसा नहीं कर सकती

'तो क्या तुम यह समझती हो कि मेरी सेक्रेट्री अपने घर से फ़ारिग़ हो कर ख़ास मेरा सेवा में लगी है?

'हाँ तुम्हारी सेवा में लगी है। इन नौकर-नौकरानिया ने हमारी ज़िन्दगी बरबाद की है

महेश समझ गया कि नौकरानियों में इस बार निश्चय हा उस की सेक्रेट्री का भी शुमार हो गया था। उस न चिल्ला कर कहा 'तुम्हें पता है कि मुझे कपनी के सिवा किसी और बात के लिए कोई फ़ुर्सत नहीं है?

'तुम्हें ता अपनी जवान हो रही बेटी के लिए भी कोई फ़ुर्सत नहीं है।

'तुम ऐसा क्या कहती हो?

'मैं सही कह रही हूँ। क्ल तुम उस की बर्थ ड पार्टी में भी शरीक नहीं हुए।

'हाँ शरीक न हो मका। मैं क्या करता? आत ही मैं ने तुम्हें बताया कि वह मर बस म नहीं था। लेकिन तुम तो पार्टी में थीं न?

'कवल मर हान स क्या हाता है? जो बटियाँ ऐस अवसरो पर भी अपन पिताओ की कपनी से वचित रह जाती हैं वे निश्चय ही उच्छृखल लड़कों की कपनी में पड जाती हैं।

'यह तुम क्या कर रही हो? पार्टी में ऐसा कुछ हुआ क्या?

'ऐसा कुछ हुआ हागा तभी तो तुम्हारी लाडली बटी आज सुबह सवर बन-ठन कर अपन ब्राय फ्रेंड सहपाठी लडक के साथ उस की माटर साइकिल पर बैठ कर कॉलिज चली गई है। अब उम तुम्हारी ऑफ़िस-कार की लिफ्ट की ज़रूरत नहीं है

इतने में दरवाज की घटी बज उठी। हो न हो महेश के दफ्तर का कार ड्राइवर आया हागा और उस साहब की कार झाड़ पोंछ कर तैयार रखने के लिए कार की चाबी चाहिए हागी। महेश ने ड्राइवर का चाबी दने के लिए रामू को आवाज़ दी। उस समय रामू बडरूम में स मैली चादरों लिहाफों का ढर ले कर निकला। उस ने फुर्ती से उम ढर का टॉयलट में रखा और ड्राइवर को चाबी दने चला गया।

महेश न बडरूम में जा कर दफ्तर जान की तैयारी की बाल मँवार और कपडे बदले। इतन म 'कुक' न बडरूम के बाहर आ कर आवाज दी 'साहब टेबल पर ब्रेकफास्ट लग गया है।

वह बाहर आ कर ब्रेकफास्ट टबल की ओर बढा। उस न देखा टबल पर अकल उस का ही नाश्ता लगाया गया था और पास ही वहाँ आज क सार अखबार पड थे। वह कुर्सी पर बैठा ता उसे लगा कि दरिया का पानी उस क मिर क ऊपर हा गया है और अब वह अपन को डूबन स नहीं बचा पाएगा। उस ने अब तक बहुत कोशिश की था कि वह दरिया म अनुकूल प्रतिकूल तरत हुए अपना सिर पानी की सतह स ऊपर रख और अपने का डूबन स बचाए। उम न उमा क्षण अपन मन म सकल्प किया कि वह अपन को इस तरह डूबने नहीं देगा। वसे भी यह जीवन एक क्षण पर ही टिका हुआ ह। हमारा जीना या मरना तैर कर पार पहुचना या मँझधार में ही डूब कर जान देना—सब कुछ एक क्षण का खल है। उम उम क्षण की पहचान हा गई थी। वह ब्रेकफास्ट टबल की कुर्सी पर स उठा और ड्राइगरूम म गया। उस न टलीफ़ोन का रिसीवर उठाया और एक नबर मिलाया।

ड्राइगरूम क बाहर पारा न सुना महश टलीफ़ोन पर किसी व्यक्ति स कह रहा था 'हाँ हाँ मर आधे स ज्यादा शयर उसे ही बच दा। हा मैं समझता हूँ, पूरे होशो हवास म कहता हूँ कि य शयर भले ही उस बच दा। मं अब कपना का चेअरमैन-कम मनजिंग डायरेक्टर हा कर रहना नहीं चाहता

पहल ता पारा के ताक लग गए। फिर सँभल कर उस न साचा महेश ने यह ठाक काम किया ह। पर इस निर्णायक क्षण म उस क साथ रहना चाहिए। उस न रसोईघर में 'कुक' का आवाज द कर कहा मिस मरा दखा मरा नाश्ता भी साहब के साथ टबल पर लगा दा

मिस मरा क मुख पर एक असपष्ट मुस्कान फैल गई।

सिन्धी स अनुवाद स्वय लखक

अतुलानद गोस्वामी

बुनियाद

मेरे खयाल से पान बाजार ही सब से उपयुक्त जगह है। चाय पानी की कई अच्छी दुकानें हैं जहाँ यूनिवर्सिटी के छात्रों की अच्छी ख़ासी भीड़ होती है। हाँ, वही जगह ठीक रहेगा प्रचार की दृष्टि से। वैसे प्रचार के लिए इतना परेशान खामख़्वाह ही हो रहा हूँ, अब तो वक्त बदल गया है। आर्ट और आर्टिस्ट दोनों की काफ़ी क़द्र होने लगी है।

ज्यादा दिखावे की ज़रूरत नहीं कोई छोटी सी जगह ही काफ़ी होगी। बस इतनी लबी हो कि रग-रोग़न लगाने के बाद डिस्प्ले किया जाए तो जरा ढग की गैलरी सी नज़र आए। रौशनी काफी न हुई तो कोई बात नहीं छप्पर का टीन हटा कर वहाँ प्लास्टिक या ग्लास शीट लगा लूँगा, जैसे चाय बाग़ानों की फ़ैक्टरी में लगाते हैं। काम तो चल जाएगा मगर परेशानी होगी साज़ो सरजाम की। विदेश से मँगाने में तो नियम-कानून के हज़ार लफ़ड़े हैं कलकत्ता या दिल्ली से ही इतजाम करना पडेगा। रग ब्रश ईज़ल बोर्ड सभी कुछ यहाँ मिल जाता है लेकिन अच्छा नहीं होता।

खैर! छोड़ो वो सब बातें। एक जगह मिल जाए बस! पहले स्टूडियो तो खोल लूँ, फिर बाक़ी चीजों का इतज़ाम धीरे धीरे करता रहूँगा। शुरू शुरू में छोटे मोटे कमर्शियल काम करने पड़ेंगे जैसे साइनबोर्ड नेमप्लेट वग़ैरह। नगर पालिका वालों से बात बन गई तो रिक्शा वगैरह की नंबर प्लेटें भी लिख सकूँगा। शायद प्राथमिक सकट से इसी तरह उबर पाऊँगा और खुदा न ख़ास्ता काम कुछ ज्यादा ही मिल गया तो ग्राउड पेन्टिंग के लिए किसी छोकरे को रख लूँगा। साथ मिल जाएगा और मदद भी यही ठीक रहेगा।

इस लबे स्वगत कथन के बाद चदन ने धीरे से आँखें खोलीं और लौट आया ठोस धरातल पर।

आह! पट में चूहे दौड़ रहे हैं। कह कर फिर आँखें मूँद लीं और कब तक चदन यूँ ही ठडी आहें भरता बैठा रहेगा? दो दिन से स्टूडियो के सपने देखने से ही फ़ुर्सत नहीं मिली। मन भरा हुआ है सफलता के अटूट विश्वास से। यहीं से तो उस ने पढाई पूरी की है। कितने दोस्त हैं यहाँ। सभी जानते हैं, चदन अच्छा आर्टिस्ट है। चदन को एक बार आर्ट का खयाल आ जाए तो बस वह सारी दुनिया से बेख़बर हो जाता है। इसी आर्ट को जीवन का सबल बनाएगा वह। जीविका तो तुच्छ बात है भला कभी कोई आर्टिस्ट जीविका की बात सोचता है? अमर कलाकारों की जीवनी ऐसी ही बातों से भरी होती है, यही सिखाती है वान गॉग को देखिए या दूसरे अमर कलाकारों को ही

जीवन की सार्थकता तो सृष्टि में है। अभिनव सृजन करो और अमर हो जाओ बस! इस के लिए चाहिए निष्ठा लगन और आत्म विश्वास।

आत्म विश्वास का अभाव नहीं है चदन में। अब तक सारी तसवीरें देसी रगों ब्रशों और दूसरे सामानों से ही बनाई हैं किसी ने बुरी तो नहीं कही। उन्हीं को अब वह एकल प्रदर्शनी लगाना चाहता है। उस का दृढ़ विश्वास है कि एक बार प्रदर्शनी में उस के चित्रों को देख लें तो समालोचक यह मानने को मजबूर हो

जाएँगे कि उन क असम में भी एक वड़ा आर्टिस्ट है बस एक बार प्रदर्शनी तो लगा ल फिर.

गुवाहाटा आने क बाट पहली बार यह भूत उस दिन सवार हुआ था जिम दिन *यांत्रिक* पत्रिका क सपादक न उस का स्कच अच्छा है कह कर स्वीकार कर लिया था और रिक्शा क लिए उसे पाँच रुपए दत हुए उत्साहवर्द्धन किया था यह कह कर कि आग भी ज़रूरत पड सकती है बनात रहना।

एक कहाना के लिए '*माला न गुस्स में अधी हो कर मज पर रखा गुलदस्ता चदन के सिर पर द मारा* इन पक्तिया को स्कच म दर्शाना था। उस ने स्कच वना दिया। काफ़ी उत्साह था शायद कहानी में अपना नाम था न इसलिए। मगर सपादक ने वाद में फिर कभा काइ स्कच नहीं माँगा। उस ने सोचा शायद उस क घर का पता ठिकाना नहीं है इसलिए। खेर, जा भी हो कुछ न कुछ ता करना पडेगा। एक बार वह खुद हा जा कर पूछ आए ता? नहीं नहीं विन बुलाए जाना शायद उन्हें अच्छा नहीं लगे। अगर पत्रिका क उस अक को ले कर दूसरा पत्रिकाओं क सपादका क पास जाए तो कैसा रहेगा? मगर जाए तो जाए कैस? आजकल ता मिटी वम का किराया भी काफ़ी वढ गया है कहाँ स लाए.

आ ऽऽऽ ह! फिर दर्द भरी कराह के साथ उस न पट दबाच लिया। भूख की कचाट असह्य हो गई। किराए के क्या एक कप चाय तक क ता पैस हैं नहीं! अन्न का एक दाना नहीं पडा कब से उस स्कच क पाँच रुपए कभी क खत्म हो चुके हैं। कुछ दिना क लिए घारू क मेस में रहने की इजाजत मिल गई है बस इतना ही खाने का इतजाम खुद करने को साफ साफ कह दिया गया था। वैस दो एक बार धारू के 'महमान' की हसियत म वहाँ खा भी चुका है मगर माँग कर. ? नहीं नहीं

हाँ इस वक्त मस में पहुँच जाए तो चाय-नाश्ता जरूर दे दग वा लोग मगर साच भा ता सकत हैं कि जरूर कहीं कुछ जुगाड नहीं हो पाया। ना ना यह नहीं हागा उस स।

ता क्या कर? पारुल क यहाँ चला जाए? वहाँ भी शाम की चाय का इतजाम हो रहा होगा। पारुल न उस एक तसवीर वनाने का कहा था। वह अगर पूछन के बहान जाए कि कसी तसवीर चाहिए, तो एक कप चाय जरूर पिलाएँग मगर अच्छा थोड ही लगेगा और फिर पारुल ता बता चुकी ह 'एक राजहस नील आसमान पर उड़ता चला जा रहा है वह जाते-जाते हसिनी को पुकारता है ऐसा एक सुदर सा पेंटिंग उस चाहिए। कैसा पगला है तसवीर म पुकार कैस उतारा जाएगी? तसवीर तो इतवार का दन की बात ह बिना लिए पहुँच गया तो शायद पारुल भी समझ जाएगी कि चदन को चाय की प्यास खींच लाई है।

बस एक ही जगह बची है। इस वक्त वहाँ जाए ता चाय क साथ सूजी का लड्डू मिलगा आर शायद पपाता की एक फाँक भी। लकिन चदन को वहाँ जाना चाहिए क्या? जाए ता हर्ज हा क्या है? पर जी भी ता नहीं करता वहाँ जाने को। हेमन की दादी कैसा गदी बातें करती हैं! जाते ही उस क व्याह का बात शुरू कर दती हं। लडका कैसा हो कैसी न हो बस ऐसी ही दुनिया भर की बातें अनर्गल बकती चला जाती हं। कितने-से दिन हुए हैं पहचान हुए! नई-नई जान पहचान वाला से एमी बातें करत हं भला?

अनुयोग पत्रिका के सपादक उसे पाँच रुपए एडवास दे देंग क्या? *यांत्रिक* क सपादक क सामने उन्हाने भा ता डिजाइन माँगा था। वहाँ जाए. ?

'कहा आर्टिस्ट महाशय! माधव चिढान क स्वर में बाला 'क्यों भई वाराग में बैठ किस साच में डूब हो? पाठ पर एक धौल जमात हुए वह चदन के पास ही वैठ गया। चदन का वचपन का दास्त है माधव मगर वह कभी चदन का किसी बात को गभीरता से नहीं लता। मौका मिला नहीं कि लग जाता है चदन को खिचाई करने में। बेचारा चदन!

उस क अनुसार चदन 'सिनिक' है मजाक न उडाए तो क्या कर? चदन की तो शामत आ गई। इम्तिहान हा चुक

थे बस समय ही समय है माधव के पास।

अच्छा आर्टिस्ट एक बात बता!

'क्या?

'रंग-वग लगे हों तो समझ लें कि काम करने में कपड़ों का ये हाल हो गया है मगर तू साले स्टेशन के कुली कबाड़ी से भी गया गुजरा है।'

अरे यार यों ही बस धोने को जी नहीं करता।

ओह! तो तू अब फिलॉसफ़र बन गया है?

'छोड़ यार, काहे का फ़िलॉसफ़र! बक-बक मत कर।

अच्छा नहीं करूँगा। चल चाय पी कर आते हैं।'

चंदन का दिल धड़का। सोचा 'हाँ' कह दे। फिर ध्यान आया कि माधव न जाने क्या सोचेगा। भूख से मरा जा रहा था फिर भी रुआँसा हो कर बोला 'नहीं आज रहने दे। तबीयत कुछ ठीक नहीं है।

अरे! तेरी तबीयत को क्या हो गया?

'कुछ ख़ास नहीं ऐसे ही। तेरे पेपर कैसे हुए?

'बड़ा आया विद्याधर की दुम! मेरे पेपर से क्या मतलब?

'मतलब क्यों नहीं होगा? तेरे प्रीवियस में तो बड़े अच्छे नंबर आए थे इस बार पेपर कैसे हुए, बता न!

'इस बार भी सब अच्छा ही होगा। चल उठ न!

'फ़र्स्ट डिवीजन आएगा न!

'ये बात अभी कैसे बता सकता हूँ?

माधव उठा और चलने को ही था कि कुछ सोच कर ठिठक गया।

'एक मिनट में बताता हूँ' कह कर उस ने जेब में हाथ डाला एक घिसी-सी अठन्नी निकाली और अँगूठे व तर्जनी पर संतुलित करके नाटकीयता से बोला 'बोल हेड आएगा या टेल?

चंदन बैठा रहा उस का मुँह खुला का खुला रहा। जवाब क्या देता? उस का तो दिमाग़ उस सिक्के पर था जिस से शायद माधव चाय पिलाने की सोच रहा था। यही उस के पास होता तो वो क्या करता? अगर माधव से आठ आने उधार माँगे तो शायद इंकार नहीं करेगा एक बार माँग कर तो देखे! नहीं नहीं इंकार न भी करे, मगर मन में न जाने क्या सोचेगा!

'बोल अरे, कुछ तो बोल!

'हेड।

सिक्का हवा में उछाल कर, हथेलियों में दबा लिया फिर जैसे ही हथेली हटाई बोला धत् तेरे की छुड़वा दिया न मेरा फ़र्स्ट क्लास!

माधव निराश हो कर अठन्नी जेब में वापस डालने ही वाला था कि चंदन ने टोका 'कम से कम तीन बार तो पूछ तभी पता चलेगा। वह जैसे सिक्के का ओझल होने नहीं देना चाहता।

'अच्छा दुबारा बोल!

'हेड।

आहा इस बार फ़र्स्ट क्लास मिल गया। फिर से बोल!

माधव ने फिर सिक्का उछाला मगर चंदन का मन तो उस से कहीं ऊँची छलाँग लगा रहा था। कौन-सी परीक्षा और

किस का रिज़ल्ट? अठन्नी में होते हैं प चा स पैसे वह तो उन्हीं से जो-जो ख़रीदा जा सकता है मन में उस की लिस्ट बना रहा था। सस्ता चुरुट एक पैकेट, अगर माचिस न ख़रीदे, तब। नहीं, नहीं इस से अच्छा है एक कप चाय के साथ शकरपारे खाए जाएँ, फिर पान-सुपारी उहूँ इतना शौक़ीन तबीयत बनने से क्या फ़ायदा? इस से तो दो रोटी खा कर एक गिलास पानी पी लो बस काम ख़तम पैसा हजम!

'अबे उल्लू की दुम बोल न!'

'आठ आने।' तपाक् से निकल गया उस के मुँह से।

'तेरा सिर!'

हथेलियों में दबी अठन्नी को देखे बिना ही एक हाथ की कोहनी से माधव ने चदन का सिर हिला दिया। हथेली से लुढ़कती बेंच से टकराती अठन्नी ऊँची घास में गिर कर कहीं खो गई। उस तरफ़ माधव का ध्यान ही नहीं गया क्योंकि वह तो बे-सिर-पैर का जवाब देने वाले महामूर्ख दोस्त के चेहरे पर नज़र गड़ाए हुए था हैरान-सा। हाथ के ख़ाली होने का अहसास हुआ तब ढूँढने लगा।

हफ़्ते भर से माली के छुट्टी पर होने की वजह से घास काफ़ी बेतरतीबी से बढ़ गई है इसलिए एक सिक्का ढूँढ पाना बड़ा मुश्किल था। तुलसी-वन के किनारे लगी ईंटों में भला एक छोटा-सा सिक्का कैसे मिलता? शाम भी तो हो गई थी। चदन ने वहीं से तुलसी के पत्ते तोड़ कर सूँघे तो माधव से पूछा 'पत्ता तोड कर सूँघने से खोए हुए पैसे जल्दी मिल जाते हैं क्या?

'नहीं यूँ ही देख रहा था असली तुलसी है या जगली।

'तेरा तो दिमाग़ सचमुच ही गड़बड़ा गया है। चल चलें वो अठन्नी माली की क़िस्मत में ही लिखी है।

'ज़रा रुक न थोड़ा और ढूँढ लेते हैं।

'छोड यार, पचास पैसे इस तरह ढूँढेंगे तो लोग मज़ाक़ उड़ाएँगे। उठ अब चलते हैं।

मरता क्या न करता हार कर चदन को उठना पड़ा और माधव के साथ ही न चाहते हुए भी पार्क से बाज़ार के लिए रवाना होना पड़ा।

माधव को चाय की दुकान की तरफ़ तेज़ी से बढ़ते देख चदन का सकोच फिर से उसे सताने लगा। अचानक उस ने *यात्रिक* के सपादक से मिलने का बहाना बनाया और माधव ने उसे रोकना उचित नहीं समझा।

विदा ले कर दोनों दो तरफ़ चल पड़े माधव चाय के अड्डे पर और चदन उल्टी राह पर।

एकाएक सारी बत्तियाँ जल उठीं और साथ ही भड़क उठी भूख की ज्वाला उस का सिर चकरा गया। सत्-असत् का तुमुल द्वद्व उठा मस्तिष्क में और उसे अपने पेट पर झुँझलाहट आ गई। वह जब भी माइकेल एजेलो वान गॉग, पिकासो लेओनार्दो दा विंची के इतिहास और अमर शिल्प की बातों में तल्लीन होता है यह बेशर्म पेट उस का ध्यान भग कर देता है हाय री क़िस्मत!

अनजाने ही उस के क़दम पार्क के गेट पर रुक गए। धीरे से गेट सरकाया हल्की-सी चरमराहट हुई। उस के कान जैसे उस शोर से भर गए, हालाँकि पार्क में बैठे लोगों के कान पर जूँ तक न रेंगी। वह डगमगाते क़दमों से पहले वाली बेंच पर आ बैठा। मरणान्तक भूख से आज एक भावी कलाकार के क़दम ही नहीं उस की नीयत उस का चरित्र उस के मूल्यों आदर्शों की नींव भी डगमगा रही थी। माथे से पसीना बहा जा रहा था। उस ने झुक कर तुलसी की झाड़ी को देखा कुछ देर ठिठका रहा।

अतत चदन से रहा नहीं गया। उस ने देखा वही झाड़ी थी। वह झुका नीचे बैठा धीरे-से हाथ आगे बढ़ा कर घास को टटोला और उस में से अठन्नी निकाल ली। धुँधलाई आखों को मसल कर अठन्नी को भी पोंछ कर चमका कर फिर अच्छी तरह देखा हाँ ठीक है।

उस ढाबे से चाँद-सी गोल सूखी एक रोटी और तेज़ मिर्च के शोरबे वाली सब्ज़ी तो मिल ही जाएगा। ये अलग बात है कि उस में सब्ज़ी क्या है या कुछ है भी या नहीं, इस का पता नहीं चलेगा ख़ैर !

आर्मेनिया से अनुवाद नाना यनसी

शिवकुमार राई

हीरे का हार

क्रि क्रि क्रि क्रि एकबारगी टेलीफ़ोन की घंटी बज उठी। कलकत्ता के न्यूरोलॉजिस्ट और साइक्याट्रिस्ट डॉक्टर घोष किसी रोगी की जाँच में लगे थे। उसी समय जाँच कक्ष का दरवाजा एकाएक खुला और दरवाज़े पर दिखाई पड़ा उन का सेक्रेटरी मिस्टर घोषाल। मिस्टर घोषाल को देखते ही उन्होंने भौंहें सिकोड़ कर पूछा 'क्या इतना आवश्यक था?' उस की उपस्थिति डाक्टर घोष ने पसंद नहीं की यह बात उस की समझ में आई किन्तु कुछ संभल कर उस ने कहा 'सर माफ़ कीजिएगा आप के व्यस्त रहने के कारण मैं बाधा देना नहीं चाहता था, लेकिन एक औरत ज़िद कर रही है आप से जल्द ही टेलीफ़ोन पर बात करना चाहती है—"डॉक्टर साहब एक रोगी की जाँच करने में लगे हैं दस मिनट के बाद टेलीफ़ोन कीजिए"—मैं ने कहा तो मानती नहीं। कहती है—बहुत ज़रूरी काम है आप से जल्द ही भेंट किए बिना नहीं होगा।

डॉक्टर घोष ने अपनी नोटबुक बंद करते हुए कहा 'ठीक है मैं आता हूँ।' और रोगी से क्षमा याचना करते हुए कहा 'माफ़ कीजिएगा मैं आता हूँ आप एक क्षण आराम कर लीजिए।'

दूसरे छोर से किसी औरत की कुछ घबराई सी आवाज़ आ रही थी 'माफ़ कीजिएगा डॉक्टर घोष। आप को तकलीफ़ दी मैं ने। लेकिन मेरी स्थिति ही ऐसी है मैं इंतजार नहीं कर सकती। मुझे मालूम है आप बहुत व्यस्त हैं। रोगी की जाँच कराने के लिए मुझे एक सप्ताह इंतजार करना ही पड़ेगा लेकिन एक सप्ताह तो क्या, एक दिन भी इंतजार करना

'कहिए न! आप कहना क्या चाहती हैं मैं एक रोगी की जाँच कर रहा हूँ। क्या आप खुद बीमार हैं?'

नहीं डाक्टर, मैं तो स्वस्थ ही हूँ लेकिन मैं बीमार हूँ, ऐसा आप को कैसे लगा?

'आप की भाव भंगिमा से।'

ओ माफ़ कीजिएगा। बालीगंज से मैं निर्मला सेन बोल रही हूँ। मेरे पतिदेव मानसिक रोग के शिकार हो गए हैं। किसी से मुलाकात हुई कि 'कहाँ हैं मेरे रुपए? मुझे रुपए दो' इत्यादि की रट लगाते रहते हैं। मैं क्या करूँ? अभी उन की हालत और खराब होने की वजह से तुरंत जाँच करने का आप से अनुरोध कर रही हूँ।

अच्छा परसों ले कर आइए, क्यों?

'नहीं डॉक्टर घोष मुझ पर दया कीजिए। आज न हो तो कल अवश्य जाँच कर देते, मैं कृतज्ञ होती।'

'ठीक है तो कल दोपहर तीन बजे ले कर आइए।'

धन्यवाद, डाक्टर घोष धन्यवाद! इस उपकार के लिए आप को जितना भी धन्यवाद दूँगी कम ही होगा। अच्छा तो मैं कल तीन बजे ले कर आऊँगी। रिसीवर को क्रेडिल पर रखने की आवाज़ आई खट्।

ऐसे हजारों एप्वाइन्टमेंट आते रहते हैं प्रत्येक रोगी का पूरा परिचय लेने की आवश्यकता महसूस नहीं होती इस कारण डॉक्टर घोष ने अपने इंगेजमेंट पैड में दूसरे दिन की तारीख के नीचे लिखा—3 बजे श्रीमती निर्मला

सेन। इस के बाद वे फिर उसी कसलटिंग रूम में चल गए।

कलकत्ता जैसे महानगर में भला किसे किस के विषय म पूछताछ करने का अवकाश रहता है। मन अपनी ही धुन में मस्त रहते हैं सुबह चार बजे से रात । दिन भर की व्यस्तता स थक शरीर और शिथिल दिमाग आश्रय लेने पहुँच जाते हैं—सिनेमा हॉल रेस्तराँ, नाइट क्लब में। लेकिन आखिरी शा शप होत न होत कलकत्ता शहर फिर जाग उठता है एक दूसरे दिन के स्वागत म।

कलकत्ता डलहौजी स्क्वायर का एक 'ज्वैलरी शॉप । दिन के दा बज होग। एक क्रीम रग की गाडी आ कर दरवाज़े के आगे खडी हुई। चालक ने दरवाजा खोला एक अत्याधुनिक महिला गाडी से उतर कर सीधी दुकान के दरवाजे की ओर बढी। वह औरत सुदर थी हावभाव और पोशाक से किसी सपन्न परिवार की महिला जैसी दीखती थी। दरवाजे पर दरबान ने फ़ुर्ती के साथ सलाम किया और दरवाजा खोला। वह औरत सीधे काउटर पर गई और उस ने हीरों के हार देखने की इच्छा प्रकट की। सेल्समैन ने मखमल क डिब्बों को खाल कर बहुमूल्य पत्थर जड़े हुए कुछ हार आगे रख दिए। प्राय आधा घटा हार देखने के बाद उस ने एक-डेढ लाख का हार पसद किया और सेल्समैन से कहा, 'यह हार खरीदने के पहले मैं मैनेजर से बात करना चाहती हू। मैनेजर क आने पर उस ने सुदर अग्रेज़ी में कहा, 'मैनेजर साहब मुझे यह हार पसद आया है।

'यह तो हमारा सौभाग्य है कि आप को मन पसद वस्तु हमारी दुकान में मिली। नाखूना में नेल पॉलिश पुती सुदर लबी अँगुलियों से वैनिटी-बैग से एक कार्ड निकाल कर उस ने कहा 'ठहरिए, ठहरिए, मुख्य बात कहनी है। यह कार्ड देखिए, क्या इन को पहचानते हैं?

कार्ड में लिखा था—डॉ एस एम घोष एम डी एम आर.सी पी (लदन) एफ आर.सी पी (एडिनबरा) टी डी डी (वेल्स) न्यूरोलॉजिस्ट। मैनेजर न कुछ चकित हो कर उस औरत की आर देखत हुए कहा 'इन जैसे एक प्रतिष्ठालब्ध डॉक्टर का नाम किस ने नहीं सुना है। ऐस तो उन से मरा व्यक्तिगत परिचय नहीं है उन को मैं ने देखा भी नहीं है। फिर भी मैं उन्हे जानता हूँ। क्या आप उन की ?

सीधा उत्तर न दे कर उस ने कहा 'इस का मतलब हुआ उन की धर्मपत्नी से भी आप का परिचय नहीं है?

'उन जैसे बड़े-बड़े लोगों से हमारा परिचय कैस हो सकता है?

'आप सरासर झूठ बोल रहे हैं। -

'नहीं मैं ने उन की धर्मपत्नी को कभी नहीं देखा।

'मैनेजर साहब झूठ न बोलिए, आप उन से ही बात कर रह हैं।

'अच्छा तो आप डॉक्टर घोष की धर्मपत्नी हैं माफ़ कीजिएगा मैं पहचान न सका।

'ख़ैर, छोडिए इन बातों को। ख़ास बात यह है कि मैं साथ में पैसे नहीं लाई। आप का तो मालूम ही है कलकत्ता जैसे शहर में विशेष कर औरता को साथ म पैसे ले कर चलना बहुत जोखिम भरा है। इसा कारण उन्होंने कहा था—तुम जा कर देख आओ मैं बाद में जा कर ल आऊँगा। व व्यस्त थे इसलिए उन को नहीं ला सकी। मुझे यह हार बहुत पसद है मैं इसे गँवाना नहीं चाहती। क्या पता इसी बीच कोई ग्राहक आ कर इस हो पसद कर ल। आप तो रोक नहीं सकते?

'वह तो है!'

'तब तो एक काम कर सकते हैं। मेरी गाडी बाहर खडी ह इस हार के साथ आप अपना कोई विश्वसा आदमी मेरे साथ भेज दीजिए। वह हार ले कर उन क चैम्बर तक जाएगा और रुपए ले कर लौट आएगा। कहिए क

करेंगे? चैम्बर अधिक दूर नहीं है यहीं चितरंजन एवेन्यू में है।

वह कुछ क्षण सोच में पड़ा और बोला मिसेज घोष साधारणत हम ऐसा नहीं करते। लेकिन आप खुद इस हार में इतनी दिलचस्पी दिखा रही हैं इसलिए चलिए, मैं खुद हार ले कर चलता हूँ।

'यह तो और भी अच्छा होगा। चलिए, गाड़ी बाहर गेट पर है।

वह क्रीम रंग की गाड़ी चितरंजन एवेन्यू के एक चार मंज़िले महल के बाहर आ कर खड़ी हो गई। आगे गेट की प्लेट पर लिखा था—डॉ एस.एस घोष एम डी, एम आर.सी पी (लंदन), एफ.आर.सी पी (एडिनबरा) टी डी डी (वेल्स) न्यूरालॉजिस्ट। वह औरत गाड़ी से उतरी और मैनेजर को 'आइए' कह कर बैठक की ओर बढ़ी। बैठक में उन्हें बिठाने के बाद वह सीधे सेक्रेटरी के पास गई और कुछ बातें करके लौट आई और बोली 'मैनेजर साहब वे चैम्बर में टेलीफ़ोन करने में व्यस्त हैं। अगर आप को आपत्ति न हो तो एक बार यह हार उन को दिखा लाऊँ कि ? आप को तो मालूम ही है मर्द की जात सोच-विचार नहीं करती। लोगों के सामने ऐसा कुछ *अप्रिय कहेंगे कि असुविधा में डालेंगे कि ऐसा डर भी लगता है।*

मैनेजर साहब ने डिब्बा उन के हाथ में थमाते हुए कहा 'लीजिए, लीजिए, उन्हें दिखा लाइए।

धन्यवाद!

वह डिब्बा ले कर अंदर गई और पाँच मिनट के बाद डॉक्टर घोष को ले कर आई और बोली 'ये हैं डॉक्टर घोष। और घोष की ओर हो कर बोली 'इन के बारे में आप को सब बता चुकी हूँ।

डॉक्टर घोष आइए, अंदर आइए' कहते हुए उन को अंदर ले गए। वे कुछ संकोच मानते हुए डॉक्टर घोष के पीछे-पीछे गए। इस तरह अंदर एकांत में ले जाने की आवश्यकता क्या है? शायद लोगों के सामने इतने रुपए निकालने में डॉक्टर घोष को संकोच हुआ होगा ऐसा उन्होंने समझा। लेकिन अंदर जाने के बाद भी डॉक्टर घोष ने जब रुपए की बात नहीं छेड़ी तब उन्होंने कहा 'माफ़ कीजिएगा डॉक्टर घोष! मुझे मेरे रुपए दे देते तो मैं चला जाता।

डॉक्टर घोष ने उन्हें चौकी पर बिठाते हुए कहा 'निश्चय दूँगा निश्चय ही दूँगा। एक क्षण बैठिए तो सही क्यों हड़बड़ी करते हैं?

डॉक्टर घोष को नज़दीक के ड्रायर से नोट-बुक और क़लम निकालते देख कर वे कहने लगे 'माफ़ कीजिएगा डॉक्टर घोष हम सब समय चेक नहीं लेते। कृपया आप रुपए ही दे देते तो अच्छा होता।

'निश्चय ही दूँगा। पहले यह बताइए, आप को कितने रुपए चाहिए?

'डेढ़ लाख।

'डेढ़ लाख रुपए ले कर आप क्या करेंगे?

'डाक्टर घोष आप क्या मज़ाक़ कर रहे हैं? मुझे देर हो रही है।

'पहले यह बताइए, आप को इस रुपए के पीछे लगे कितने दिन हुए?

'डॉक्टर घोष इस तरह मज़ाक़ करने का तात्पर्य मैं समझ नहीं सका। यदि आप को यह सौदा सच में पसंद नहीं है तो मेरा माल लौटा दीजिए, मैं चला जाऊँगा। लेकिन इस तरह मज़ाक़ में मेरे साथ साथ अपना भी समय बरबाद करके आप को क्या लाभ है?

'सौदा? कैसा सौदा?

'आप की श्रीमती द्वारा लाया गया वह हीरे का हार।

'हीरे का हार? कौन सा हार?

'अरे आप की श्रीमती दूकान से अभी-अभी लाई हैं। क्या आप को उन्होंने हीरों का हार नहीं दिखाया?

'कौन श्रीमती ? वह औरत आप की पत्नी नहीं है?

'आप कैसे आश्चर्य की बात कर रहे हैं?'

'देखिए, आश्चर्य की बात तो आप करने लगे हैं। यह क्या कहते हैं, मैं कुछ नहीं समझ पा रहा। आप की पत्नी ने कल मुझ से एप्वाईटमेंट लिया था। कहा था आज तीन बजे अपने पति को ले कर आऊँगी मेरे पतिदेव मानसिक रोग से ग्रस्त हैं हरदम रुपए की बातें करते हैं। 'पैसा कहाँ? मेरे रुपए दीजिए, मेरा हिसाब कीजिए' कहते रहते हैं ऐसा टेलीफ़ोन में कहा था। आते ही आप रुपए की बातें करने लगे तो हो न हो आप सचमुच ही मानसिक रोग से ग्रस्त हैं मैं ने मान लिया।

'उस ने तो मुझे आप का कार्ड दिखाया—मैं श्रीमती घोष हूँ, इस हार का पैसा वे ही देंगे—कह कर मुझे यहाँ ले कर आई। इस का मतलब हुआ यह औरत आप की पत्नी नहीं है? मैं मरा।

'मेरे नाम का कार्ड तो कोई भी छाप सकता है। मैं ने उस औरत को कभी भी नहीं देखा। हम दोनों ठग गए। इतना कह कर डॉक्टर घोष तेज़ी के साथ बाहर निकले। उन के पीछे-पीछे मैनेजर भी बाहर आया। लेकिन वह औरत वहाँ नहीं थी।

डॉक्टर घोष के सेक्रेटरी ने कहा, 'वह तो चली गई। कहा है, 'डॉक्टर घोष रोगी की जाँच पूरी करें तब तक शॉपिंग करके आती हूँ।''

बाहर वह क्रीम रंग की गाड़ी भी नहीं थी वह औरत भी नहीं थी और डेढ लाख का हार भी नहीं था।

नेपाली से अनुवाद **विर्ख खडका डुवर्सेली**

ओड़िया कविता

रमाकांत रथ

एक कविता

कई बार मैं ने हाथ जोड कर प्रार्थना के लिए
खड़े हो कर देखा है कि मेरी हथेलियों में
कुछ नहीं है—कुछ नहीं देन के लिए
या लेने का। कभी कभार अधिक से अधिक
छाया पड़ती होगी क्षण भर के लिए इस तरह किसी की
जिस का होना न होना पता नहीं
होगा भी तो होगा इतनी दूर कि
उसे सुनाई न देगा विश्वास या अविश्वास का स्वर मेरा।

उत्तर तो दूर की बात है किसी के दुख की
प्रतिध्वनि क्या कभी सुनाइ पड़ी है
बस एक बार के लिए तो मैं हूँ यहाँ मेहमान
यह उदासीनता क्यों चुपचाप भोगता रहूँगा
क्या और लौटूँगा नहीं एक बार जाने से यहाँ से
क्या सज़ा मिलेगी मुझे शायद नाक कान मुँह में मर
अचानक आँधी में भर जाएगा बालू
शायद बिछी पत्तल मरी उड़ जाएगी हरेक कुएँ में
शायद न होगा पानी या केवल खारा जल होगा
हो सकता है मर ऊँघन के समय कोई
छुरा भोक देगा या मरी संतान या किसी सुहृद की
असमय मौत की आएगी ख़बर पर कोई है क्या वैसा
जिस की इच्छा के अनुसार, कभी रणक्षेत्र में तो
कभी रेगिस्तान में पहुँचता हूँ मैं।

यह बात अज्ञात रहेगी मुझ जिस भाँति रहा
खुले झरोखे वाले मकान के पास से गुज़रते समय
उस मकान का झरोखा अक्सर खुला रहता है
या कोई मर चलते समय खुला छोड़ कर
छिप कर देखता रहता है।

उस तरह का कोई दोस्त था शायद
ढूँढ़ रहा है अब तक उसे मेरी लंबी साँस
उसी भाँति तकता रहूँगा आकाश को मरते दम तक
बार बार नहीं जान कर किसी की नज़र
पड़ी है मुझ पर या मैं ही तकता था
कभी भी किसी के न होने की जगह को।

अनुवाद श्रीनिवास उद्गाता

बाङ्ला कविता

नवनीता देवसेन

भाषांतर

आओ चुंबन दो
कहो कभी दूर नहीं जाओगे
आओ हाथों में ले लो समूची गोधूलि—
अभी अँधेरा छाएगा
मिट जाएगा पथ दृश्यपट।

आओ चुंबन दो
उस के बाद कहो वह बात
जिस शब्द का उच्चारण सिर्फ़ तुम्हें ही शोभता है
जिस के सामने रात नहीं
पूरी दोपहर बाक़ी है।

जो बात बहुत पहले चली गई मेरे होठों को छोड़ कर
उन जूठे शब्दों से मैं नहीं करूँगी अतिथि सत्कार,

आओ चुंबन दो
फिर नस-नस में
उस शब्द अग्निमय से ख़ामोशी प्रतिध्वनित करूँ
बार-बार अनकहे वाक्य को दोहराऊँ
कानों के गहन में बजाऊँ
रक्त में निहित संवाद।

कातर नहीं है जीभ
वह जानती है और भी गूढ़ भाषा।
आओ चुंबन दो
सिखाऊँगी तुम्हें वह भाषा—
जीभ में होठों में धमनियों में
हमेशा रह जाती जो अनसुनी
लेकिन रक्त में गूँजती है कलकल।

एक दिन बतख की तरह

ख़ामोश रहते-रहते एक दिन फूट पड़ेगी आवाज़
नदी के मोड़ पर रुक कर कहूँगी

'बस अब और नहीं
सूरज ढलने को हो या हो सिर के ऊपर—
मैं कहूँगी 'बस अब और नहीं
तब पेड़ों और घास फूस में लहराएगी हवा
सारी रुक्षता और तिक्तता पारे की तरह
भारी हो कर नीचे की ओर ढुलक जाएगी
तलछट बन कर जमा हो जाएँगे रेत पत्थर
और कंकड़ों के साथ। ऊपर बहेगी
तरल और निर्मल जल की धार—
जिस में लहराएगी सूरज की
हज़ारों हजार निर्मम किर्चियाँ—
लहरों में देह डुबा कर,
बतख़ की तरह बड़ी निश्चिन्तता से
मैं उतरूँगी परिचित जल में।

तो भी जीवन

जानते हो इस दुनिया में प्यार नहीं टिकता
यहाँ तक कि यहाँ शोक भी नहीं टिकता
पिघल जाती है—यहाँ तक कि—
स्मृतियाँ भी।

कविता भी नहीं रहती धागा छोड़ देने पर
महाशून्य में लटकती रहती है
जैसे कोई अंतरिक्ष यान पृथ्वी से संपर्क टूटने पर
हो जाता है दिशाहीन
वीराने में बह जाता है
अनंत विरही कवि।

फिर भी रहता है जीवन जैसे
भी उसे रखो उसी तरह
गोद में गोल-मटोल
या फिर जूतों के नीचे बेपरवाह—
जीवन रहता है सिर्फ़ शरीरों में
कुल्हड़ में या फिर चाँदी के गिलास में

तुम हो जब तलक

अनुवाद शंपा भट्टाचार्या

असमिया कविता

रवीन्द्र बरा

प्रवाह में उछलता-कूदता आता

कैसे
रक्त में
अकुरित

नेत्र में
अग्नि का एक टुकड़ा
प्रज्ज्वलित

कंठ में
नीरवता

हृदय के
शुष्क
बालू में

यातना में
वह मानव

नदी की
घरूवा नाव

उमड़ रहा
यौवन

प्रवाह में
उछलता-कूदता आता

क्रोध में
बढ़ता पानी

हवा में
वह मनुष्य

आग में
वह स्वप्न

गहराई तक
नीरवता भंग करता।

अनुवाद रत्नेश कुमार

मलयाळम कविता

के सच्चिदानदन

टाँग

यह जो अधजली टाँग है
हरिश्चद्र घाट की राख में
है किस शरीर की?
कितने मदिरों में मठों में घिसटती रही
खोजती आत्मशाति?
कितने चकलों की देहरियाँ चढ़ी उतरी—
आसक्तियों के बोझ को उतारती?
क्या यह भी हलधर बैलों के पीछे पीछे
दौड़ती रही गाँव खेतो में
फ़सलों के सपने सँवारती सँजोती?
क्या यह भी भटकती रही महानगरों के
रेल के मुक़ामों पर टुकड़े बटोरती?
थक गई होगी मांसपेशियाँ इस की
घडों की कसारों की मिट्टी को सानते?
चूर हो चुकी होंगी हड्डियाँ इस की भी
एक कचहरी से दूसरी कचहरी तक
न्याय की गुहार में!
चकरा गई होगी खड़े खड़े
शव के प्रसव के कमरों के सामने।
इस टाँग ने भी
कुचली होंगी ज़िन्दगानियाँ अनेक
या यह होगी ऐसी टाँग
जिसे घूरती होंगी मुग्ध मदिर आँखें
खेल के मैदानों नृत्य के वितानों पर
इस पर पड़े हर निशान और घाव की
कथा है दर्दनाक
हिमगिरि की ठड में ठिठुरती हुई
घाम में झुलसती हुई टाँग यह पहुँच गई
अंत तभी गंगा किनारे।

सिर और धड़ पा चुके मोक्ष
सिर्फ़ यह टाँग धूप में अभी भी आग और पानी के बीच
अगले जनम की दूरियाँ नापती हाँफती विकल

अनुवाद कवि के साथ गिरधर राठी

पंजाबी कविताएँ

प्यारा सिंह सहराई

सुंदरता

सुंदर हैं फूल बहुत सुंदर
सुरभित
ज्योतिपुंज
भर देते उल्लास उदास क्षणों में।

सुंदर हैं तारे, बहुत सुंदर
छू देते जादू-सा
अंधकार को
उद्घाटित करते कोई अनबूझ रहस्य।

छलता मन को
संध्या का उतरना
बिखरना रंगों का क्षितिज पर
गुनगुनाना पवन का वासंती गीत।

पर हृदय की सुंदरता
(कोई शब्द नहीं इस के तुल्य)
विस्मित प्रकृति
शरमाते फूल
अपलक देखते रह जाते नभ का ये दीप!

सुंदर हैं तारे
फूल
गोधूलि बेला
झरने
इंद्रधनुष
गुनगुनाता पवन

पर हृदय की दिव्यता
यही तो है वह ज्योति
चाहत है जिस की
युगों युगों से
मुझे
तुम्हें
मन की इस व्याकुलता को!

शहर

चाहा था हम ने
रुपहली छाँव में
महकते सपनों का
साकार हो जाना।
सुलगती धूप के इस शहर में
झुलस गए चंदन-से सपने।
जलता धरती का कण-कण
अजगर का मुँह
उगल रहा है लावा
चले थे ढूँढ़ने हम
हवाओं में
गाते फूलों की खुशबू
उड़ती है रेत यहाँ
जल रहे मरुस्थल।
गीत जो गाए थे
रूह की तारों पर
सुनहरी कल के
निगल गईं उन को ये लपटें
काली आग की
कहाँ है वह शहर
साथियो
जहाँ जाना था हमें।

अनुवाद अमरजीत सिंह

हिन्दी कविता

रवीन्द्र स्वप्निल

क़स्बे का लडका

मार्च की दोपहरी ठंडी और उमस से भरी है
और मुझे कहीं काम पर नहीं जाना है

जो मैं अपने चारों ओर होते हुए देखता हूँ
उस से मन खिन्न नहीं होता है।

अख़बारों में जो पढ़ लेता हूँ
उस से भी मेरा मन करवट नहीं बदलता
बस मैं यूँ ही अपने माँ-बाप का बेटा हूँ

कभी शाम को सिगरेट और किसी दोस्त की बियर पी लेता हूँ

मैं छोटे क़स्बे का लड़का हूँ
मेरे मन में कल्पनाएँ तो हैं
पर जेबें ख़ाली और दिमाग़ ग़ुस्से से भरा है
मेरे आदर्श अब भी बल खाते हैं

मैं अपने राजा का प्रिय विषय हूँ
जैसे वोट के लिए या किसी क्रांति का अग्रदूत
कभी मुसलमान बनना पड़ता है
कभी हिन्दू
वैसे तो मैं क़स्बे का लड़का ही रहता हूँ

कभी-कभी कुछ करने का लहरा उठता है
जैसे कि चित्र बना लेता हूँ
या फिर मैदानों में दौड़ लगाता हूँ
मेरे क़स्बे के आकाश में मेरे सपने नहीं खिलते
मैं अपने क़स्बे से प्यार नहीं करता।

सुनील कुमार श्रीवास्तव

आदमी की तसवीर

बेटी को बनानी थी आदमी की तसवीर
उस ने बनाया आदमी
पेड़ से लगा उड़ते पंछी को देखता हुआ आदमी।
मैं ने पूछना चाहा आदमी से इतना कुछ ज़्यादा?
आदमी भर काफ़ी था बनाने के लिए।
उड़ता हुआ पंछी यह पेड़ सब फ़ालतू।

पर रुका औचटके
लगा बेटी ने ठीक ही बनाया
खड़े हुए आदमी के लिए
एक टेक जितनी जगह पेड़ की
ज़रूरी तो थी।

और आदमी आख़िर क्यूँ हो आदमी
न हो अगर आँखों में उस क
पंछी के परवाज़ भर एक आसमान?

तसवीर में सिर्फ़ आदमी बनाना
आदमी की मूरत की तसवीर बनाना है।

आशुतोष दुबे

एक विद्रोह, प्रायोजित

वे शुरुआत अच्छी तरह करते हैं
पर अंत उन की पकड़ से छूट जाता है
बात एक संभावना से शुरू होती है
मोहभंग से ख़त्म।

पात्र सड़क से उतर कर
दूर जंगलों में भागते चले जाते हैं
पुकारने पर भी लौटते नहीं
जवाब तक नहीं देते।

अब वे सुखद दिन गए
जब पात्र भी आप के होते थे
संवाद भी आप के।
आप पात्रों को पालतू नहीं बना सकते
और उँगलियों से कठपुतलियों का रिश्ता जोड़ने वाली
सारी कहावतें भगवान को प्यारी हो गईं।

अब उँगलियाँ आप की हैं
पर उन की जुंबिश किसी और की
कठपुतलियाँ आप की हैं
पर उन की ठुनक किसी और की
और इस के सिवा आप कर ही क्या सकते हैं
कि उँगली और अँगूठे की तरक़ीब से
हवा में उछाले जाएँ और फिर
चक्कर खाते हुए अंततः औंधे हो जाएँ फ़र्श पर
चित या पट—जैसा भी वे चाहें।

आप चाहें तो शुरुआत कर सकते हैं
अंत तक पहुँचने का मुग़ालता पाले बग़ैर
क्योंकि बीच में पात्रों का प्रायोजित विद्रोह पड़ेगा
आप वहीं ठिठक जाएँगे
अकबका कर लौट आएँगे

बद्री नारायण

संशय के दौर में

मैं ने आम का छू कर

आम से पूछा
तुम आम हो कि नहीं

मैं ने जामुन को छू कर
जामुन स पूछा
तुम जामुन हो कि नहीं

हवा पानी बादल
तुम सब वह हो कि नहीं

इस सशय के दौर में
तुम सब कौन हो
कुछ हो भी कि नहीं

न भूलने के लिए

कि मैं कोई पत्थर गाड़ दूँ
कि मैं कहीं काई बाँध दूँ धग्गी
कि मं काई कबूतर उड़ा दूँ
कि कहिए मै कहीं काट लूँ
आप का जम कर चिकोटी
कहिए मं क्या करूँ
कि इस भूलन क समय म
आप मुझ
न भूलें

सविता सिह तीन कविताएँ

असफल होता प्रेम

हवा निश्चित ही ठहरी हुई ह
पृथ्वी क वक्ष मं कहीं
पत्ता क ससार मं नहीं ह काई हलचल
पक्षी भी डालते नहीं
बैठ हैं काठ जैसे
सिर्फ़ मन डालता ह
प्रम असफल हान वाला है
आज दोपहर बाद नहीं आन वाला है
प्राण स भा प्रिय
मरा अपना कोई

शाम में एक कामना

किसी राह को कहूँ अपनी राह
किसी विस्मृत सुख को एक सुख
किसी की नींद में जा लेटूँ
जगूँ किसी मीठे स्वप्न की बाँह में
ऐसी है कामना इस शाम
ढल जाने पर इस के लेकिन
क्या बची रहेगी
यह राह सुलगती सी
याद में घुली मिली खुशी की आकांक्षा
नींद एक मोह सी व्याप्त
रोम-रोम में
स्वप्न में तैरती दो आँखें हंस सी

दृश्य परिवर्तन

सारा का सारा दृश्य ही बदल गया
मेरी आँखों के सामने
जैसे एक संसार बदला हो
जैसे किसी ने समझ लिया हो
जीवन के मानी
धरती ज्यूँ घूम गई हो
सदा के लिए
और सारे तारे
आसमान में बसने वाले
सूरज चाँद और आत्माएँ अच्छे लोगों की
सभी कुछ गायब हो गई हों
इस शून्यता में
बची रही हो बस यही आस्था
कि अब और कुछ नहीं
कहीं कुछ भी नहीं
जहाँ जो कुछ है वह वहीं खाली है

यतीश अग्रवाल

एक चिकित्सक का प्रार्थना गीत

प्रभु!
जीवन पर्यंत रहूँ
मनुष्यता का
जवाबदेह।
चिकित्सा अगर विज्ञान है
तो जीवन कला कहीं बढ़ कर।
समझ
विवेक
और मानवता का घर
ज्ञान से बढ कर।

प्रभु!
याद आती रहे उस की
जो बीमार माँ है
या पिता
बेटी है या बेटा—
सिर्फ़ एक केस कैसा?
असाध्य या साध्य बीमारी में भी
मन की कोई
दवा क्यों नहीं?

प्रभु!
उस अबूझ
मर्ज़ पर
एक शोध पत्र की
मुस्कराहट कैसी?
रुदन में बधाई
और राख में बुझी देह पर
तालियों का असाध्य सुख कैसा?

दयामय!
न दो शाप
कि भद्रजन की दवा-दारू में
रहूँ समर्पित मैं।

दो यह वरदान
कि द्रव्य प्रतिष्ठा के
विज्ञान की करूँ चीर फाड़।
समय के गर्भ की
आखिर यह कैसा
भ्रूण हत्या प्रभु!

कश्मीर उप्पल

कविता—1

लड़ रहे हैं
युगोस्लाविया के कोट
ठंड और भूख के खिलाफ़ लड़ाई
भारत के बाज़ारों में

सरायेवा अब भी घेराबंदी में है
जारी है बोस्निया में कत्लेआम
पूरे विश्व में शर्मिन्दगी में
गिर रही है बर्फ़

कोट छोड़ रहे हैं मुस्लिम और सर्ब शरीर
और पूरे विश्व के दरवाज़े खोल जा रहे हैं

प्रिय युगोस्लाविया के कोट!
प्रार्थना है
इस देश में तुम्हें
भारतीय शरीर मिले
तुम्हारी भटकन यहाँ खत्म हो

कविता—2

थूथना ऊँचा उठा
गुर्राता है सूअर

आदमी भाला लिए हो
या लिए हो रोटी
देखो उसे
घूरता है सूअर

आदमी पालता है उसे
एक खेत की तरह
हत्या का विस्तार है
बालों की फ़सल

सूअर भागता है
छोटे पैरों पर स्थूल काया ले कर
आदम-क़द से हारने के लिए

वेदप्रकाश भारद्वाज

यात्रा

चीज़ें अब नहीं हैं हमारे साथ हमारे लिए
बसा ली है उन्होंने अपनी अलग दुनिया।
चीज़ें—जिन्हें बनाया हम ने अपने लिए
अपने स्वतत्र अस्तित्व के साथ
आँकने लगी हैं हमारी उपयोगिता को।
एक चीज़ से दूसरी चीज़ तक जाने में
एक पूरी यात्रा हो जाती है
एक दुनिया से दूसरी दुनिया की यात्रा।
यात्राएँ हैं चीजें—चीज़ें हैं यात्राएँ
बाज़ार के प्लेटफ़ॉर्म पर बैठी-बैठी
चीज़ें झाँकती हैं हमारी जेबों में
वहाँ उन की यात्रा के लिए कोई संभावना है या नहीं?
अक्सर एक दूसरे के सामने
खड़े होते हैं हम
एक-दूसरे को चुनौती देते हुए
और अक्सर जीत जाती हैं चीज़ें
वे महँगी हैं और नवीनतम तकनीक का कमाल हैं—
आदमी का निर्माण आज भी पुरानी तकनीक से हो रहा है।
जब तक हम एक तकनीक तक पहुँचते हैं
चीजें किसी नई तकनीक की यात्रा पर चल देती हैं
हर नए मोड़ पर हम
अपने आप को उन के पीछे ही पाते हैं।

ज्योतिष जोशी

भिखारी एक परिचय

भिखारी ठाकुर का जन्म छपरा (बिहार) जिले के एक गाँव कुतुबपुर में 18 दिसबर 1887 को हुआ और उन का निधन 84 वर्ष की आयु में 10 जुलाई 1971 को। भोजपुरी सस्कृति के महान गायक भिखारी ने अपनी रचनात्मकता से पूर्वी उत्तर प्रदेश और बिहार के लगभग आधे हिस्से को तीन दशको (नाट्य रचना काल 1933 1962) तक सर्वाधिक प्रभावित किया। वे एक ही साथ कवि, भक्त अभिनेता नाटककार तथा समाज सुधारक तो थे ही, अपने समय की धड़कनों को पहचान कर बहुत दूर तक दखने की दृष्टि भी रखते थे। समाज-व्यवस्था और सत्ता के हर दुर्गुण को इस कलाकार ने उजागर किया और उस के विरुद्ध जनमत भी बनाया। यह आश्चर्यजनक किन्तु सत्य है कि जिन दिनों हिन्दी नाटकों में भी यथार्थवादी दृष्टि का आगमन नहीं हुआ था उन दिनों भिखारी की रचनाओं में उस का पर्याप्त विकास हो चुका था। अकेले भिखारी के नाटकों में अधिकाश हिन्दी नाटकों की प्रमुख प्रवृत्तियाँ आसानी से देखी जा सकती हैं। समाज में व्याप्त कुसस्कारों के ख़िलाफ़ जेहाद छेड़न के अतिरिक्त भिखारी ने अंग्रेज़ी राज के विरुद्ध जनता को जगाया और बहुत बार इस क लिए यातनाएँ भी झलीं।

बिरहा बहार भिखारी का पहला नाटक है जिस के बाद उन्होंने क्रमश *बिदेसिया कलियुग बहार, गंगा स्नान, बेटी बेचवा भाई विरोध पुत्र वध विधवा विलाप राधेश्याम बहार ननद भौजाई* तथा *गबर घिचोर* आदि की रचना की। इस के अतिरिक्त उन के कुछ गीत सग्रह भी प्रकाशित हुए, जिन में *नवीन बिरहा भिखारी हरि कीर्तन श्री नाम रत्न रामनाम माला भिखारी शका समाधान जय हिन्द ख़बर,* और *नर नव अवतार* आदि मुख्य हैं।

इस तरह भिखारी की पुस्तकों की संख्या 28 से अधिक है। उन के गीतों में हिन्दू मुस्लिम एकता पर बल है तथा वर्ण-व्यवस्था की ख़ामियों पर तीखा कटाक्ष। कुछ गीत भक्ति और विनय संबधी छदों में निबद्ध हैं। शृगार के दोनों पक्षों—सयोग वियोग पर भिखारी के गीत भोजपुरी अचल में बहुत लोकप्रिय हैं और प्राय सब की ज़ुबान पर उन की धुनें रहती हैं। अग्रेज़ी सरकार ने भिखारी ठाकुर को 'राय बहादुर की पदवी स सम्मानित किया था आर बिदेसिया नाटक पर फ़िल्म की लोकप्रियता से प्रसन्न हो कर तत्कालीन बिहार के राज्यपाल ने ताम्रपत्र भेंट किया था। महापडित राहुल सांकृत्यायन ने भिखारी को भोजपुरी का शेक्सपियर तथा 'अनगढ़ हीरा कहा था।

भिखारी ठाकुर

गबर घिचोर

पात्र परिचय

गलीज	गाँव का एक परदेशी युवक
गड़बड़ी	गाँव का एक आवारा युवक
घिचोर	गलीज बहू से उत्पन्न गड़बड़ी का पुत्र
पच	गाँव का सम्मानित आदमी
गलीज बहू	गलीज की पत्नी और गबर घिचोर की माँ
	इस के अतिरिक्त जल्लाद समाजी दर्शक आदि।

समाजी (चौपाई)

सिरी गनेस पद सीस नवाऊँ।
गबर घिचोरन के गुन गाऊँ।।
बहरा[1] से गलीज घर अइलन।
मुदित भइल मन दाम[2] कमइलन[3] ।।

मेहर[4] के ना भइलन साथी।
झूमे जस मनवाला हाथी।।
एही से दुआर पर आई।
निरखन लग लोग बहुताई।।

घरनी सुनली अइलन पीया।
रहि-रहि के हुलसत बा जीया।।
ले थारी जल पाँव पखारे।
आजु जनम भये सुफल हमारे।।

गलीज बहू *(गलीज से)*

(कवित्त)

---

1 बहरा—परदेश 2 दाम—रुपया 3 कमइलन—कमाया 4 मेहर—पत्नी

कमल उछाह[1] जइसे सूरुज प्रकास हात
कुमुद उछाह जइसे चद्रमा परस ते।
भौंरन उछाह जइसे आगमन बसत जानि
मारन उछाह जइसे बरखा बरस ते।
हसन उछाह जइसे मान सरोवर बीच
साधन उछाह इच्छा आवत अरस ते।
सब का उछाह एही भाँति उर होत अहै
हमरो उछाह स्वामी ताहरे दरस ते।

गलीज — इस झझट की कोई जरूरत नहीं है। जल्दी बताओ लड़का कहाँ है?

गलीज बहू — (पति से)

(गाना पूर्वी)

सिव सती जी के पूत देवन में मजगूत[2]
गिरत बानी ताहरे चरन में हो स्वामी जी।
गवना करके गइलऽ, घर क ना सुधि कइलऽ
मरतानीं[3] ताहरा वियोग में हो स्वामी जी।

हाथ-बाँहि धइला क सादी गवना कइला के
आज ले ना कइलऽ निगाहवा हो स्वामी जी।
बबुआ भइलन पैदा कुछ ना मिलल फैदा
सब विधि कइलऽ बेकैदा हो स्वामी जी।

आस मत नास करऽ बेटा के रहे ऽ घरे,
पगली के प्रान के आधार मार हो स्वामी जी।
पोसत बानीं बचेपन से बबुआ के तन मन से
कसहूँ उपास आध पेट खा के हो स्वामी जी।
कहत भिखारी नाई देहु खीस बिसराई
उजरल घर के बसादऽ मार हो स्वामी जी।
(अपने पुत्र से) ऐ बाबू, चरण स्पर्श करो यही तुम्हारे पिताजी हैं।

समाजी — (चौपाई)
गिरत पुत्र पिता पग जाई।
धरि क बाँह गोद बैठाई।।
बेटा हमार चलऽ परदेस।
काहे तूँ सहबऽ घरे कलेस?

गबर घिचोर — माई के सग में लेक चलऽ रावऽ अपन धाम।

1 उछाह—उत्साह 2 मजगूत—मजबूत

	छाडिके गइला से करिहन नर-नारी उपहास।।
गलीज	एह पागल के छोड दो बेटा, चलो हमारे साथ।
	फिर ना एसा मोका कबहूँ, लगेगा तेरे हाथ।।
गलीज बहू	बबुआ के हम सोझा[1] राखब, देख के करब ऽ सबूर[2]।
	सब बिधि से मत करऽ स्वामी हमरा के चकनाचूर।।
गलीज	*(पुत्र की बाँह को जबरदस्ती पकड कर झटकारते हुए)* चलो बेटा तुम चलो।
समाजी	(चौपाई)
	तेहि अवसर गडबडी तहँ आए।
	पुत्र मोर कहि रोब जमाए।।
	तीनों में झगडा भए भारी।
	देखन लग सकल नर-नारी।।
	पचित[3] करन लगे सब लागू।
	गबर घिचोरन केहि के जोगू।।
	(पच आ रहे हैं)
पच	तीर्नो व्यक्तियों में झगडा लगा हुआ है झगडा छूट नहीं रहा जिस पचायत में हम बुलाए गए हैं।
	(गलीज की ओर दिखाता हुआ) यही गलीज है। गलीज।
गलीज	हाँ बाबा।
पच	यही गलीज है। विवाह करके घर में पत्नी को बैठा दिया और खुद परदेश नौकरी पर चला गया। परदेश से न कभी चिट्ठी भेजी, न कोई खबर और न पाँच रुपए का भी कभी मनीआर्डर। यही ईश्वरी माया है। गलीज बहू इधर आओ।
	यही गलीज बहू है। इस का एक पुत्र गबर घिचोर है। बबुआ गबर घिचोर इधर आओ। गाँव-नगर से परदेस में जा कर किसी ने कह दिया कि गलीज तुम्हें पुत्र हुआ है। गलीज परदेस से लौट आया है और कह रहा है कि बच्चे को हम जबरदस्ती ले जाएँगे। गलीज बहू कह रही है कि हम ने बच्चे को उम्मीद लगा कर जनमाया पाला पोसा बच्चे को क्यों लिए जाओगे? हमें भी लिए चलो। इसी बात को ले कर दोनों में झगडा है। गड़बड़ी तुम य बताओ घिचोर को ही ले कर तुम ने दावा क्यों किया?
गड़बड़ी	घिचोरवा हमारा बेटा न है महराज!
पच	क्या गलीज बो से तुम्हारी शादी हुई थी?
गडबडी	नहीं।
पच	मडप सजा कर? बाजे-गाजे के साथ? नेवत निमत्रण दे कर?
गड़बडी	नहीं महराज!
पच	तब घिचोर तुम्हारा बेटा कैसे हो गया पगल?

---

1 सोझा—सामने 2. सबूर—सतोष 3 पंचित—पचायत

गडबड़ी — ए बाबा हम आप स जो कह रह है उस सुनिए। हम रास्ते से चल जा रहे थे उधर स गलीज बा चली आ रही थी। उसी दौरान हम स कुछ गलती हो गई।

पच — इस तरह गलत बात नहीं बोलना चाहिए। रास्ते में गलती हो जाने स क्या बेटा हो जाता है? कोई प्रमाण है?

गड़बडी — हाँ बैठिए, हम प्रमाण दे रहे हैं।
राह में पवलीं[1] खाला जाली[2] ।
खोजत अइलन एगा कुचाली[3] ।।
रोपया[4] धइलीं ले लीं निकाल।
ले जास आपन खलिहा[5] जाली।।

पच — हम तुम स मामला पूछ रहे हैं और तुम लगे गीत गान?

गडबडी — हम गीत नहीं गा रहे थे बल्कि उस में आप से अपना मामला ही कह रहे थे।

पच — लेकिन यह तो हमारी समझ में आया नहीं बबुआ?

गडबडी — इधर आइए, दा कदम आगे बढ़ आइए, हम आप को समझा द रह हैं। हम रास्ते से चल जा रह थे। रास्त में हमें जाली मिली झोंड़ा मिला या मनीबैग। उस में हम ने अपने रुपए पैसे रख दिए। कुछ दिनों बाद जाली या मनीबैग वाल ने अपनी चीज पहचान ली। लेकिन आप ये - बताइए कि वह अपना खाली मनीबैग ले जाएगा या कि हमारे द्वारा रखा हुआ रुपया भी लिए चला जाएगा?

पंच — तो ये बात तुम्हें हम से पहल ही कह देना चाहिए था न।
(दर्शकों की ओर देख कर) इस गरीब को रास्ते में झोंडा मिला या मनीबैग उस में इस ने अपने रुपए पैसे रखे। कुछ दिनों बाद झांडा या मनीबैग के मालिक ने अपनी चीज की पहचान कर ली। लेकिन उस स्थिति में ता वह केवल अपना सामान पाने का ही हक रखता है उस में रखे हुए रुपए पैसे का हकदार नहीं हो सकता। बबुआ गबर घिचोर तुम गड़बड़ी के ही साथ रहो।

गबर घिचोर — ए बाबा हम कुछ कहेंगे।

पच — क्या कहोगे? जो कहना हो वह तो कहो पर तुम्हें गड़बड़ी के साथ ही जाना होगा।

गबर घिचोर — सुनहुँ सभासद असल कहूँ,
झूठ में लागी पाप।
माई-बाबू छूटलन
भइलन जालीवाला बाप।।

पंच — बेटा ले जाओ गड़बड़ी।

गलीज — गबर घिचार हमारा बटा है गड़बड़ी कैसे ल कर चले जाएँग।

पंच — औरत न तुम्हारी है पगला।

गलीज — बेटा भी हमारा ही है।

---

1 पवली—पाया 2 जाली—बटुआ 3 कुचाली—कुमार्गी 4 रोपेया—रुपए 5 खलिहा—खाली

पच औरत को तो बाजे गाजे के साथ लाए, बेटे को ता नहीं जनमाए हो? तुम ये बताओ कि कितने दिनों का तुम्हारा बेटा हुआ और तुम कितने दिनों पर परदेस से घर आए हो?

गलीज पद्रह बरिस भइल[1] परदेस।
ओहिते[2] लागल उमिर[3] के सेस।।
बेटा ले क बहरा[4] जाइब[5]।
फिर ना घर में लात लगाइब[6]।।

गलीज बहू तेरह बरिस के बबुआ भइलन।
बेटा के खोजत बाबू अइलन।।
लागत नइखे तनिको लाज।
हँसत बाटे सकल समाज।।

गलीज हट, लाज वाली।

पच ऐसी बेशर्म हम ने दुनिया में नहीं देखी। अगर लजाने की कहीं जगह न मिले ता शामियाने के बाँस में मुँह लगा दो।

गलीज ए बाबा, आप बैठें, हम सबूत दे रहे हैं।
गाछ[7] लगवलीं[8] कोंहड़ा[9] के
लतर गइल पछुआर।
फरल परोसिया के छप्पर पर
से हऽ माल हमार।।

पच हम तुम से मामला पूछ रहे हैं और तुम लगे ध्रुपद गाने?

गलीज ए बाबा, हम ने अपना मामला ही कहा है।

पच सच में तुम ने मामला लपेट लपेट कर कहा पर हमारी समझ में नहीं आया बबुआ।

गलीज ए बाबा, इधर आइए, हम आप को समझा दे रहे हैं। हमें कहीं कुम्हड का एक पौधा मिल गया उस हम ने अपने आँगन में रोप दिया। उस की सेवा सुश्रूषा की। उस की लता बढते-बढ़ते पड़ोसी के छप्पर पर चली गई और वहाँ कुम्हडे का फल लग गया। इस हालत में आप हमें बताइए कि वह कुम्हड़ा हमारा हुआ कि पड़ोसी का?

पच तो यह बात तुम्हें हम से पहले ही कहनी चाहिए थी। *(दर्शकों की ओर देखते हुए)* इस गलीज को कहीं से एक कुम्हडे का पौधा मिला। उसे ला कर अपने आँगन में रोपा। उस की सेवा की। उस की लता फैलते फैलते पड़ोसी के छप्पर तक गई और कुम्हड़े का फल लग गया। तो क्या पड़ोसी छप्पर के बदले दूसरे का कुम्हड़ा ही ले लेगा। जिस का पौधा उस का कुम्हड़ा। बबुआ गबर घिचोर तुम गलीज के साथ चले जाओ।

गबर घिचोर ए बाबा हम कुछ कहेंगे।

पच क्या कहोगे? जो कहना हो वो कहो पर जाना होगा तुम्हें गलीज के साथ ही।

---

1 भइल—हुआ 2. ओहिते—उस से 3 उमिर—उम्र 4 बहरा—बाहर 5 जाइब—जाएँगे 6 लगाइब—लगाएँगे
7 गाछ—पेड़ 8 लगवलीं—लगाया 9 कोंहड़ा—कुम्हड़ा

गबर घिचोर — अब कहलन बाबू असल
सुनहु पंच दे कान।
हम बेमा कइसे कहीं
बालक अबुध नादान।।

पंच — ले जाओ गलीज अपने बेटे को ले जाओ।
(तीनों में हल्ला गुल्ला होता है—'बेटा हमारा है', 'बेटा हमारा है'।)

गलीज बहू — *(पंच से)* ए बाबूजी, हमारे बेटे की बाँह उखाड़ लिए लोग ए दादा!

पंच — चुप रह। किस की मजाल है कि तुम्हारे बेटे की बाँह उखाड़ लेगा। मुक्के की मार से पाताल में धँस जाएँगे लोग।

गलीज बहू — झाड़ू मारो तुम्हारी पंचायत करने को।

पंच — तुम व्यर्थ ही हम पर लाल पीली हो रही हो।

गलीज बहू — लाल पीली न हों। कूद कर आप कभी इन्हें दे रहे हैं कभी उन्हें। हमारा बेटा है और हम से आप कुछ पूछते हो नहीं हैं।

पंच — नाक चुआओगी तो मारेंगे मुक्का से। तब से नाक चुआ रही है कि पूछते नहीं हैं पूछते नहीं हैं। तुम ने किस से पूछ कर यह सब किया! इधर आओ, इधर आओ। तुम से भी पूछेंगे इधर आओ। तुम ये बताओ कि गड़बड़ी तुम्हारे साथ सच झूठ का लद फद बाँधे हुए है या कि उस के साथ तुम्हारा कुछ है?

गलीज बहू — जब आप पूछ रहे हैं तो मैं कह रहा हूँ। यही गड़बड़ी है ए बाबूजी। ये शाम सबेरे रोज आते थे ए बाबूजी!

पंच — दोपहर में भी आता होगा। धूप में कितना भी पैर क्यों न जले यह मानता न होगा।

गलीज बहू — कभी दुआरी पर बैठ जाते थे ए बाबूजी। कभी किवाड़ का पल्ला पकड़ खड़े हो जाते थे और न जाने कैसे मुँह बना लेते थे। रोज रोज की जब हम ने यही दशा देखी तो अपने मन में विचार किया और सोचा कि जब हमारे पास वही चीज है जिस के लिए इन्होंने यह दशा बना रखी है तब हमें छुपाना न आया ए बाबूजी।

पंच — तुम्हारे पास कोई सबूत है?

गलीज बहू — बैठिए, सबूत हम दे रहे हैं।
घर में रहे दूध पाँच सेर, केरू[1] जोरन[2] हिल[3] एक धार।
का पचाइत होखत बा घीउ[4] साफे[5] भइल हमार।।

पंच — गलीज यो हम तुम से मामला पूछ रहे हैं और तुम लगीं झूमर गाने।

गलीज बहू — बाबूजी मैं झूमर नहीं गा रही थी। मैं आप को अपना मामला ही बता रही थी। आप को समझ में नहीं आ रहा है तो दो कदम आगे बढ़ आइए, मैं समझा दे रही हूँ।

पंच — कहाँ-कहाँ मामला में समाना नहीं चाहिए।

---

1 केरू—कोई 2. जोरन—दही जमने के लिए दूध में डाला जाने वाला दही 3 हिल—दिया 4 घीउ—घी
5 साफे—साफ कर स

(दर्शक का ओर दखते हुए)
गलाज वा हृदय का अच्छा आदमा है।

गलीज बहू बाबूजी मैं पाँच सर दूध अपना देह के लिए निश्चित कर रही हूँ, पर जारन क बार मं कहने में शर्म आ रहा ह।

पच कहा-कहा मामला में लजाना नहीं चाहिए। अभा ता मामला निर्णायक माड पर आया है।

गलीज बहू *(गडबडी की आर इशारा करता हुई)*
जारन इन का आर पसाना इन्हीं का है ए बाबूजा।

पच यह बात तुम का मुझ स पहल हा कहना चाहिए थी। मान लिया कि किसा के घर मं दा सेर चार सर दूध रखा हुआ है। उसे गर्म किया और पकाया और टाल मुहल्ल म थाडा मा जारन ला कर उस में डाल दिया। तो क्या वह जोरन क बदल समूचा दहा हा ल कर चला जाएगा? जिस का दूध उस का घी।

गलीज बहू ए बाबूजी जिस का दूध उस का घी क्या नहीं। इतन भर जारन के लिए ये हमार बाबू पर दावा कर रहे हं।

पच अर बबुआ तुम चले जाआ अपना माँ क साथ।

गबर घिचोर बाबा। हम भा कुछ कहेंग।

पच कहोग क्या? कहना हा सा कह ला पर जाना ह तुम्हें अपनी माँ के ही साथ।

गबर घिचोर साँच बात कहला मइया स हमर मनमान।
झूठा पक्षट लागल बा सुनहु पच सजान।।

पच ले जाआ गलाज बा। बटा ल जाआ।
(तीना में फिर झगडा शुरू हा जाता ह और सभा पच का बईमान बतात हं।)

गलीज *(उठ कर पच को घसीटत हुए)*
चल हा पचायत करन या कि हम म खून करान?

पच हम क्या करं? जिस का हक ह पद है उसे हा हम द रह हैं।

गडबडी इधर आइए, बइमान काई नहीं कहगा।

पच क्या कहना है सा कहा।

गडबड़ी हम आप स कह रह हैं कि लडक का हमार साथ करा दत ता हम आप का दा सौ रुपए दग।

पच कहा हा गड़बड़ आज तक बाबा का रुपए का लाभ न हुआ ता आज तुम्हारे दा रुपल्ला म बाबा क दिन गुजर जाएँग?

गडबड़ी दा रुपए नहीं न कह ह।

पच दो सौ कहा चार सौ कहा। इन रुपया का आग बाबा तकन वाल नहीं हं।

गडबड़ी दा नहीं न कह हैं दा सौ दग।

पच हमें दो हा समय में आया ह बबुआ। दा सौ कह हा?

गडबड़ी हाँ बाबा।

पच जाआ उधर बैठा। मामला में घबराना नहीं चाहिए। गलाज सलाज क्या कर ले जाएगा। घर के आदमियों का जरा-सा खबर भज दू ता इन का चमडा खिच जाएगा।

गलीज	ऐ बाबा थोड़ा सा इधर आइए।
पच	जो कहना है वहीं स कहो।
गलीज	नहीं जरा दो कदम आग बढ आइए। आप स एक भीतर की बात कहनी है।
पच	कहना है सो कहो बबुआ, पर जानते ही हो कि हम कितने भक्त आदमी हैं। बिना भोजन किए स्नान नहीं करते।
गलीज	लड़के को कह सुन के हम में रखवा देते तो हम आप का पाँच सौ रुपए देत।
पच	तुम्हारे ऐस लोभी आदमी से हमें दुख होता है। पाँच रुपल्ली से बाबा क दिन ता नहीं जाएग?
गलीज	पाँच नहीं कहे हैं बाबा।
पच	*पाँच नहीं तो तुम पाँच हजार कहा पचीस हजार कहा रुपए के आगे देखन वाले ये बाबा नहीं हैं।*
पच	*पाँच सौ न कह रहे हैं!*
पच	पाच सौ? हमें लगा कि पाँच कहे हो। सुना बबुआ। रुपए पैसे कोई चीज नहीं हैं। ये हाथ के मैल हैं। आज हैं कल नहीं हैं। हमारे और तुम्हारे घर की नजदीकी ता बहुत पहले से चली आ रही है। इसे हमें निबाहना ही चाहिए। पाँच सौ कह हो न देने का?
गलीज	हाँ बाबा।
पच	जाओ बैठो। गड़बड़ा क्या बेटा ल जाएगा। मामले म घबड़ाना नहीं चाहिए। *(गलीज बहू से)* गलीज बहू रे?
गलीज बहू	क्या बापूजी।
पंच	तुम्हारा मामला फिर से देखेंग।
गलीज बहू	बापूजी आप ने पहले क्या देखा?
पच	थोड़ा सा ऊपर ऊपर म ही देखा था अब तक।
गलीज बहू	हमारे पाम ता रुपए नहीं हैं। पर अगर लड़क का आप हमारे साथ रखवा दत तो मैं आप का सेवा सत्कार कर दती।

(गाना)

ओन्र[1] से हउवन[2] बेटा हमरा ओदर से।
        साँच बात में आँच लगत बा
        पूछीं बोला क नाऊ चमार। ओदर स
पुत्र भइल जाम स्वा॰ गइल सभ
        तनिको[3] ना खइलीं बकार। ओन्र से
अब आगा[4] पर दागा हाखत बा
        धरलस[5] ठग बटमार। ओन्र स
कवन भिखारी तइयारी भइल जब

---

1 ओन्र—उन्र 2 हउवन—है 3 तनिको—तनिक भी 4 आगा—आगे 5. धरलस—धर लिया

पियला[1] *से दूध के धार। ओदर से*

(चौपाई)

चारो तरफ से उठल हावा[2] ।
एह में नइखे केहू[3] के दावा।।
बबुआ हउवन[4] बेटा हमार।
पूछीं बोला के नाऊ चमार।।
नव महीना पेट के भीतर।
रहसु त पूजलीं देवता पीतर।।
जनम के समय म दुख भइल।
इहे बुझाय जे अब जीव गइल।।
होखत रहे राम से बात।
असहीं[5] होला जीव के घात।।
लालच में ना लउके[6] जान।
बेटा दियाद[7] हे भगवान।।
बबुआ भइल[8] आसरा[9] लागत।
अब घेरले बा दूगो पागल।।
दूनों ओर के जार बा भारी।
राम राम कहि रहे भिखारी।।
हम अबला कछुआ[10] ना जानीं।
पच गासइया राखऽ पानी।।
झगडा क ना जानीं भेद।
होखत बा करेज[11] में छेद।।
रो रो कहे *भिखारी* नाई।
बेटा दिया द काली माई।।
कुतुबपुर में बाटे घर।
हमहीं हईं बेटा के जर[12] ।।
जिला छपरा हउवे खास।
बबुआ में लागल बा आस।।

(बेटा से विलाप गान)

सिवसती[13] गनपति हरहु[14] बेकार मति

---

1 पियला से—पीने से 2. हावा—हवा 3 केहू—कोई 4 हउवन—है 5 असहीं—इसी तरह 6 लउके—दिखता है
7 दियाद—दिला दो 8 भइल—हुआ 9 आसरा—आशा 10 कछुआ—कुछ भी 11 करेज—कलेजा 12 जर—जड़
13 सिवसती—शिव पार्वती 14 हरहु—हटाओ

चरन के चेरी के इयाद[1] राखउ हो बबुआ।
पेटवा भीतर मोंहीं गम कुछ रहे नाहीं
तबहीं से आसरा लगवलीं हो बबुआ।
बनि के ताहार कुली लालच में गइलीं भूलि
नवमास ढावलीं माटरिया[2] हो बबुआ।
दिन-रात हूल[3] आवे घर ना आँगन भावे
चलत में गोड़[4] भहरात रहे हो बबुआ।
जब हाथ लागल पीरा दुखवा समुझ हीरा।
मुखवा से कहतानी कमती हो बबुआ।
सुनऽ दुलरू! कहीले से चार दिन पहिले से
सउरी[5] में दाँत लागि जात रहे हो बबुआ।
केहू कह हउवे दूत, केहू कह हउवे पूत
केहू कह भीतरे मुअल[6] बा हो बबुआ।
केहू कह मरि जाई चुरइल धइलेबा माई
साडासा सँगरनी के खइलसि हो बबुआ।
अन्न तन घरो रह ईहिसभ केहू कह
चमइन हाथ लाके कढ़लसि[7] हो बबुआ।
नया भइल जनम मोर, असहीं ह पदा तोर,
तेलवा लगाइके अवटलों हो बबुआ।
सुधि करऽ भइला क गूह मूत कइला क
माई मत जानऽ हमें दाई जानऽ हो बबुआ।
कहत भिखारी नाई कवन करीं उपाई
मुँहवाँ क ताहर दुलारवा हो बबुआ।
कुतुबपुर हउव ग्राम रामजी सँवार ऽ काम
जानि क इनाम जिला छपरा हो बबुआ।

पंच अपनी माँ के रोने से क्या तुम उसी में रहोगे?

गबर घिचार आप जिस में कहेंगे उसी में रहेंगे।

पंच वाह वाह! रहना है तुम्हें बाबा क्यों अपना ईमान खराब करें। बाबा कहें कि तू कुएँ में कूद जाओ तो कूद जाओगे?

गबर घिचार कूद जाएंगे।

पंच बाबा कहें कि तुम अपनी जान दे दो तो दे दोगे?

गबर घिचोर दे देंगे।

---

1 इयाद—याद 2 माटरिया—गठरी 3 हूल—दरद 4 गोड़—पैर 5 सउरी—प्रसव घर 6 मुअल—मरा हुआ
7 कढ़लसि—निकाला

पंच हम कहेंगे कि तुम में तीनों का समान अधिकार है। तुम्हारी देह नाप कर तीन टुकडे किए जाएँगे। तीनों में गोटी पड़ेगी। क्या तुम्हें कबूल है?

गबर घिचोर हाँ बाबा, कबूल है।

पंच जल्लाद को बुलाओ रे।

समाजी देहु खबर जल्लाद के जाई।
सुनत बात आवत हरखाई।।
कर हथियार धार बनवाई।
सभा मध्य में पहुँचे आई।।

पच बबुआ, सो जाओ।

गबर घिचोर हम कुछ कहेंगे।

पंच *(गबर घिचोर से)* अच्छा कहो।
(जल्लाद अलग बैठता है)

गबर घिचोर *(रो-रो कर)*

अइसन[1], लिखलन करम में विधाता।
सुंदर नर तन बिमल पाइ के टूटल जग से नाता।।
होत मित्र केहू काम न आवत, बैरी भइलन[2] पितु-माता।
सभा मध्य में वध होखत बानीं, सुनहु राम सुखदाता।।
बड़ उपहास भइल घिचोर के एको ना भिखारी से कहाता। अइसन

(चौपाई)

तीन जना में झगड़ा भइल।
गबर घिचोरन के जीव गइल।।
जेकर[3] हिस्सा जहाँ से होई।
काटिके बाँटि लहु सब कोई।।
करनी के फल परल कपारा।
तन पर चक्कर चढ़ल हमारा।।
बड़का दुख परल[4] जग बदन।
भइल अकाल मृत्यु रघुनदन।।
जरिए चलली मइया कुचाली[5]।
छुड़ी का हाथे भइलि हलाली।।
रामचद्र अवधस कुमारा।
बहे चाहत बा खून के धारा।।
लखन भरत सतरुघन भइया।

---

1 अइसन—ऐसा 2 भइलन—हो गए 3 जेकर—जिस का 4 परल—पड़ा हुआ 5 कुचाली—कुमार्गी

भँवर से पार करहु मोर नइया[1] ।।
धनुस बान धरि चारो भाइ ।
एह अवसर पर होखऽ[2] सहाइ ।।
ना कइलीं तीरथ-व्रत दान ।
बालकपन बा हे भगवान ।।
माई बाप के सेवा नाहीं ।
नाहक नर भइलीं जग माहीं ।।
सिर पर पहुँचल तुरत काल ।
स्त्री भइल दसरथ के लाल ।।
भइल सिकाइत[3] जग में भारी ।
दूगो बाप एक महतारी[4] ।।
एह जीवन से मुअल बेस ।
सुभ गति द दऽ सिरी अवधेस ।।
जयति-जयति जय कोसल किसोर ।
नइखे आवत करे निहोर[5] ।।
दाया तोर मोर अग्याना ।
करिहन तुरत परान पयाना ।।
कुतुबपुर के कहे भिखारी ।
जइसन मरजी होय तिहारी ।।

(गाना)

धन धन[6] मालिक माया तेरी
लोक—वेद सब गाता है ।
ऊँच-नीच करनी जैसा करता
वैसा ही फल पाता है ।
माई भाई—बाबू कबीला
झूठ जगत के नाता है ।
गबर घिचोरन आज जगत से
जमपुर[7] को चल जाता है ।
सभा मध्य जल्लाद के हाथे
छुरी गला में खाता है ।
सूर्य उदय जब तक जीवन अब

---

1 नइया—नाव 2 होखऽ—होना 3 सिकाइत—शिकायत 4 महतारी—माँ 5 निहोरा—प्रार्थना
6 धन धन—धन्य धन्य 7 जमपुर—यमपुर

तुरत राह चलि आता है।
अधकार का डर स मनुवाँ[1]
रो करके पछताता है।
कुतुबपुर क नाई भिखारी,
तीना झगडा गाता है।
महादेव क पारबती क
चरन में सीस नवाता है।

पच बस-बस। ञस सो जाओ इधर।
(घिचोर सो जाता है। पच देह नाप कर निशान लगाते हैं। जल्लाद को उसे काटने का हुक्म दिया जाता है।)

गडबड़ी देखिए बाबा ठीक से नापिए, इधर-उधर न होन पाव।

गलीज हाँ बाबा ठाक से नापिएगा।

पच अरे मब पगला, जहाँ बाबा ही हों वहाँ इधर उधर क्या होगा। *(जल्लाद से)* एक धार इधर से काटो, एक धार उधर स काटा।

जल्लाद ए बाबा, हम भी कुछ कहेंगे।

पच तुम क्या कहागे कहा।

जल्लाद जैगो[2] टुकडा करब[3] हम,
फी[4] चवन्नी से लहब[5] ना कम।

पच कटाई तो तुम्हारा उचित है। दे दो गडबड़ी चार आना पैसा दा।

गड़बड़ी लाजिए बाबा।

पच गलीज चार आना पसा दो।

गलीज लीजिए सरकार।

पच गलीज बहू रे।

गलीज बहू क्या ए बाबूजा।

पच चार आना पसा दो तुम भी।

गलीज बहू चार आना पैसा क्या होगा बाबूजी?

पच तुम्हारे लड़के को कटाइ दना ह।

गलीज बहू ए बाबूजी जीते जा दाना जना में स किसा को द दाजिए, लकिन हमारे लडके का मन कटवाइए।

पच इस का जीत जी इसे या उस द द? ता क्या तुम्हें हिस्सा नहीं चाहिए?

गलाज बहू नहीं बाबूजा उस जात जा हा दोनों में स किसी को द दाजिए।

पच दखा तुम्हारा समझ में नहीं आ रहा है। हम पुरान हो कर तुम्हें समझा दे रह हैं। यह तुम्हारा

---

1 मनुवाँ—मन 2 जैगो—जितना 3 करब—करेंगे 4 फी—प्रत्येक का 5 लहब—लेंगे

हा जन्मा है। अगर तुन्हें एक टुकड़ा भी हिस्से में मिल जाएगा तो तुम्हारे मन का अरमान रह जाएगा।

गड़बड़ी ए महाराज दो टुकड़ा ही करवाइए।

जल्लाद काटें?

पच *(हाथ से रोकते हुए)* ये गड़बड़ी कह रहा है कि दो टुकड़ा हो जाय यह गलीज कह रहा है—दो टुकड़ा हो जाय। जिस अपने बेटे की चिन्ता नहीं है उस का बेटा कैसा? बेटा से प्रेम केवल माँ का है। उठाओ बेटा ले जाओ गलीज बहू।

(गलीज बो बेटा ले जा रही है।)

समाजी ज्यों बेटा माता के सग जाए।
त्यों गलीज-गड़बड़ी लजाए।।

पंच गाना वही है जिस में मालिक का नाम हो। नकल-तमाशा वही है जिस में धर्म चर्चा हो, ऐसा समझना चाहिए कि गबर घिचोर की माँ किस तरह अपना दुख बयान करके रोई है गाना में चौपाई में या पूर्वी में। चाहे लड़का जैसा भी हो जिस तरह उस के पैदा होने में माँ को दुख उठाना पड़ता है। जिस दुख से माताओं की जान चली जाती है। इन सब का वर्णन दुनिया में बेटे के लिए एक उपदेश देने के निमित्त हुआ है। गबर घिचोर की माँ एक और बाप दो हैं। इसलिए बेटा अपने विवेक से प्राण देने को तैयार है। वह ईश्वर से विनय कर रहा है कि हम न माँ-बाप की कुछ भी सेवा नहीं की। इस बात का बेटे को बहुत अफसोस है। लेकिन आजकल के जो असल बेटे हैं वे कह देते हैं कि वे पंच की बात नहीं मानेंगे। विशेष कर उन में अपनी जान की चिन्ता है। उन में माँ-बाप की सेवा की चिन्ता तनिक भी नहीं है। देखिए, सभा में गबर घिचोर कैसी चौपाई कह रहा है

मातु पिता के सेवा नाहीं।
नाहक नर भइलीं जग माहीं।।

भोजपुरी से अनुवाद ज्योतिष जोशी

कुमार विमल

साहित्य मे साहित्येतर

रचनाकार की कारयित्री प्रतिभा की आकुलता-व्याकुलता और उस के रचना-कौशल की निपुणता का एक प्रमाण रचनाकार द्वारा अपनाया गया विधा वैविध्य भी होता है। श्रेष्ठ प्रतिभा से सपन्न रचनाकार केवल एक या दो विधाओं में ही नहीं लिखता बल्कि वह कई विधाओं में रूप शिल्पगत निपुणता के साथ अपने को अभिव्यक्त करता है। आधुनिक भारतीय साहित्य में रवीन्द्रनाथ ठाकुर इस के उदाहरण हैं। आधुनिक हिन्दी कवियों के बीच अज्ञेय की उत्तरकालीन रचनाओं में इस विधा-वैविध्य की प्रवृत्ति परिपक्व प्रतिफलन के साथ मिलती है। धर्मवीर भारती के समग्र साहित्य में भी विधाओं का अच्छा वैविध्य मिलता है।

चूँकि साहित्य भावनात्मक और रचनात्मक होने के साथ ही सुसहत तथा समग्र ज्ञानात्मक विषय है इसलिए साहित्येतर विषयों और मानदडों का समावेश उन्नत एव परिष्कृत साहित्य में प्राचीन काल से ही होता आया है। आयुर्वेद के रस प्रकरण ने सस्कृत काव्यशास्त्र के रस सिद्धात के निरूपण में प्रणोदक का काम किया है। ऐसा प्रतीत होता है कि विशेषज्ञता के साथ ही बहुज्ञता और विश्वकोशीय ज्ञान का अपना महत्त्व है। पश्चिम में प्लेटो और अरस्तू तथा भारत में *अर्थशास्त्र* के प्रणेता कौटिल्य, *शुक्र-नीतिसार* और *औशनस शास्त्र* के लेखक शुक्राचार्य (औशनस्) *नीति सार* के लेखक आचार्य कामदक और अभिनव गुप्त राजशेखर क्षेमन्द्र आदि अनेक कश्मीरी राजानक कला-साहित्य या साहित्य शास्त्र के ही नहीं बल्कि अन्य अनेक विषयों के भी ज्ञाता थे।

आधुनिक युग में कई नए सपर्क शास्त्रों और अतर शास्त्रीय विषयों के प्रवर्तन तथा अभ्युदय के बाद विशेषज्ञता के साथ ही बहुज्ञता की आवश्यकता और भी बढ़ गई है। बहुज्ञता की यह आवश्यकता ही साहित्य में साहित्येतरता के महत्त्व को रेखाकित करती है। यह साहित्येतरता लेखन में इतरेतर अध्यास भी पैदा कर सकती है और बहुज्ञता के नाम पर भ्रातिपूर्ण छिछले ज्ञान को उभार कर किसी के लेखन को अधपकी खिचड़ी 'मिसेलेनिया या 'मुतफर्रक' भी बना सकती है—यह एक दीगर बात है। किन्तु, अब दुनिया वर्तमान 'माइक्रो इलक्ट्रानिक्स' युग में जिस तेज़-क़दम रफ्तार से सिकुड़ कर एक भूमडलीय गाँव बनती जा रहा है सूचना जिस त्वरा के साथ ज्ञान का स्थान ले रही है प्रत्येक एकातर वर्ष के अतराल में पूर्वार्जित ज्ञान जिस तरह अभूतपूर्व वेग से दो-ढाई गुना बढ़ता जा रहा है और हमारे सास्कृतिक प्रभाग में जिस गति से प्रौद्योगिकी के विरुद्ध पूर्वग्रह घट रहा है उसी अनुपात में विशेषज्ञता के साथ बहुज्ञता और साहित्य में साहित्येतरता का महत्त्व भी बढ़ता जा रहा है।

अब साहित्य शास्त्र और कला-शास्त्र के निष्कर्षों एव प्रमेयों की सपुष्टि के लिए विज्ञान और प्रौद्योगिकी के सिद्धातों और प्रयोगों का सहारा लेना वर्जित नहीं माना जाता है तथा उसी तरह साहित्य और कला की सकल्पनाओं को वैज्ञानिक अध्ययन का विषय बनाना और उसे प्रयोग के निकष पर जाँच कर प्रौद्योगिकी (टेक्नॉलॉजी) क क्षत्र में लाना अब अप्रासगिक नहीं माना जाता। कौन जानता था कि चकोस्लोवाकिया के एक साहित्यकार कार्ल चापेक की 'इजरी शीर्षक रचना में निहित सकल्पना सगणक (कम्प्यूटर) के आविष्कार का पथ प्रशस्त कर देगी?

विज्ञान और प्रौद्योगिकी ने आधुनिकता के मेरुदंड का निर्माण किया है और सृष्टि प्रपंच के प्रति एक बौद्धिक दृष्टिकोण के लिए नई मानसिकता का निर्माण किया है। यह भी सच है कि विज्ञान और प्रौद्योगिकी की संस्कृति ने जहाँ एक ओर हमें देश (स्पेस) और काल (टाइम) के द्वंद्व को जीतने, द्रुतगामी यानों की विरचना तथा दूरसंचार साधनों की सुविधा के द्वारा दिक्-देश के अंतराल को नगण्य सिद्ध करने एवं देश-काल पर विजय प्राप्त करने के लिए प्रेरित किया है वहीं दूसरी ओर उस ने साहित्य एवं कला के कई कौतूहल-केन्द्रों, परंपरा प्रसिद्ध उद्दीपनों या रमणीक भावों के प्रणोदकों (प्रोपेलर्स) को ध्वस्त कर दिया है। उदाहरणार्थ इंद्रधनुष की भावोद्‌बोधन क्षमता के अवमूल्यन के लिए कीट्स को बहुत पहले पछताना पड़ा था और अब चाँद पर अंतरिक्ष यान के सहारे मनुष्य के पहुँच जाने के बाद तथा उस की नीरस ऊसर ऊबड़-खाबड़ सतह से परिचित हो जाने के बाद साहित्य-कला के विश्व प्रसिद्ध उपमान के रूप में चंद्रमा की रूप-रसोद्‌बोधन क्षमता को भी भारी झटका लग चुका है। इतना ही नहीं, वनस्पति विज्ञान ने सूर्य के प्रति सूर्यमुखी के 'कविसमय'-प्रसिद्ध प्रेम का भी बंटाधार कर दिया है। वनस्पति विज्ञान के अनुसार सूर्य की ओर सूर्यमुखी के घूमने या झुकने का कारण कोई अलौकिक प्यार, आकर्षण अथवा एकांत समर्पण नहीं है बल्कि वह 'टर्गर प्रेशर' के सिद्धांत का लागू होना है। इसी तरह विज्ञान ने काव्य-कला में विशेष कर उर्दू शायरी में वर्णित बुलबुल के मधुर नैश संगीत की धारणा को भी एक बौद्धिक धक्का दिया है। पक्षि विज्ञान ने सिद्ध कर दिया कि बुलबुल के सुमधुर नैश संगीत का कोई संबंध टहटहा चाँदनी, तिमिर प्रसार, मादकता, कामुकता, निशीथ की नीरवता या भावोच्छ्‌वास से नहीं है। इस का एकमात्र संबंध बुलबुल की पाचनक्रिया और आहार से है। बुलबुल को प्रत्येक चौथे या पाँचवें घंटे में खाने की आवश्यकता पड़ती है। इसी आहार की तैयारी के क्रम में बुलबुल जोर से बोल कर, अपनी आवाज फैला कर अपने प्रतिद्वंद्वी या पड़ोसी बुलबुल को आगाह करता है कि यह क्षेत्र, यह इलाका उस का है। इस में चारा चुगने के लिए कोई दूसरा नहीं आवे। शायद इसीलिए साहित्य एवं कला के लिए नए कौतूहल-केन्द्रों का अन्वेषण, नए उद्दीपनों का साहचर्याश्रित अभिविन्यसन या इतःपूर्व अनुद्‌घाटित भावात्मक संदर्भों का चयन जरूरी हो गया है।

किन्तु इन उदाहरणों से यह निष्कर्ष निकालना उचित नहीं है कि साहित्य एवं कला की संस्कृति तथा विज्ञान और प्रौद्योगिकी की संस्कृति परस्पर विरोधी संस्कृतियाँ हैं और इन संस्कृतियों के बीच सदैव द्वंद्व रहता है। यदि यह सच होता, तो कोई भी वैज्ञानिक मानविकी एवं साहित्य-कला का प्रेमी नहीं होता। इस संदर्भ में भारत के ही दो प्रसिद्ध वैज्ञानिकों की याद आ जाती है, डॉ. एस.एस. भटनागर वैज्ञानिक होने के साथ ही उर्दू के अच्छे शायर थे और सुप्रसिद्ध वैज्ञानिक डॉ. भाभा एक सिद्धहस्त चित्रकार भी थे। इतना ही नहीं, साइबरनेटिक्स, रोबोट और संगणक के बढ़ते कदम भी साहित्य और कला की संस्कृति के विकास में योगदान देने की क्षमता रखते हैं। ऐसे संगणक (जैसे रूस में 'यूराल 1') भी उपलब्ध हैं जो रचित गीतों का संस्करण कर देते हैं।

विज्ञान और प्रौद्योगिकी की संस्कृति तथा साहित्य एवं कला की संस्कृति में पहले की अपेक्षा निकटता बढ़ती जा रही है। इस निकटता को संवर्धित करने में हर्बर्ट डिंग्ल, जेम्स जीन्स, आइन्स्टाइन, आर्थर एडिंग्टन, ए.एन. व्हाइटहेड, स्टीफन हॉकिंग इत्यादि जैसे आधुनिक वैज्ञानिकों ने भी विज्ञान की उपलब्धियों के विचार पक्ष को दार्शनिक परिणति प्रदान कर उल्लेखनीय योगदान दिया है। हेनरी बर्गसाँ, लॉयड मॉर्गन, बर्ट्रेंड रसल आदि दार्शनिकों ने दर्शन के क्षेत्र को एक वैज्ञानिक परिणति देने का प्रयत्न कर उक्त दो संस्कृतियों की निकटता के लिए मार्ग प्रशस्त किया है। दिनकर की *उर्वशी* और प्रसाद की *कामायनी* में दिक्, काल, गति, अणु और परमाणु पर उल्लेखनीय चिन्तन मिलता है। विशेष कर, दिनकर की *उर्वशी* के तृतीय अंक में तथा दिनकर के *धर्म और विज्ञान* शीर्षक निबंध में इन दो संस्कृतियों के समीकरण का अच्छा प्रयत्न है। *उर्वशी* के तृतीय अंक में जब पुरूरवा

दिक्-काल के अभेद का सकेतित करते हुए उर्वशी से कहते हैं *महाशून्य के अतरगृह में उस अद्वैत भवन में/जहाँ पहुँच दिक्-काल एक हैं, कोई भेद नहीं है।* तब स्पेस टाइम कटीनुअम अथवा 'कॉस्मिक गेस्टॅल्ट' का स्मरण हो आता है।

इन दिनों साहित्य और साहित्यालोचन में 'साहित्येतर' का प्रचुर समावेश हो रहा है। लेकिन समकालीन हिन्दी आलोचकों में ही नहीं पूर्व में भी हिन्दी आलोचकों के लेखन में साहित्येतर विषयो का अच्छा समावेश मिलता है और साहित्येतर मानदडो को साहित्यालोचन में प्रसगानुसार प्रयुक्त करने का प्रयत्न भी। आधुनिक हिन्दी साहित्य के दोनो वरिष्ठ आचार्य आलोचक महावीर प्रसाद द्विवेदी और रामचद्र शुक्ल को साहित्येतर विषयों का अच्छा ज्ञान था। इस का प्रभाव निश्चय ही उन के साहित्य विवेक पर पडा होगा। साहित्येतर विषयो से सबधित आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी की कृतियों में *ज्ञान भारती, अद्भुत आलाप* और *सपत्ति शास्त्र* प्रमुख हैं। इसी तरह जर्मन प्राणितत्ववेत्ता हैकेल के प्रसिद्ध ग्रथ *रिड्ल ऑव द यूनिवर्स* का *विश्व प्रपच* के नाम से किया गया हिन्दी भाषातर आचार्य शुक्ल की बहुविध रुचि का अन्यतम प्रमाण है। इसी कड़ी में आचार्य शुक्ल की अनूदित कृति *राज्य प्रबध शिक्षा* का भी उल्लेख किया जा सकता है जो सर टी माधवराव की विख्यात पुस्तक *माइनर हिंट्स* का हिन्दी भाषातर है। एडम्स विलियम डबनपोर्ट की कृति *प्लेन लिविंग एड हाई थिंकिंग* का *आदर्श जीवन* के नाम से हिन्दी अनुवाद *हिन्दुस्तान रिव्यू* में सन् 1907 ई में प्रकाशित आचार्य शुक्ल का 'ह्वाट हैज़ इडिया टु इ' शीर्षक लेख भी रेखाकित करने योग्य है। कवि और कहानीकार चद्रधर शर्मा गुलेरी का साहित्येतर ज्ञान सस्कृति पुरातत्व भाषा विज्ञान, ज्योतिर्विज्ञान इत्यादि तक फैला था। हिन्दी के आलोचकों में मिश्र-बधुओं का भी साहित्येतर ज्ञान बहुत विस्तृत था। अर्थशास्त्र दर्शनशास्त्र इतिहास इत्यादि में मिश्र-बधुओं की अच्छी पैठ थी।

लेकिन इस प्रसग में कुछ लोगों की शिकायत है कि इस प्रवृत्ति से ग्रस्त अधिकाश नए आलोचक आलोच्य कृति की मूल साहित्यिक सार्थकता या उस की केन्द्रीय अर्थवत्ता से प्रीत नहीं हो कर उस के आसपास के क्षुपों या झाड़ियों को पीटते रह जाते हैं। शायद साहित्य का निष्ठावान पाठक या साहित्य के दत्तचित्त आस्वादन का अभ्यस्त बने बिना कोई व्यक्ति साहित्य का उत्कृष्ट आलोचक नहीं बन सकता। यानी साहित्य के प्रति प्राथमिक लगाव आलोचक के लिए आवश्यक है क्योंकि आलोचक का मुख्य कार्य आलोच्य कृति में सन्निहित उन एकाधिक सबल कारकों को पहचानना और उन्हें विश्लिष्ट करना है जो सहृदयो की पर्युत्सुकता को उद्बुद्ध करने में सक्षम होते हैं। एक कुशल आलोचक का मुख्य कर्तव्य यह है कि वह आलोच्य रचनात्मक कृति में छिपे हुए नदतिक प्रहर्ष ('एस्थेटिक रैप्चर') और युग सदेश का बुद्धिगम्य और बोधगम्य भाषा में पाठकों सहृदयो के समक्ष प्रस्तुत करे। यह विदित है कि साहित्य जीवन का सवेदना और सस्कार की दृष्टि से सपन्नतर बनाता है। इसलिए उत्कृष्ट साहित्य सदैव युगातरकारी होता है। वह हमें एक युग से दूसरे युग में ले चलता है जो सामान्यत पूर्ववर्ती युग की तुलना में—सवेदना सस्कार और अस्मिता की पहचान की दृष्टि से अधिक उन्नत होता है। पूर्ववर्ती और परवर्ती साहित्य में निहित इन विशेषताओं के तुलनात्मक गुणाधिक्य को लक्षित और निर्दिष्ट करना भी आलोचक का महत्त्वपूर्ण प्रथमेतर कर्तव्य है। इस दृष्टि से यह कहना उचित होगा कि साहित्य में विशेष कर आलोचना साहित्य में उस की गुणवत्ता के विवर्धन के लिए तथा उस के मानदडों का अद्यतन एव युक्ति-युक्त रूप से अवधार्य बनाने के लिए जहाँ प्रसग-समर्थित साहित्येतरता का समावेश वाछनीय है वहीं साहित्य में साहित्येतरता की मात्रा को नियत्रित रखना भी आवश्यक है।

नवलकिशोर

उपरवास कथात्रयी   रघुवीर चौधरी

भारतीय भाषाओं में उपन्यास का उद्भव पाश्चात्य प्रभाव से हुआ किन्तु जहाँ पश्चिम में वह प्रधानत औद्योगिक शहरी पूँजीवादी सभ्यता में मध्यवर्ग के उदय के साथ जुड़ा रहा है वहाँ हमारे यहाँ ग्रामीण कृषक वर्ग के गद्य महाकाव्य के रूप में उस ने अपना एक विशिष्ट स्वरूप भी ग्रहण किया है। आज़ादी के तुरत बाद अपने देश से नई पहचान की प्रक्रिया में ग्राम-सामान्य के चित्रण के स्थान पर अचल विशेष के चित्रण की ओर कथाकारों का विशेष ध्यान गया जिसे लक्ष्य करते हुए उमाशकर जोशी ने अपने एक लेख 'उपन्यासकार द्वारा भारतीयता की खोज' में कहा था 'स्वातंत्र्योत्तर काल में सभी भारतीय भाषाओं के लेखकों में यदि कोई विशेष मान्य या प्रिय प्रकार बना, तो वह था आचंलिक उपन्यास अपने प्रदेश में पिंड में ब्रह्मांड के न्याय से उस ने *सारे भारत को दिखाना प्रारभ किया और इस से उस में नया उत्साह सचारित हुआ उस ने देखा कि सही अर्थ* में आचलिक होने में न सिर्फ़ राष्ट्रीयता बल्कि मानवीयता के व्यापक स्वरूप से कोई विरोध नहीं है यदि वह मनोवैज्ञानिक गहनता और सूक्ष्मता वाले पात्रों का सृजन कर सके। इस लेख में उमाशकरजी ने बाड्ला के स्वतंत्रता पूर्व के *आरण्यक* (1938) हिन्दी के *मैला आँचल* (1954) गुजराती के *मानवीनी भवाई* (1947) और मराठी के *गारबीचा बापू* (1952) के बारे में प्रशसात्मक टिप्पणियाँ करते हुए प्रतिपादित किया है कि इन में 'कलाकार की भारतीयता की खोज उस की कला की खोज के साथ लगभग एककार दिखाई पड़ती है। गुजराती के जाने-पहचाने लेखक रघुवीर चौधरी के बृहत् उपन्यास *उपरवास कथात्रयी* को इसी आचलिक कथा लेखन की परपरा में रखा जा सकता है।

यह गुजराती का एक समादृत उपन्यास है जिसे (1977 में) साहित्य अकादेमी का राष्ट्रीय पुरस्कार भी प्राप्त हुआ है। हिन्दी अनुवाद स्वय लेखक ने किया है। रघुवीर चौधरी गुजरात विश्वविद्यालय में हिन्दी के शिक्षक हैं और उस से अधिक हिन्दी से उन का संबध एक रचनाकार के नाते रहा है—उन की रचनाएँ उन्हीं की क़लम से हिन्दी में आई हैं। उन के *अमृता* उपन्यास के हिन्दी में दो संस्करण निकल चुके हैं। अनुवादक की हैसियत से उन्होंने मूल रचना की उत्तर गुजरात की बोलचाल की भाषा को उभारने के लिए संवादों में अवधी का चुनाव किया है। यदि वे फणीश्वरनाथ रेणु से प्रेरणा लेते हुए खड़ी बोली में आवश्यक पाद टिप्पणियों के साथ गुजराती लहजे (संज्ञा/क्रियापद/कहावत मुहावरा आदि) का प्रयोग करते तो यह उपन्यास गुजराती ग्राम-जीवन पर लिखा गया हिन्दी उपन्यास ही लगता। गुजराती पात्रों से अवधी बुलवा कर वे उन से उन का परिवेशगत प्रामाणिकता छीनते हैं क्योंकि हर बोली का अपना एक निजी परिवेश होता है। रेणु की मैथिली खड़ी बोली के मुहावरे में ढल कर आती है जबकि उन के बाद की पीढ़ी की लेखिका कृष्णा सोबती के *ज़िन्दगीनामा* में खड़ी बोली पजाबी मुहावरे में ढल जाती है। इसलिए रेणु की भाषा को हिन्दी पाठक खूब सराहता है पर सोबती की भाषा को नापसन्द करता है। खड़ी बोली आम हिन्दी भाषी पाठक की भाषा है लेकिन अवधी उत्तर प्रदेश के एक अंचल तक सीमित है। इस कारण मुझे शक है कि *उपरवास कथात्रयी* को उतना बड़ा पाठक वर्ग मिलेगा जितना *अमृता* को मिला था।

किसी भी रचना का प्रथम साक्षात्कार भाषा के स्तर पर ही होता है। एक अच्छा अनुवाद पराए परिवेश की पहचान भी हमें अपनी भाषा में ही देता है। एक गैर-अवधी हिन्दी भाषी पाठक से यह उपन्यास न केवल अतिरिक्त श्रम माँगता है, गुजराती परिवेश से सहज सपर्क में दूरी भी लाता है। इस के बावजूद उपन्यास का एक गभीर पाठक भाषा की बाधा पर जल्दी ही क़ाबू पा सकता है और फिर उसे इस भाषा में भी रस आने लगेगा। यह भाषा उसे बराबर एक ग्राम्य परिवेश का एहसास दिलाए रखती है और उस से गुजरात की लोकभाषा की ऊर्जा का अनुमान तो कम से कम लगाया ही जा सकता है। निश्चय ही इस कृति की भाषा ने गुजराती के समकालीन गद्य को समृद्ध किया होगा।

उपन्यास के कथा ससार का केन्द्र है सोमपुरा—उत्तर गुजरात का एक गाँव। समीप के गाँव हैं गोकुलिया, बदरी टींबा आदि और (इस अचल में) कुल मिला कर सत्ताईस गाँवों में बसी हुई है आँजणा पटीदारों (पटेलों) की बिरादरी। इस बिरादरी के जन्म विवाह भोज मृत्यु आदि सामाजिक सस्कारों और लाकोत्सवों के प्रसगा में लेखक खूब रमा है और पाठक को शामिल करने में भी उसे सफलता मिली है। भजन कीर्तन गीत नृत्य से भरी पूरी लोक जीवन धारा के निर्मल प्रवाह को दिखाने के साथ उस में मिले रूढिवाद अशिक्षा अध विश्वास जातिवाद आदि के प्रदूषण स्रोतों को भी लेखक सामने लाता रहा है। दरिद्रता भी लेखक की निगाह से ओझल नहीं रही है। इस समाज में बाल विवाह की प्रथा व्यापक रूप में प्रचलित है। स्त्री की स्थिति हीनतर है और उस की शिक्षा को कोई महत्त्व नहीं दिया जाता। 1938 के गुजरात के किसान विद्रोह से आठवें दशक तक की राजनातिक घटनाओ का हवाला है। समाज में आते बदलावो का सकेत भी है। लेकिन एक दस्तावेज़ी उपन्यास के रूप में कथात्रयी विशेष उल्लेखनीय नहीं बन पाई है। प्रमुख पात्रा का जीवन ऐतिहासिक महत्त्व की घटनाओं से दूर तक अप्रभावित बना रहता है—यहाँ साबरमती है, पर साबरमती आश्रम के गाधी सिर्फ़ नाम भर है जिन्हें जब तब स्मरण कर लिया जाता है, महागुजरात आदोलन एक घटना भर है जिस के प्रभाव में काग्रेस कार्यकर्ता बस दल बदलते हैं, मोरारजी भाई और इंदिराजी हैं पर बस थोडी बहस एव थोडी बातचीत के लिए। सोमपुरा क बाहर की दुनिया उस पर प्रभाव तो डालती है लेकिन रहती नेपथ्य में है—नज़रों से परे।

लेखक की आकांक्षा अवश्य रही है कि उस के उपन्यास में एक कालखड के जनजीवन क रूपातरण का कथात्मक आलेखन हो, लेकिन उस के लिए वह कोई सर्जनात्मक प्रयास करता प्रतीत नहीं होता। उस की रुचि कुछ पात्रों के भावात्मक जीवन के अन्वेषण में अधिक रही है। गुजरात के लोकमानस के कुछ भव्य रूपों से हमें वह उसी तरह परिचित कराना चाहता है जिस तरह वहाँ की नैसर्गिक छवियों से। लेखक यह बताना चाहता है कि भारतीय ग्राम-समाज भले ही शिक्षा-सुविधाओं से वचित रहा हो लेकिन वाचिक ज्ञानपरपराओं के कारण उन्नत मानवीय सस्कारों की दृष्टि से सपन्न रहा है। लोक सस्कृति क अपने इस विचार को वह कुछ पात्रों की जीवन-कथा के माध्यम से मूर्त रूप दे सका है—जो यथार्थ भले न लगते हों, अपने में प्रामाणिक हैं।

इन पात्रों में एक ओर हैं पूर्व पीढ़ी के लगभग अनपढ से पिता पुत्र पिथु व नरसिंग भगत और करसन बाबा आदि दूसरी ओर है शिक्षित होती नई पीढ़ी क देवू व लवजी भाई समाजसवक हीरू भाई और विधायक रमणलाल आदि। कुछ लाग शुरू से आख़िर तक भले हैं और कुछ अपनी बुराइया का पहचानन क क्रम में भले बनत हैं। कुछ शुरू स आख़िर तक बुरे ही बने रहते हैं। नारी पात्रों में अधिकांश स्वभावत भली हैं। लखक न पात्रों को सफ़द और काले वर्गों में पूरी तरह नहीं बाँटा है लेकिन सफद और काल क बीच की पहचान को स्पष्ट ज़रूर रखा है। शहर के जिस परिवार को कथा में महत्त्व मिला है वह भी एक भला परिवार ही है—चानू भाई वाणा बहन और जैमिनी का परिवार। शहर क जो राजनीतिकर्मी कथा से जुड़त हैं वे सभी स्वार्थी व अवसरवादी

हैं—परशाभाई, पथाभाई और पूनमचन्द। लेखक गांधी में आस्थावादी है लेकिन चरित्रों के प्रस्तुतीकरण में वह वास्तविकता के प्रति सजग रहा है इसलिए कथात्रयी का निर उसमें सफेद और काले के साथ इन के बीच के उजले धुंधले अनेक रंगों का है। यद्यपि लेखक लोगों की एक भीड़ में हमें ले जाता है लेकिन उस भीड़ के हर आदमी से जान पहचान कराने की कोशिश भी करता है। उसे जो सफलता मिली है वह विस्मय जगाती है।

लेखक ने सामपुरा गाँव के भगत परिवार की तीन पीढ़ियों के ज़रिए गुजरात के गाँव समाज का लगभग एक सदी का इतिवृत्त देना चाहा है। हिन्दी में दो तीन पीढ़ियों के ज़रिए सामाजिक राजनीतिक संक्रमण चित्रित करने में *भगवतीचरण वर्मा* और *अमृतलाल नागर* के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं। वर्माजी *भूले बिसरे चित्र* में संयुक्त परिवार के विघटन, सामंती समाज के पतन और पूँजीवादी समाज के उदय तथा स्वतंत्रता संघर्ष के तीव्र होने का चित्रण करते हैं और नागरजी *करवट* में नवजागरण की चेतना के वाहक मध्यवर्ग के आविर्भाव तथा समाज सुधार की तेज लहरों का आप्लावनकारी दृश्य दिखाते हैं। रघुवीर चौधरी का प्रयोजन भिन्न है—वे लोकचेतना की तलाश में पीछे लौटते हैं—वहाँ से चल कर देखना दिखाना चाहते हैं कि स्वातंत्र्योत्तर ग्रामजीवन की ऊर्जा की दशा और दिशा क्या रही? गुजराती में *उपरवास* उस विस्तार को कहते हैं जहाँ बरसा पानी नीचे पहुँचता है। उपन्यासकार ऊर्जा के स्रोत की तलाश में दादा की पीढ़ी के पास जाता है। दादा पिथु भगत उस उदात्त लोक-संस्कृति के मानस पुत्र हैं जो माया अर्थात् सांसारिक सुखों को जीवन का चरम साध्य नहीं मानती और राग विराग से मुक्त सात्विक जीवन जीते हुए लोकहितकारी आचरण की साधना का महत्त्व देती है। उन के पुत्र नरसिंह भगत को यह परंपरा सहज उत्तराधिकार के रूप में मिलती है और तीसरी पीढ़ी के जीवन को गति प्रदान करती है—देवू और लवजी को मना और संपत्ति हथिया कर लोगों पर जुल्म करने वालों के विरुद्ध खड़ा होने की शक्ति देती है। करसन काका माया-मोह से ज़िन्दगी के आख़िरी पड़ाव पर आ कर उभरते हैं लेकिन तब तक उन का मायाग्रस्त व्यक्तित्व उन की तीसरी पीढ़ी के रणछोड़ में पूरी तरह संक्रमित हो चुका होता है और स्वयं उन का जीवन दूभर कर देता है। आज की राजनीतिक संस्कृति रणछोड़ों को लूट का खुला मौक़ा देती है जिन के विरुद्ध जनता जनार्दन की सेवा के लिए लोक संस्कृति के देवू लवजी जैसे धर्मियों को खड़ा होना ही पड़ेगा। पिथु और नरसिंह भगत अनासक्ति के भारतीय जीवनादर्शों के लोक प्रतिनिधि हैं।

हिन्दी उपन्यास का वास्तविक आरंभ प्रेमचन्द से होता है और उन के साथ ही वह गाँव और उस के किसान की यथार्थ जीवन-कथा बन जाता है। उन का गाँव सामंती और साम्राज्यवादी शोषण का केन्द्र है और उन की *किसान-कथा भारतीय जन के उत्पीड़न के विरुद्ध संघर्ष के आह्वान की कथा बन जाती है। रेणु का मैला आँचल* इसी परंपरा में आता है—उस का सर्वथा नवीनीकरण करते हुए। उन का 'मेरीगंज' भारतमाता का शस्यश्यामल परिधान नहीं मैला आँचल है जहाँ ज़मीन्दारों के अत्याचारों में पिसते किसान हैं जहाँ भूख और दारिद्र्य है जहाँ अज्ञान और अंधविश्वास है जहाँ धार्मिक अनाचार हैं जहाँ जातिगत विषमताएँ हैं जहाँ निम्न वर्णों की स्त्रियाँ उच्च वर्णों की भोग्याएँ हैं जहाँ दिकुओं के हाथों ठगे जाते आदिवासी संथाल हैं। ऐसे गाँव में आज़ादी के बाद एक नई लहर उठती है—देश में जनकामना की उठी लहर है यह। गाथा के बीच प्रतीक बावनदास का थाना कांग्रेस के 'मिसरलाल' की तमगा को मात देने वाला बैलगाड़ियों कुचलता हुआ निकल जाती है—मार्कण्डेय अमल और पुलिस को मिला भगत से—ठीक बापू के श्रद्धांजलि पर। यहाँ मेरीगंज की कथा आज़ादी के बाद में गांधी के मरण प्रसंग तक की मानो देहरान की हिन्दुस्तान की व्यथा-कथा बन जाती है—मुक्ति के स्वप्न के टूटने की आज़ादी के सन्तान बने के मोहभंग की—गमगीन। यह 'मेरीगंज' आगे चल कर श्रीलाल शुक्ल के *रागदरबारी* में शिवपालगंज बन जाता है—जहाँ देश के राजनीतिक भ्रष्टाचार और नैतिक अधःपतन का समग्र एक पहल

औपन्यासिक दस्तावेज लिखा जाता है। हिन्दी के इन उपन्यासों का गाँव हमें जिस तरह विचलित विक्षुब्ध करता है उस तरह इस कथात्रयी का गाँव नहीं। उस का अतीत का स्मृत्यावर्तन (नॉस्टेलजिया) तो मोहक है पर वर्तमान का यथार्थ अधिकांश में सूचनात्मक रहता है जो एक वृहत्तर राष्ट्रीय यथार्थ में अंतर्गुम्फित भी नहीं होता। उस का जो बाहरी घटनाचक्र है वह एक बड़े सत्य से नहीं जुड़ पाया है।

पन्नालाल पटेल के *मानवीनी भवाई* में दुष्काल राजू-कालू की प्रेम-कथा के मानवीय परिदृश्य में रूपांतरित हो गया है (उमाशंकर जोशी के शब्दों में मानव बुरे से बुरे और भयंकर से भयंकर अकाल महामारी और लड़ाइयों से गुज़र कर जीवित बाहर आता है बचाए रखने वाला तत्त्व है कदाचित प्रेम।) अनेक बार एक समर्थ लेखक छोटी सी रचना को भी एक बड़े सत्य का व्यंजक कैसे बना देता है इस का उदाहरण है पन्नालालजी की ही कहानी 'वात्रक के किनारे' एक औरत की ज़िन्दगी में संयोग से दो पति आते हैं—एक हट्टा कट्टा किन्तु कुछ निठल्ला और दूसरा लँगड़ा किन्तु बेहद कर्मठ। एक से अनिच्छित हत्या हो जाती है। उस औरत की खातिर एक अपराध ओढ़ कर दूसरे को बचाना चाहता है जो नहीं छूटा है उसे भूल कर, जो छूटा है उसे क्या वह औरत स्वीकार कर ले? यह एक ऐसा यक्ष प्रश्न है जिस का लेखक के पास कोई युधिष्ठिर-उत्तर नहीं हो सकता। ऐसे किसी बड़े सत्य या बड़े प्रश्न से रघुवीर भाई नहीं जूझते। इसलिए कथात्रयी *मैला आँचल* और *मानवीनी भवाई* की ऊँचाई तक नहीं पहुँचती। किन्तु वह मनुष्य के चित्त का एक व्यापक अनुभव अवश्य देता है और ऐसा वह उस की स्वभावगत विविधताओं का दर्शन कराते हुए करता है।

लेखकीय निवेदन में रघुवीर भाई कहते हैं कि उन्होंने कलावाद से आक्रांत हुए बिना और अतिरिक्त साहित्यिकता से बच कर सामाजिक यथार्थ का संकुल चित्रण करने हेतु एक अंचल की यह आत्मकथा लिखी है। इस प्रयास ने उन के सर्जनात्मक उद्देश्य को सीमित कर दिया है। उन की लोक संस्कृति की ऊर्जा की खोज कला के स्तर पर लोकभाषा की ऊर्जा की खोज तक सीमित हो कर रह गई है। यह एक वृत्तांतपरक उपन्यास हो कर रह जाता है। लेखक मवादों के कुशल नियोजन से वस्तु को दृश्याभासी बनाता है किन्तु उपन्यास है सर्वथा परंपरागत पद्धति का। उमाशंकरजी ने *मानवीनी भवाई* के बारे में कहा है कि उस का लेखक लोक उत्सवों, लोक-कथानकों और लोकगीतों में से अपने लिए आवश्यक सामग्री मुक्तहस्त उठा लेता है और कथा के वर्तुल में वे सब एकरूप हो जाते हैं तथा उस का 'गद्य वैभव गुजराती भाषा को एक नया विन्यास देता है'। रेणु के लिए वे कहते हैं 'लोक-कथाएँ, कहावतें भजन लोकमुख में बसे वे लोक साहित्य का हिस्सा बन राष्ट्रीय गाथा के टुकड़े सभी उन के पास सहज उपलब्ध-से हैं रेणु के कान संवेदनशील हैं आवाज़ों द्वारा वे बहुत कुछ संप्रेषित करते हैं लेखक में एक ऐसी हास्यवृत्ति है जिस का दंभ के साथ कोई संबंध नहीं। इस के अतिरिक्त भी रेणु के कथा शिल्प के बारे में बहुत कुछ कहा जा सकता है रिपोर्ताज, नाटकीकरण पात्रगत दृष्टिबिन्दु (प्वाइंट ऑफ़ व्यू) अंतरालाप (मॉनोलॉग) परिचय कथन (कमेंटरी) आदि बहुविधि औपन्यासिक प्रविधियों से निर्मित एक नया और अपूर्व कथा रूप। अतिरिक्त साहित्यिकता में शिल्प के आडंबरपूर्ण होने का संकट रहता है तो अभिव्यक्ति के सुरक्षित पथ पर चलने पर नई ज़मीन तोड़ना संभव नहीं होता। कथात्रयी के पाठ से गुज़रने पर कथा विधा की भूमि पर नई राह में संचरण का रोमांच तो नहीं मिलता लेकिन एक कुशल मार्गदर्शक के साथ अपरिचित एक अजाने से प्रदेश में शब्द यात्रा का सुख अवश्य मिलता है।

उपन्यास के अंतिम भाग में लवजी-कामिनी की प्रणय-कथा प्रमुखता पा लेती है। विवाह और प्रेम के बीच चुनाव की चिर पुरातन पुष्प समस्या को एक बौद्धिक कोण से सुलझा तो लिया गया है पर इस प्रक्रिया में [illegible] प्रेमिका को एक मदहोशील पुरुष के हिंस्र पंजों में मौत के लिए सौंप दिया जाता है। इस प्रेम-कथा में लेखक का

पुरुष अहंकार एक प्रमिका की पूर्व प्रेमिका के रूप में कल्पना करने में—उसे एक स्वतंत्र व्यक्तित्व दन में—सभवत बाधक रहा है। पचास क दशक के प्रसिद्ध हिन्दी उपन्यास *नदी के द्वीप* (अज्ञेय) की 'रेखा' से कथात्रयी का 'जैमिनी' की तुलना का जाए तो लगता है कि रेखा बनने क लिए भी जैमिनी को अभी और प्रौढ़ बनना होगा। रघुवीर भाई की जैमिनी अपन शुरुआती खिलदड़पन में तो एक मुखर व प्रखर लड़की क रूप में दिखाई देती है किन्तु आगे वह एक व्यक्तित्वहीन अबला हो कर रह जाती है।

इस उपन्यास की मूल कथा के साथ हाशिए की कथाओं में एक कथा तखत नाम की औरत की भी है। लेखक ने उस एक एसा तेजस्वी व्यक्तित्व दिया है कि वह नायकत्व का एक पृथक उपकेन्द्र बन जाती है। आश्चर्य होता है कि वैवाहिक मर्यादा का आग्रही होत हुए भी लेखक उसे वासना और पवित्रता जैसे विरुद्धों के सामंजस्य के साथ एक शक्तिशाली नारी चरित्र के रूप में प्रस्तुत कर सका है। स्वस्थ देह यष्टि वाली उस स्त्री को कैस पुरुष-रचनाओं न सहज जीवन नहीं जीने दिया कैसे अभावों से जूझते हुए वह अपनी मेहनत से जीती रही क्यों उसे पर पुरुष सम्बंधों की ज़रूरत रही और ठाकुर के अत्याचार का उस ने कैस युक्तिपूर्वक प्रतिकार किया—इस सब का चित्रण एक सधे कथा शिल्पी के हाथों हुआ है। इस पात्र के बार में एक जगह लेखक यह कहलाता है 'तखत की निग्राह अब बदल गई है। पहले यहाँ सिर्फ़ आग थी, अब प्रकाश हो गया है।' इस कथन के ज़रिए लेखक स्त्री का ल कर यानि पवित्रता वाली हमारी सामाजिक नैतिकता के संबंध में अस्वीकारात्मक उपसहार लिख रहा होता है। यह उपन्यास अन्य प्रसगों में भी औरत क प्रति हमार सम्मान भाव को गहराता है।

उपरवास कथात्रयी कलात्मक प्रौढ़ता का उदाहरण तो नहीं बन सका है लकिन एक ऐसी रचना वह अवश्य बना है जिसे अपने दौर के भारतीय उपन्यासों में अलग-से पहचाना जा सके। यह गुजरात की लोक संस्कृति से एक स्मरणीय साक्षात्कार कराती है।

चर्चित उपन्यास

उपरवास कथात्रयी लेखक-अनुवादक रघुवीर चौधरी साहित्य अकादेमी रवीन्द्र भवन 35 फ़ीरोज़शाह रोड नई दिल्ली 110001 1991 मूल्य 160 रुपए

प्रेमपाल शर्मा

युद्ध की अप्रतिम कथा

ठीक ही कहा गया है कि कोई भी भारतीय *रामायण* को पहली बार नहीं पढ़ता। तात्पर्य यह है कि जब तक वह पढने लिखने के क़ाबिल होता है या होश सँभालता है, तब तक वह उस कथा को दादी नानी मित्र, माँ आदि से किसी न किसी रूप में अवश्य सुन चुका होता है। यहाँ तक कि इस देश का एक बहुत बडा हिस्सा जो पढ़ नहीं पाता उसे भी यह कथा कठस्थ होती है। *महाभारत* के साथ भी यह बात लगभग उतनी ही सत्य है।

भारतीय साहित्य की अप्रतिम कथा है *महाभारत*। देश की हर भाषा में *महाभारत* में समाई कथा उपकथाओं को आधार बना कर अनगिनत बार लिखा गया है। मैथिलीशरण गुप्त (*जयद्रथ वध*) धर्मवीर भारती (*अधा युग*), रामधारीसिंह 'दिनकर' (*रश्मि रथी* एव *एकलव्य*) से ले कर नरेन्द्र कोहली, राही मासूम रजा और रामानद सागर तक अनेक लेखक हरेक उपलब्ध विधा और माध्यम में *महाभारत* की ओर आकृष्ट हुए हैं। *पार्थ से कहो चढ़ाए बाण* गुजराती के अद्वितीय उपन्यासकार पन्नालाल पटेल की अविस्मरणीय उपन्यास-माला *कुरुक्षेत्र* का पाँचवाँ खड है जिस में महाभारत युद्ध क प्रत्येक दिन का आँखों-देखा हाल बयान किया गया है। कथा का आरभ ही अत्यत 'चाक्षुष' है दोनों पक्षों की सेनाएँ आमने सामने जमी हुई हैं। सजय युद्ध का एक एक विवरण अधे धृतराष्ट्र को सुनाता है। व्यूह रचनाओं से ले कर युद्ध की एक-एक भाव भगिमा का चित्रण अद्भुत है। सजय निरपेक्ष है। जो जैसा है जहाँ है, वही बता रहा है किन्तु कौरवों की सेना जब हारती है तो पिता धृतराष्ट्र विचलित होने लगते हैं। वे बार-बार केवल कौरवों की विजय की बात ही सुनना चाहते हैं। वे चिढ़ते हैं कभी-कभी सजय पर भी अपनी खीज प्रकट करते हैं किन्तु महात्मा सजय जो हो रहा है केवल वही बताने के लिए नैतिक रूप से प्रतिबद्ध है। मौजूदा शासन के दरबारी, मत्री, ज्योतिषियों से एकदम भिन्न स्थिति है सजय की।

युद्ध का दोषी कौन है? धृतराष्ट्र का पुत्र मोह? दुर्योधन की राजलिप्सा? शकुनि का छल प्रपच? कर्ण का प्रतिशोध? पाडवों की मान-रक्षा? या कृष्ण की लीला? बार-बार य प्रश्न कथा के आरपार होते हैं। कारण कोई भी हो युद्ध का अजाम है विध्वस, नाश हाहाकार। धृतराष्ट्र और दुर्योधन पाडवों की हर विनम्रता का उन की कायरता मान लेते हैं। ब्राह्मण प्रकृति का युधिष्ठिर युद्ध से डरता है। यही कारण है कि लाक्षागृह से बच निकलने के बाद भी वे वनों और नगरों में छिपे रहे। जब उन्हें खाडवप्रस्थ का वन प्रदेश दिया गया तो उसे भी उन्होंने युद्ध से डर कर स्वीकारा। क्योंकि कौरवों के पास अजेय और अवध्य भीष्म हैं द्रोण हैं कुडल और कवचधारी कर्ण जैसे महायोद्धा हैं

शत्रुओं को कमजोर समझने का दभ युद्ध का सब से महत्त्वपूर्ण कारण होता है। आधुनिक सदर्भ में इसलिए अमेरिकी राष्ट्रपति जॉर्ज वाशिगटन का यह कथन दृष्टव्य है कि 'शाति को क़ायम रखने के लिए सब स ठोस शर्त है युद्ध के लिए तैयार रहना। यदि कौरव सम्राट दुर्योधन को पाडवों की शक्ति का सही अहसास होता तो वह कभी भी युद्ध की जुर्रत नहीं करता। युद्ध का वर्णन ही नहीं युद्ध के मनोविज्ञान का भी बहुत अच्छा चित्रण उपन्यास में मिलता है। दुर्योधन निराश होता जा रहा है। आठ दिन की लड़ाइ में कौरवों के अनेक महारथी खत रहे क्योंकि

पाटवा का एक भी नहीं। दुर्योधन कर्ण म विचार विमर्श कर रहा है। जब तक भीष्म पितामह सनापति हैं कर्ण का प्रतिज्ञा है कि वह शस्त्र नहीं उठाएगा। कर्ण सुझाव दता है कि दुर्योधन भाष्म से कहे कि 'आप पाडवों का ता मारेंग नहीं माथ हा उन क पुत्रा और मवधिया का भा रक्षा कर रह हैं। क्या कवल सैनिकों आर हाथिया का सहार करन म हा विजय प्राप्त हा जाएगा। (पृष्ठ 25)

कर्ण पुराना बदला चुकान की ताक में ह। हर कोई हर किसी स प्रतिशाध का आग में झुलस रहा ह आर इमी का नाम है—महाभारत। दुर्योधन न द्रोपदी का अपमान किया कर्ण ने शल्य का भाष्म न कर्ण का अर्जुन न दुर्योधन का शिखडी का भाष्म न अतहान भृखला है मान अपमान का अपन पक्ष वाला स भा और विराधी पक्ष म भी और इसा का चरमात्कर्ष है महाभारत का युद्ध। पन्नालाल पटल की विशषता यह है कि इतना बार कही गइ कथा और वह भा प्रमुख रूप म युद्ध-वर्णन म य कथाओं क समायोजन म राचकता बनाए रखत हैं। कथा युद्ध वर्णन क बाझ स झुका जरूर है पर युद्ध के बाच झाँकत मानवीय व्यापार-व्यवहार उपन्यासकार की दृष्टि स आझल नहीं हुए।

युद्ध कमा भी हो धर्म की रक्षा क लिए हा या अधर्म क विनाश क लिए, सदा मायनों में दाना पक्ष ही खात हैं जन धन सुख शाति। कभा अभिमन्यु वध पर पाडवा का युद्ध का निरर्थकता का बाध हाता है ता धृतराष्ट्र गाधारी सहित अनक कौरव मनापति प्रतिपल इस अहसास में जात हैं। युद्ध फिर भा एक वास्तविकता है मृत्यु का तरह। महाभारत की कथा इसा सत्य का सधान करती कराती है। चक्रवर्ती राजगापालाचारा न *रामायण* और *महाभारत* दोनों को सरल अंग्रेज़ी गद्य में लिखा है। दश विदश के सामान्य पाठका के लिए इन पुस्तकों की महत्ता कम नहीं ह। किन्तु इन्हें शायद साहित्यिक कोटि में नहीं रखा जा सकता। कन्हैयालाल माणिकलाल मुशा न मिथक और *पौराणिक कथाओं का आधार बना कर अनक उपन्यास लिख हैं* और बावजूद एकपक्षीय दृष्टि की सामा क उन्हें साहित्यिकता की कोटि प्राप्त है। पन्नालाल पटल की यह पुस्तक जानकारी और साहित्यिक गुणवत्ता दोनों का बखूबा निर्वाह करती ह—रचनात्मक भाषा क स्तर पर भा और मौलिक कल्पनाशालता में भी।

चर्चित उपन्यास

पार्थ स कहो चढ़ाए बाण (कुरुक्षत्र) पन्नालाल पटल किताबघर, 24 अमारा रोड नइ दिल्ली 110002 1994 मूल्य 75 रुपए

नरेन्द्र मोहन

बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध की कविता

हरभजन सिंह पजावी के ही एक बड कवि नहीं है भारतीय भाषाओ क कवियो में भी उन का एक महत्त्वपूर्ण स्थान है। भारतीय मानस या भारतीयता की कई विशषताएँ उन की कविताओं म मिलती हं हालाँकि पजाव क लाक-मानस म जुड़ाव उन की कविताओ में साफ झलकता हे। भारतायता और प्रादेशिकता यहाँ एक ही सिक्के के दो पहलू हैं।

हरभजन सिह का कविताआ म एक बड़े कवि जसी लयात्मकता ऐन्द्रियता और अनुभव सपन्नता है। अनुभूतियों को किसी चिन्तन बिन्दु या ज्ञानधारा में तान दन की सामर्थ्य भी उन में है। सवेदना और विचार क विशिष्ट विन्यास न (जिस मुक्तिबोध न सवदनात्मक ज्ञान कहा है) उन के काव्य को एक खास पहचान दी है।

हरभजन सिह का कविताओं में आधुनिक दृष्टिकाण और रोमैंटिक बोध का द्वद्व भी अभिव्यक्त हुआ है। एक अर्थ में इस भाव और विचार का द्वद्व भी कह सकत है। यह बात उन की कविताओ के सवेदना पक्ष क बार म हा नहीं बुनावट के बारे में भी कही जा सकती ह। *चौथे की प्रतीक्षा* की कुछ कविताएँ एसी ह (न कविता न पत्र मात्र लड़का लला क लिए कुछ पक्तियाँ हरनाम) जिस में गहरा रामानी स्पदन है लेकिन कुछ कविताएँ ऐसी भी हैं जिन म आज की स्थितियों और समस्याओं की नई आधुनिक व्याख्या मिलती है। प्रतिभारत एक' कविता म अभिमन्यु और अर्जुन को कवि ने नई अर्थवत्ता प्रदान की है और 'प्रतिभारत-दो में मृत्यु सदर्भ का व आज के क्रूर सदर्भों तक ल आए हैं जहाँ मनुष्य अधिकाशत मरता ह बहुसख्या के हाथों।

हरभजन सिंह की कविताओं की लय का सबध अधिकतर गीतात्मक लय मे है। यहाँ एसी अनेक कविताएँ मिलेंगी जिन में पक्तियों का दोहराव से पैदा हुई लय है जा गात की टक का सा आभास देता है। इस तरह के उपायों म व सवेदना को गहराना चाहत हैं, पर यही वह चीज है जिस ने कविता म स उभर रही सवेदना क प्रसार को कई बार रोका भी है। एक हद तक यह आधुनिक और रोमैंटिक दृष्टिकाणा स एक साथ बिंधे होन का वजह स भी ह। साथ हा इस परिचित तरीके स व कई कविताओ म लयात्मकता का एक नई अर्थ सगति भा द पाए हैं। 'माँ प्रतीक्षा में कविता म माँ के जरिए पीढी-दर पीढी की सवेदनात्मक अवस्थाआ को दिखान क लिए कवि 'माँ प्रतीक्षा में पक्ति का कई बार दोहराता है और इस तरह मुक्त छद क काव्य विन्यास के भीतर स उभरने वाली लयात्मकता को साधता ह।

सग्रह की कुछ कविताएँ पजाब में आतकवाद की छायाओं स घिर हुए, उस दहशत का चलते हुए लिखी गई हैं। कुछ एसी कविताएँ भी हैं जा 1984 क दरम्यान हुए दगा का सवदनात्मक साक्ष्य प्रस्तुत करता ह। इन कविताओं में दगों या हत्याओ के विवरण नहीं है बल्कि उन हादसा म झुलसी हुई अतरात्मा क कुछ चित्र हैं। छोटी-छोटी बातों चीजों इच्छाओ और आकाक्षाओं स जुड़ी दहशत को हरभजन सिह इस तरह पश करत हैं कि खौफनाक सच्चाइयां क निम्न कविताओं म स झाँकन लगत हं। गतियों और हरकतों क सिलसिल इन कविताओ को एक ओर नाटकीय बनात हैं ता दूसरी ओर कविता की लय का हिस्सा। 'चावलों का प्लेट' घमा फिर अ

गया अपनी प्रतात्मा', आज कोई खतरा नहीं' 'इतिफ़ादा आदि कविताओं में इसे ख़ास तौर पर देखा जा सकता है। आज कोई खतरा नहीं' कविता की कुछ पंक्तियाँ हैं *धुआँ धुआँ सुलगाता हूँ/तपता हूँ उबलता हूँ/तो भी* चुपचाप *बिना ख़ौफ़ घर से बाहर निकलता हूँ।*

हरभजन सिंह की कविताओं में प्रतीकों के इस्तमाल की भी नई पद्धति और दृष्टि नज़र आती है। 'दीवार' कविता की शुरुआत बड़ी सघन है *कोई कहीं दीवार उभर रही है/चुपचाप अचेत अदृश्य।* यहाँ दीवार कई अर्थों की संभावना को उकसाती है पर जैसे-जैसे कविता आगे बढ़ती जाती है, अर्थ सीमित और सुनिश्चित होने लगते हैं *धर्म दीवार है/देश दीवार है/दीवार है भाषा भी/दीवार है मेरी अपने बारे राय/दीवार है मेरी तेरे बारे राय।* दीवार के विभिन्न अर्थों को समझाने के चक्कर में अर्थों की संभावना नहीं उन की सामान्यता प्रकट होने लगती है।

हरभजन सिंह का अर्धचेतन मन बड़ा समृद्ध है—स्मृतियों स्वप्नों में गुंफित। 'नगा निरोल नामुमकिन' अनुभव की विभिन्न परतें यहीं से इन कविताओं में आई हैं। इसीलिए अपनी कुछ कविताओं में वे मानसिक मनोवैज्ञानिक धरातलों को बड़ी गहराई से छूते हैं। 'नींद में जलता शहर' कविता में कवि ने अवचेतन मन से उतरते प्रवाह को नींद में चले जा रहे आदमी की स्वत संचालित प्रवृत्तियों से जोड़ दिया है। अपना से अलग हो जाने पर बेघरपन की अनुभूति 'अजनबी कविता में खुली है। 'कोई देख रहा है कविता में भी मन की जटिल अमूर्त स्थितियों को खोला गया है और उन में निहित विडंबना का बोध कराया गया है। आगे-आगे चलती रोशनी , आवाज़' आदि कविताओं में भी जटिल मनोवैज्ञानिक स्थितियों को पकड़ा गया है। *मैं गेट तक आया/आगे मात्र मरुस्थल/गर्म तवे-सी रेत/रेत में प्रेत।*

इन कविताओं में गहरी उदासी और अवसाद है जहाँ स्मृतियाँ भी संबल नहीं बनतीं।

कवि में सालिम साबुत होने की चाह है। पर यह चाह सीधी और सपाट नहीं है। यह गहरे स्तरों पर चल रहे आत्मसंघर्ष में लिपटी हुई है। एक तरफ़ उस लगता है कि अत्याचार, उत्पीड़न बलात्कार के शिकार हुए लोगों के बीच में स ही साखी उभरेगी। (साखी नहीं बनी), तो दूसरी तरफ़ उसे महसूस होता है कि स्मृति और स्वत्व कहीं गुम हो चुके हैं और इन की तलाश में वह खुद निरर्थक और अधूरा हो गया है—*बिसरता कण-कण मेरा स्वत्व/उधर पुकारता मुझे मेरा ही कोई खंड।* कवि अपने चेतन सार्थक अंश का 'वह मर रहा है' कविता में भरभराता महसूस करता है।

इस संग्रह की एक कविता है 'दरिया मर रहा है । यह कविता दरिया के ज़रिए संस्कृति के दफ़न हो जाने की कहानी कहती है। यह वह दरिया है जो पूरी एक जाति का मन भी है जो कहीं डूब रहा है। इस कविता की अंतिम पंक्तियाँ हैं *दरियाओं के देश में/दरियाओं को ढूँढता हूँ/लोगबाग की आँखों में ढूँढता हूँ/अपनों के दिलों में ढूँढता हूँ/ढूँढता हूँ खुद में/मन के विश्वास में/अपनी प्यास में।* संकट की घड़ी में दरिया का मर जाना मूल्यों के खत्म हो जाने और लोकगाथाओं के अप्रासंगिक हो जाने की तरफ़ संकेत करता है। इस अर्थ में ये कविताएँ बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध की मानवीय त्रासदी का बोध कराती हैं।

सीताकांत महापात्र ओड़िया के प्रसिद्ध कवि हैं। ओड़िया के मिथकों प्रतीकों में रमा-बसा यह कवि अपनी संवेदना चिंतन और काव्य विन्यास में आधुनिक बोध के विभिन्न पक्षों से अनवरत जूझता रहा है और आज भी जो कविता के लिए नए रास्तों की खोज में जुटा हुआ है।

तीस कविता वर्ष कवि की तीस वर्षों की लंबी काव्य यात्रा का दस्तावेज़ है। इस में सीताकांत महापात्र के संग्रह *दीप्ति और द्युति* (1970) से ले कर *वर्षा सकाल* (1993) तक की चुनी हुई चौंसठ कविताएँ और 1993 से

आज तक की पद्रह (अभी तक असकलित) शामिल हैं। उन के काव्य विकास क कई चरण कई उन्मेष कई रगरूप इन कविताओं में मिलते हैं जिस स उन क कवि-व्यक्तित्व को एक पहचान मिलती है। इस अर्थ में यह उन क काव्य विकास का प्रतिनिधि सकलन माना जा सकता ह।

इन कविताओ से लगता है कि सीताकात समय और शब्द से बराबर जूझते रहे हैं। निश्चय ही वे तेजी से बीतत समय को कविता के शब्द में बाँधने की जटिल प्रक्रिया स गुजर हैं। समय को शब्द में अकित करने की उन की कला अपनी ही है जिस व प्रारभ से ले कर आज तक साधते रहे हैं। यह कोई साधारण शब्द नहीं है। इस शब्द के कई रूप और स्तर हैं। यह बहुमुखी शब्द है जिस सीताकात *शब्दा का आकाश* (शब्द आकाश) कहते हैं। इस आकाश म उन की सभी कविताओ की अर्थ सरचना स्पदित है। उन की कविताओ में समय और शब्द का एक विशिष्ट रिश्ता है जिसे वे कभी जातीय प्रतीकों स स्फूर्त करते हैं तो कभी नितात व्यक्तिगत पतीकों से। इस रिश्ते को व 'नई शब्दहीनता कह कर पुकारते हैं। 'मत पूछो मुझ स प्रिय मित्र कविता म वे कहते हैं *बस इतने में/हिल कर उलट जाती है रात/फिर एक बार/इस एकात अनजान स्वर से/फिर से डूब मरती है सत्ता मेरी/नए शब्दहीनता के अथाह जल में।* एक तरह से ये शब्दों में व्याप्त मौन है—महाचुप्पी जिसे सीताकात कविताओं में साधते हैं। इस एक बात म वे अज्ञेय क काफी करीब दिखते हैं।

सीताकात स्मृतियों में रमने वाले कवि हैं। यह स्मृति सपने में बिंधी हुई है। वे समय को शब्दों के जरिए स्मृतियो में तानते हैं और समय उन की कविताओ म भीतर उन्मुख हो कर स्मृति बन जाता है। समय और शब्द का ऐसा काव्यात्मक विन्यास जिस क एक छोर पर स्मृति हो दूसरे पर सपना, कम कवियों में देखने को मिलेगा।

कवि की स्मृतियों के केन्द्र में है ओडिया जातीय परपरा के प्रतीक जगन्नाथ की स्मृति जिसे उन्होंने एक स्थल पर अधगढ़ा प्रम देवता' (कविता का जन्म) कहा है। भारतीय मानस में बैठे कृष्ण के मृत्यु प्रसग की कवि ने नई व्याख्या की है—पिता की मृत्यु के सदर्भ में जो उन का लगातार पीछा करती रही है। जातीय प्रसगों को वे आत्मीय प्रसगों में इस कौशल स ढाल देते हैं कि उन्हें अलगाना कठिन है। इन सब को वे काव्यपुरुष की आत्मा में केन्द्रित करते हैं। उन क अनुसार सारे प्रतिबिम्ब सारी परछाइयाँ सभी दूसरे इस काव्य पुरुष की आत्मा में निहित हैं—कविता अपने भीतर सभी को अभिव्यक्त करती है—बड़ी खुशी स। 'जानता हूँ शब्दों में कोई जादू नहीं होता पक्ति सीताकात की काव्य धारणा का बोध कराती ह। शब्द कोई जादुई छड़ी ह जिस स जो भी जब चाहा किया जा सके। जो लोग शब्दों पर सामाजिक भूमिका निभाने का अतिरिक्त बोझ डालते हैं उन स कवि सहमत नहीं है। व नहीं मानत कि सामाजिक बदल में कविता की कोई भूमिका हो सकती ह क्योंकि 'किसी का कभी रचा नहीं पाई कविता। कविता में सच को इस तरह देखना सीताकात महापात्र की विशेषता ह और एक हद तक इस दौर की भारतीय कविता की भी।

चर्चित कविता सग्रह

चौथ की प्रतीक्षा हरभजन सिह पजाबी से अनुवाद केदारनाथ कोमल, राजकमल प्रकाशन प्रा लि 1-बी नेताजी सुभाष मार्ग, दरियागज नई दिल्ली 110002 1994 मूल्य 60 रुपए

तीस कविता वर्ष सीताकात महापात्र ओडिया स अनुवाद डॉ राजेन्द्र प्रसाद मिश्र भारतीय ज्ञानपीठ 18 इस्टीट्यूशनल एरिया लोदी रोड नई दिल्ली 110003 1994 मूल्य 110 रुपए

पुष्पपाल सिंह

इतिहास और वर्तमान दो उपन्यास

नीला चाँद के यशस्वी कथाकार ने *मंजुशिमा* और *वैश्वानर* जैसी अन्य औपन्यासिक कृतियों के द्वारा भी यह साक्ष्य दिया है कि उन की इतिहास चेतना नाटक के क्षेत्र में जयशंकर प्रसाद की इतिहास-दृष्टि के निकट है। यह दृष्टि अपने युग के ज्वलंत प्रश्नों और समस्याओं से सीधे टकराने के लिए इतिहास के क्षेत्र में प्रवेश करती है। बुंदेलखंड के अपरिचित इतिहास को खोजते हुए *कुहरे में युद्ध* में शिवप्रसाद सिंह ने प्रामाणिक ढंग से अपनी राष्ट्रीय अस्मिता की तलाश की है। वर्तमान समय के साम्प्रदायिक तनाव के लिए दोषी तत्वों परिस्थितियों तथा व्यक्तियों को तटस्थ दृष्टि से देखने का सफल सर्जनात्मक प्रयत्न उपन्यासकार ने *कोहरे में युद्ध* में किया है। किन्तु उपन्यास की भूमिका ('रुकिए, आगे भग्नावशेष हैं') में उपन्यासकार की समीक्षा पर खीझ तथा वर्तमान समय में इतिहास मिथक की साहित्य में लोकप्रियता का अनावश्यक रूप में रेखांकित किया गया है। *नीला चाँद* उपन्यास को जो प्रतिष्ठा मिली है उस में समीक्षा का दाय भी है। सर्वत्र इस कृति की भूरि भूरि प्रशंसा हुई है।

कोहरे में युद्ध की मूल चेतना उपन्यासकार के इन शब्दों में प्रतिच्छादित हो जाती है 'मुझे मेरठ के दंगे में मरे इंसान की आँखों की जड़ता में ऐसी इबारत दिखती है। उस लाश से एक सवाल उछलता है—''यह कौन था? क्या आक्रांता मुसलमान या गर्वान्वित हिन्दू? मृत्यु या मृतक की जात नहीं होती। धर्म नहीं होता पर अब होने लगा है और इतनी ज्यादा तादाद में गुमनाम लाशें बरामद हो रही हैं कि उन पर चुप रहना गुनाह लगता है। हर निर्णायक क्षण में बुद्धिजीवी की चुप्पी या फिर अनावश्यक भड़ांस की अभिव्यक्ति बौद्धिक दिवालिएपन की शिनाख्त बन जाती है। शिवप्रसाद सिंह उस छद्म धर्मनिरपेक्षता को भी नकारते हैं जो मात्र एक वर्ग इस देश के बहुसंख्यक वर्ग को दोषी ठहराते हुए लेखों और सभाओं में गर्वोन्नत होने में ही तुष्ट है। उपन्यास की बहुत बड़ी उपलब्धि यह है कि साम्प्रदायिक मानसिकता से लड़ने में कहीं भी उपन्यास की दृष्टि स्वयं साम्प्रदायिक नहीं हो उठती (जो इधर की बहुत-सी कहानियों में हुआ है), वह तो तटस्थ और वस्तुनिष्ठ दृष्टि से इतिहास को खँगालती है।

कोहरे में युद्ध का कथानक 'भारत में मुसलमानी सल्तनत की बुनियाद' के ज़माने का है जब सुलतान अल्तमश और उन के सर्वाधिक सुयोग्य पुत्र नासिरुद्दीन की मृत्यु हो चुकी थी और ग्वालियर के सूबेदार मलिक नुसरत तयासी के नेतृत्व में मुस्लिम साम्राज्य विस्तार के लिए चुनौती बनी छोटी सी पहाड़ी रियासत जुझौती एक टॉवर की तरह अडिग खड़ी हो कर राष्ट्रीय संकट में नागरिकों शासकों सेनानायकों आदि के लिए एक आदर्श के रूप में प्रस्तुत हुई। यह चित्रित करना ही उपन्यासकार का अभीष्ट है। छोटे से अंचल के अल्पज्ञात इतिहास को पूर्ण प्रामाणिकता में प्रस्तुत करते हुए, उस में वर्तमान के प्रश्नों की तलाश एक बीहड़ रास्ता था। इस प्रकार के इतिहास खंड से साहित्य के पाठक का सहज तादात्म्य सरल कार्य नहीं था जिस की प्रतीति उपन्यास के प्रारंभ में अवश्य होती है किन्तु कथा के साथ थोड़ा आगे बढ़ने पर पाठक-मन उस इतिहास का मंथन करने लगता है। इस संक्षिप्त कथानक की दृष्टि में पर्याप्त विस्तार और विविधता है। देश भक्ति के संदर्भ में हमारे समाज के विभिन्न वर्गों-वर्णों का भूमिका महत्त्व एवं शूद्रत्व की युगानुकूल नई व्याख्या मुसलमानी आक्रमणों के सम्मुख

भारतीयों की हार के कारण मुसलमानों द्वारा अपनाया गया धर्म परिवर्तन का क्रम स्थान स्थान पर मातृभूमि की महत्ता यशोगाथा गगा और वेतवा जैसी नदियों का सास्कृतिक महत्त्व राजस के लिए प्रजा पालन का आदर्श अकाल के समय राजा और प्रशासन के कर्तव्य राजसत्ता सुख और मातृ भूमि के प्रति कर्तव्य के द्वद्व में करणीय सास्कृतिक आक्रमण की प्रक्रिया, हिन्दू मुस्लिम एकता के प्रमाण भारतीय परिवेश में नारी की शोचनीय स्थिति देश का साम्कृतिक गौरव जातीय और सास्कृतिक सघर्ष में आई अमानवीयता—इतना सब होते हुए भी हिन्दू मुस्लिम के बीच साप्रदायिक सौहार्द का मार्ग वर्तमान विश्व में अस्त्र शस्त्रों की दौड का सदर्भ आदि-आदि कितने ही वर्तमान के प्रश्न कथा क्रम में सहज रूप में स्थान पाते हुए, लेखक की गभीर चिन्ता और साफ़ सुथरी दृष्टि से परिचित कराते हैं। न किसी क़िस्म का पूर्वग्रह न कोई मताग्रह! उपन्यास की उपलब्धियों के ये बिन्दु इस कथा को वर्तमान के लिए प्रासगिक बनाते हैं।

इन बड सवालों के साथ साथ लेखक कुछ ऐसे छोटे सवालों पर भी अपने विचार प्रस्तुत करता है जो हमारी वर्तमान जीवन पद्धति का अग बन गए हैं यथा आनन्द को लगे विष-बाण के निकालते समय वर्तमान औषधि ज्ञान शल्य चिकित्सा इत्यादि के सम्मुख प्राचीन औषधि ज्ञान को नकारने की दृष्टि की भर्त्सना की गई है। उपन्यास में चरित-नायक के रूप में प्रस्तुत आनद पूरा नाम आनद कशोक लेखकीय चिन्ता का वाहक पात्र है जो जुझौती को सकट की घड़ी में उबार कर सच्चे राष्ट्रनायक की परि सकल्पना को साक्षात् करता है।

कोहरे में युद्ध उपन्यास की एक बहुत बडी सफलता युद्ध दृश्यों की सूक्ष्म परिकल्पना है। मध्यकालीन युद्धों का अत्यत चित्रात्मक रोचक और जीवत वर्णन यहाँ मिलता है किन्तु इन युद्ध-दृश्यों में युद्ध स्थलों पर दोनों पक्षों के योद्धाओं के सुदीर्घ वार्तालाप कहीं-कहीं उबाते हैं। घमासान युद्धों के बीच ऐसी लबी लबी बातचीत तो पारसी नाटकों के प्रभाव से रामलीलाओं के युद्ध-दृश्यों में दिखाई जाती थी। किन्तु यह छोटी सी त्रुटि *कोहरे में युद्ध* जैसी बड़ी कृति के गौरव को क्षत विक्षत नहीं करती।

जगदीश चद्र के उपन्यास *धरती धन न अपना* की विशेष चर्चा हुई थी। *धरती धन न अपना* का नायक कालीचरन उर्फ़ काली चमान्ड़ा टोले से 'गाँव वालों द्वारा मार मार कर निकाल दिया जाता है तो वह शहर जलधर का रुख करता है। जलधर में उस के स्थापित होने की सघर्ष-कथा के रूप में जगदीश चद्र का नया उपन्यास आया है *नरक कुड में वास*। एक प्रकार से इसे काली की जीवन-यात्रा का अगला पड़ाव अथवा *धरती धन न अपना* का दूसरा खड कहा जा सकता है (इस का तीसरा खड लिखे जाने की प्रक्रिया में है।) पर इसे *धरती धन न अपना* के पूर्वापर क्रम को जोड बिना भी पढा जा सकता है।

जगदीश चद्र ने अपने उपन्यास *कभी न छोड़ें खेत आधा पुल मुट्ठी भर कांकर, टुडा लाट* तथा *घास गोदाम* से सिद्ध कर दिया है कि वे एक सिद्धहस्त उपन्यासकार हैं। ग्रामीण जीवन का सशक्त चित्रण यद्यपि *धरती धन न अपना* (1972) तथा *कभी न छोड़ें खेत* (1976) दोनों कृतियों में है और हिन्दी में *धरती धन न अपना* की विशेष चर्चा भी हुई किन्तु इस तथ्य पर *कभी न छोड़ें खेत* उन का अद्वितीय उपन्यास है जिस में पनाब के जट्ट किसानों और उन्हीं के सगी साथी ग्रामवासियों का अत्यत प्रामाणिक और सशक्त चित्रण है। जगदीश चद्र चाहे पजाब के कृषक-जीवन का चित्रण कर रहे हों अथवा सैन्य-जीवन का (*आधा पुल*) वहाँ की शब्दावली दिनचर्या, नयाचार (प्रोटोकॉल) सबधी सैन्य शिष्टाचार, सैन्य फ़ील्ड-क्राफ्ट बैटल-क्राफ्ट के यायक दाव पेच आदि का अत्यत प्रामाणिक सूक्ष्म चित्रण कर रहे हों अथवा जलधर की बूटा मडी में कच्चे चमड़े का कमाने वालों (*नरक कुड में वास*) की ज़िन्दगी का रोंया रेशा उघाड रहे हों सर्वत्र उन की कथ्य पर इतनी मज़बूत पकड़ रहती

है कि यह ड्राइंग रूम से निरूपित और कल्पित जीवन नहीं लगता। लगता है कि वे उस ज़िन्दगी में पूरी तरह रच-बस कर, उस जीवन का एक हिस्सा हो कर, हमें उस में प्रवेश कराते हैं।

नरक कुंड में वास का प्रारंभ *धरती धन न अपना* के अंत से ही होता है। ज्ञानो की प्रीति के कारण काली को गाँव छोड़ कर जाना पड़ा था और तीन महीने तक गाँव में उस के अते-पते को ले कर तरह-तरह के कयास लगाए जाते रहे थे। वही काली गाँव से भाग कर जलंधर शहर आ जाता है अपनी एक रुपए दो आने की पूँजी ले कर। यद्यपि उपन्यासकार कहीं भी स्पष्टतः अपने कथानक का समय नहीं बताता है तो भी उपन्यास का पूरा परिदृश्य उसे आज़ादी से पहले का ही सिद्ध करता है। काली के शहर में आने और टिकने की संघर्ष कथा *नरक कुंड में वास* के रूप में प्रारंभ होती है। काली का शहर के नरक कुंड में यह वास दो ज़िन्दगियों के रूप में होता है। प्रथमतः रेढ़ा खींचने वालों के बीच भाँडी बनने में और, दूसरे, कच्चा चमड़ा कमाने वाले कारख़ाने में मज़दूरी करते हुए। देखा जाए तो शहर में आते ही स्टेशन पर और मंडी में सिर छिपाने के लिए जगह खोजने के साथ ही उस के नरक-वास का सिलसिला प्रारंभ हो जाता है। प्रारंभ में उपन्यासकार ने शहर की बेमुरव्वती का बहुत अच्छा चित्रण विभिन्न रूपों में किया है।

रेढ़ा खींचना (पशु के समान जुत कर लगने को ही भाँडी बनना कहा जाता है) भाँडी बनना क्या आसान काम है! काली को भाँडी बन कर सामान से लदी ठेली को ठेलना भी नहीं आता है किन्तु छिब्बू उसे समझाता हुआ मानो उस का मजबूरी साक्षात् कर देता है। निपट अनपढ़ होते हुए भी ये लोग लकीर खींच-खींच कर अपने हिसाब से हर दुकानदार की पहचान बनाते हुए उसे माल सही तौर पर पहुँचाते हैं। इन की दिनचर्या खान पान बोली-बानी इन के हृदय में गाँव में छूटे परिवारों का याद की उठती हूक और उन के प्रति कर्तव्य का बोध ही उन का शहर की इस पशुवत् ज़िन्दगी के नरक कुंड में डाल रखता है। अपनी आर्थिक मजबूरियों के चलते वे इस नरक से छुटकारा नहीं पा पाते बल्कि घर गाँव जाने पर अपना ब्याज़ी भी लगा आते हैं।

कच्चा चमड़ा कमाने का काम इस से बड़ा नरक है इन के कारख़ानों में मज़दूरों के भयावह और घिनौने यथार्थ का यह प्रथम परिचय जगदीश चंद्र का उपन्यासकार अपने हिन्दी पाठक को देता है पूरी संवेदनशीलता सहानुभूति एवं गहराई से। इस नारकीय ज़िन्दगी में विद्रोह करता काली इस वर्ग में हल्के-हल्के ही सही सुगबुगाती उस राजनीतिक चेतना से परिचित कराता है जो मज़दूरों का बेहतर जीवन दिलवाने की संघर्ष चेतना का प्रतीक है। काली में कुछ आशा जगती है कि वह इस व्यवस्था को बदलने में सक्रिय और सफल भूमिका निबाहने की क्षमता से युक्त है किन्तु जिस प्रकार *धरती धन न अपना* खंड में काली स्थितियों से निपटने लड़ने में भाग खड़ा होता है उसी प्रकार यहाँ भी वह जन चेतना का प्रतिनिधि पात्र बन कर लड़ाई अपने कंधों पर नहीं ओढ़ता। वह इस रण क्षेत्र से घबरा कर भाग खड़ा होता है अपने चाचा नरसिंह के साथ जलंधर से छह-सात कोस की दूरी के अड्डे पर जूती सिलने के पुश्तैनी धंधे में लग जाने के लिए। उपन्यास के अंतिम चरण में लेखक ने चरित्र की जो उठान अपने कथा नायक काली को दी थी वह उस का पूर्ण निर्वाह नहीं कर पाता है। इस अभाव के होते हुए भी *नरक कुंड में वास* एक अछूते विषय पर दलित वर्ग के महत्वपूर्ण उपन्यास के रूप में बहुत दूर तक याद रखे जाने योग्य कृति है। पंजाब के इस वर्ग विशेष का जन-जीवन पूरी रंगत और कहन में यहाँ मौजूद हुआ है। उपन्यासकार की भाषा शैली की रवानगी उस का ताज़ापन और क़िस्सागोई का भरपूर गुण अर्थात पाठक को अपने कथा-क्रम में बाँधे रखता है।

चर्चित उपन्यास

[illegible] में युद्ध शिवप्रसाद सिंह राजपाल एंड संस कश्मीरी गेट, दिल्ली 110006 1993 मूल्य 150 रुपए

नरक कुंड में वास जगदीश चंद्र प्रकाशन [illegible] 1994 मूल्य 125 रुपए

जानकी प्रसाद शर्मा

अक्स नारी-सवेदना के हिन्दी की छह कवयित्रियाँ

आज क हिन्दी काव्य परिदृश्य में महिला रचनाकारों की मौजूदगी ध्यान खींचती है लकिन पिछ्ल दौर पर दृष्टिपात करें तो देखेंग कि कथा साहित्य के क्षेत्र में महिला रचनाकारों में जो दृष्टि की प्रखरता और सर्जनात्मक ऊर्जा प्राप्त हाती है वह कविता की दुनिया में उतनी नहीं मिलती। 'नई कविता' और 'नई कहानी आदोलन क दौरान महिला रचनाकारों की सक्रिय उपस्थिति का जो फ़र्क़ था वह पिछले कुछ वर्षों तक बना रहा और कमाबेश आज भी बना हुआ है। पहले चर्चित तीन *सप्तकों* में हम शकुत माथुर (*दूसरा सप्तक*) और कीर्ति चौधरी (*तीसरा सप्तक*)—सिर्फ़ इन दो कवयित्रियों को शामिल दखत हैं। बाद में इन की रचनाशालता में भी गतिरोध-सा आ गया। इधर कदारनाथ सिंह द्वारा सपादित *कविता दशक* के इकसठ रचनाकारों में कुल तीन कवयित्रियाँ हैं—तेजी ग्रावर, गगन गिल और अनामिका। हालाँकि किसी सपादित सग्रह में शामिल होन या नहीं हाने क आधार पर किसा कवि क सृजन का आकलन करना बतुकी बात है। लकिन ये चार सग्रह महिला रचनाकारा के सदर्भ में विशष महत्त्व रखते हैं।

आज की कवयित्रिया में नारीवाद क प्रति बढता हुआ आकर्षण एक आम रुझान है। नारा चेनना की जगह अब नारीवाद लेता जा रहा है। नारी चेतना का सबध जहाँ नारी की रूढ छवि का ताड कर उस क सघर्ष के नए आयामों का रेखाकित करने से है वहीं नारीवाद पुरुष के वर्चस्व के ख़िलाफ़ एक आवेगजन्य प्रतिक्रिया है। नारावादी आदालन यूरोप जैसे खुले समाज में नारी गरिमा की रक्षा नहीं कर सका तीसरी दुनिया के दशों की बात ता दूर है। इस आन्दालन के बीज पुरुष को नारा का वर्ग शत्रु मानने की धारणा में मौजूद है। इस का सकारात्मक भूमिका सिर्फ़ यह है कि इस न पुरुषसत्तात्मक समाज में स्त्री हाने के अर्थ को समझने में मदद की। लकिन इस की सामाए तब स्पष्ट हो जाता हैं जब नारीवाद पुरुष में दभ और स्त्री में लाचारी पदा करने वाली व्यवस्था का अपना लक्ष्य नहीं बनाता। एसे में वह व्यवस्था माफ बच जाती है जो न केवल स्त्री बल्कि समूची मानवता के हिता क विरुद्ध है। लिहाज़ा नारी मुक्ति क सवालों को व्यवस्था में आधारभूत परिवर्तन क सवाल से जोड़ कर दखने की जरूरत है। य दाना दृष्टियाँ स अलग अलग कवयित्रियों में स्पष्टत पहचानी जा सकती हैं।

अन्य विधाओं की अपक्षा कविता में सरचना की सतह पर काफ़ी तज़ा क साथ बदलाव आए हैं। इन बदलावों न कवि के यथार्थ-बोध की प्रक्रिया का बहुत गहरे में प्रभावित किया है। ऐसे में कोई ताज्जुब नहीं कि आज कविता हमें उन चीजों और जगहा में दिखाई द जहाँ उस के हाने क बार में हम न नहीं साचा था। कविता पर विचार क दरवाज बन्द नहीं हुए हैं जसा कि कुछ मामासकां ने मान लिया है लकिन कविता विचार की आक्रामकता स किमा कदर मुक्त जरूर हुई है। य बदलाव आज का महिला रचनाकारों की कविताओं में किस रूप में लक्षित हुए ह कुछ कवयित्रियों क सग्रहों का ध्यान में रखत हुए हम इस बात पर बहस करना चाहेंगे।

वरिष्ठ कवयित्री इदु जैन ने अपनी तीन दशकों का रचनायात्रा में एक विशिष्ट पहचान अर्जित का है। *यहाँ कुछ हुआ तो* उनका सातवाँ कविता-सग्रह है। इस स पहल उन का *आँख स भी छाटी चिड़िया* सग्रह काफ़ा

चर्चित रहा है। इंदुजी का भाव लोक निहायत निजी संदर्भों से ले कर यथार्थ के बाह्य रूपों तक फैला हुआ है। उन की रचनाओं में मध्यवर्गीय जीवन के यथार्थ को प्रमुखता के साथ जगह मिली है। वे जिन संदर्भों और स्थितियों को रचना के लिए उठाती हैं वहाँ उन की गहरी शिरकत रही होती है।

चिड़िया इंदुजी का प्रिय प्रतीक है। यह चिड़िया जीवन के लक्षित अलक्षित संदर्भों को खोलती हुई हमारे सामने उतर आती है। इस संग्रह की कविताओं के तल में एक जिज्ञासा का भाव छुपा हुआ है। जो घटित हो चुका है और जो घटित हो रहा है उसे उन की कविताएँ परत-दर परत खोलती चली जाती हैं। 'यहाँ कुछ हुआ तो था' शीर्षक कविता इस की अच्छी मिसाल है। इस के साथ साथ इन कविताओं में मानवीय आस्था का गहरा एहसास है। तमाम यातनाओं के बावजूद *ज़िन्दा है क़ैदी/उस की कसमसाहट में/सूरज को समुद्र से निकालने/की बसी है।* —'हमदम'

'नई कविता' की मूलदृष्टि से जुड़े कवियों में जो एक अंतर्विरोध दिखाई देता है वह इंदुजी के यहाँ भी बदस्तूर मौजूद है। मसलन यथार्थ को बदलते हुए रूपों के साथ उन का सरोकार है किन्तु यथार्थ को देखने की दृष्टि मध्यवर्गीय है। जितना बदलाव मध्यवर्ग के सुखी जीवन के लिए ज़रूरी है उतना ही उन के लिए यहाँ जायज़ है। मध्यवर्गीय दृष्टि का अतिक्रमण न कर पाना उन की सब से बड़ी सीमा है। यद्यपि उन्होंने 'सरोकार' शीर्षक कविता में अपनी प्रतिश्रुति को स्पष्ट करने की कोशिश की है इस कविता के मुताबिक़ उन की प्रतिश्रुति उस आदमी के प्रति है जो कुदाल चलाता है गारा ढोता है टाइप करता है बच्चा पुचकारता है। इस आदमी के अक्स उन की 'बच्चा' जैसी दूसरी कविताओं में भी मिल जाते हैं लेकिन लगता है कि कवयित्री इस आदमी को दूर से देख रही है। इस आदमी के संघर्ष को मूर्त करने के लिए जिस मानसिक साहचर्य की ज़रूरत है उस की यहाँ कमी अखरती है।

इंदुजी के रचनाकार की विशिष्टता वहाँ उभरती है जहाँ वे मनोदशाओं को बहुत मार्मिक और कलात्मक रूप में उभारती हैं। वे नारीवाद की तंग ज़मीन से बाहर आ कर नारी की नियति के ख़िलाफ़ जूझती हुई दिखाई देती हैं। संग्रह की 'संगम' कविता स्त्री पर लिखी गई अपने ढंग की एक अलग कविता है। यह कविता एक स्त्री की मनोदशा का कथात्मक विस्तार है।

मोना गुलाटी अपनी बेबाकी और साफ़गोई के बूते पर अलग से पहचानी जाती है। उन की कविताओं में भाषा और शिल्प पर अधिक काम दिखाई देता है। इसी काम के *नतीजतन कहीं कहीं* संवेदना का जुगनू भी चमक जाता है। उन के शिल्प पक्ष की तुलना में संवेदना पक्ष उतना आश्वस्त नहीं करता। उन के *महाभिनिष्क्रमण और* *सोच की दृष्टि* दो संग्रहों की कविताएँ हमें इसी निष्कर्ष पर ले जाती हैं।

मोना गुलाटी की कविताओं में विद्रोह का स्वर अंतर्वर्ती लय की भाँति विद्यमान है लेकिन जैसा कि अक्सर होता है [illegible] *यह विद्रोह एक अमूर्त व्यवस्था के विरुद्ध है। इस विद्रोह से जन विरोधी व्यवस्था को कोई हानि* नहीं है। यह कविता का एक चलन था फ़ैशन था जिस से आगे दूर तक जाने की शक्ति नहीं थी। इस चलन की कविताओं को व्यापक पाठक वर्ग नहीं मिल सका। [illegible] इन संग्रहों का पाठ कर जाता है। इन कविताओं में [illegible] है और [illegible] की [illegible] मान [illegible] गया है। ये कविताएँ [illegible] से [illegible] है। यदि कोई रचनाकार [illegible] मन कि इस समाज में सब कुछ नकारने योग्य है तो इसे [illegible] नहीं [illegible] वर्ग [illegible] और [illegible] है। इस संदर्भ में *महाभिनिष्क्रमण* की *आत्म ग्रन्थि* और *सोच की दृष्टि* की [illegible] 2 [illegible]

सहिता कविताएँ देखी जा सकती हैं। 'बुर्जुआ जनतत्र' की विसगतिया पर व्यग्य करना समझ में आता है लेकिन जनतत्र मात्र के विरोध का राजनीतिक तर्क समझ में नहीं आता। दूसरे, यह विरोध जताते समय हमारी आँखों में इस क बेहतर विकल्प की तसवीर साफ होनी चाहिए जो कि यहाँ नहीं है। इसी सर्वनिषधवादी नजरिए के चलते कम्युनिस्टों और क्रातिकारियों के प्रति भी आक्रोश व्यक्त किया गया है।

यह कहना अतिशयोक्ति न होगी कि मोना गुलाटी कविता म नारीवाद की सब से प्रखर प्रवक्ता हैं। एक रचनाकार के रूप में उन का औद्धत्य और जुझारूपन सराहनीय है लेकिन एक एक कविता से गुजरते हुए हमें यह महसूस होता है कि पुरुष के प्रति घृणा उन की शाश्वत थीम है। उन्होंने सभवत बहुत से 'फ़ेमिनिस्टों' की तरह यह मान लिया है कि पुरुष को कमतर दर्जे में पहुँचा देने से ही नारी मुक्ति का प्रश्न हल हो जाएगा।

एक बात और, कवयित्री ने स्त्री के जो चित्र प्रस्तुत किए हैं उन का सबध सिर्फ़ यौन शोषण से है। यहाँ नारी के सघर्षमय जीवन के सकारात्मक चित्र क्यों नहीं हैं? इस के अलावा *महाभिनिष्क्रमण* की कविताओं में पुरुष को नामर्द नपुसक और हिजडा आदि शब्दो स इतनी बार सबोधित किया है कि आप पढ़ते पढ़त ऊब सकते हैं। यहाँ हम कविता में श्लील-अश्लील के प्रश्न की गहराई में नहीं जाना चाहते। फ़क्त इतना कहा जा सकता है कि रचनाकार की दृष्टि शब्द को अर्थ देती है और यहाँ यह भीतरी खीझ और झल्लाहट की ही अभिव्यक्ति है।

सुनीता जैन का छठा कविता-सग्रह आया है— *सूत्रधार सोते हैं*। कवयित्री का यह आत्म स्वीकार है कि *यद्यपि कविता/और कविता में जो कुछ कहा/किसी के/किसी भी काम का नहीं होता*। फिर भी वे कविता स एक उम्मीद जरूर करती हैं। वह मानवीय सबधो के प्रत्यय को बचाए रखने की उम्मीद है। रोमानी भाव बाध क बावजूद उन की यह उम्मीद ही इन कविताओं की अत शक्ति को बढाती है और इन्हें एक अलग रग देती है। कवयित्री की चिन्ता सवेदन शून्यता का बढता हुआ मरुस्थल है जिस के विरुद्ध जूझने की मानसिक तैयारी इन कविताओं में झाँकती है *तुम्हारे इतने बडे/मरुस्थल म/क्या एक ओक पानी नहीं?*

सवेदना के जल को प्राप्त करने की यह बेचैनी उन की कविता की सब से बडी सामर्थ्य है। कवयित्री के रचनात्मक मन पर रागात्मक सवर्गों का अत्यधिक दबाव है। इस दबाव के रहते हुए वह अपन समय के अतर्विरोधो पर ध्यान नहीं दे पाई है। उन क प्रेम में औदात्य और सात्विकता की झलक है लकिन उस म बाहर के ससार की व्याप्ति नहीं है। उन के यहाँ 'एक छोटी परिधि का जीवन' है। इसलिए हमें ऐसा लगता है कि व एक ही प्रेम कविता को कई-कई ढग से लिख रही हैं। लगभग हर कविता में मौन समपण को वाणी दी गई है। प्रम में समीपता और दूरी की परिभाषाएँ बदल जाती हैं। यह भाव लगभग सभी पारपरिक प्रेम कविताओं में विद्यमान है। इन कविताओं म भी इसी फ़लसफ़ को दोहराया गया है। यह बात अपनी जगह पर है। सुखद स्थिति यह है कि इन म कुठा और वर्जनाओं को जगह नहीं मिली है।

कहीं-कहीं मौजूदा समाज में स्त्री की हालत की ओर भी कवयित्री का ध्यान गया है। लेकिन यह उन का प्राथमिक चिन्ता नहीं है। फिर भी एसे सकेत मिलते हैं कि नारी के गरिमामय जीवन को वे किसी भी क़ीमत पर बचाए रखना चाहती हैं *जीवन जैसा भी हो/स्वीकार मुझे/एक अस्वीकार बस /नारी में/नायिका खडिता।*

कात्यायनी नई पीढ़ी की एक विचारशील कवयित्री है। *सात भाइयों के बीच चपा* उन का पहला कविता सग्रह है। उन के यहाँ अपने समय का तीव्र बोध मिलता है। उन्हें उन मुकामों की पहचान है जहाँ रचना के जरिए हस्तक्षेप किया जा सकता है। वे हस्तक्षेप की सामार्थ भी जानती हैं। यही कारण है कि उन्होंने अपनी कविता में

ही सीमित रही है। वे जो देखती हैं और महसूस करती हैं उसे तरल भाषा में संयोजित करने की क्षमता उन के पास है लेकिन बहतर कविता के लिए इस से अधिक सर्जनात्मक कौशल की दरकार है। बात सिर्फ कविता होने की नहीं है बल्कि कविता के अपने समय का साक्षी होने की है।

शशि शर्मा जब गाँव और घर के निजी संदर्भों के बीच से कविता रचती हैं तब उन की तरल भावुकता मोहक और सुखद लगती है। लेकिन जब वे अपने समय के सामाजिक प्रश्नों का स्पर्श करती हैं तो उन का यह रूमानी अंदाज कविता की शक्ति को नष्ट कर देता है। यही कारण है कि इस संग्रह की अपेक्षाकृत जानदार कविताएँ वही हैं जिन में दादा माँ और भाई-बहन की मौजूदगी है। 'कीकर', 'माँ' 'ममता' और 'गाँव की एक उदास शाम' ऐसी ही उम्दा कविताएँ हैं।

संग्रह में कविता की कच्ची सामग्री काफ़ी है इसी सामग्री के बूते पर कहीं-कहीं कविता भी पैदा हो गई है। 'पहाड' एक ऐसी ही रचना है। संयोग से यह रचना औरत पर लिखी गई है। इस संग्रह की श्रेष्ठतम कविता कहा जा सकता है। इस में स्त्री को नए कोण से देखा गया है *मीठे झरनों और हरियाले गदीले पेडों से भरा पूरा पहाड है वह/बड़ा अजीब सा लगता है ना उस का/एक औरत का पहाड होना।*

प्रगति सक्सेना उन चंद रचनाकारों में से हैं जिन्होंने इस दशक की शुरुआत के साथ अपनी पहचान बनाई है। *आश्चर्य लोक* उन का पहला संग्रह है। जिस वैचारिक धैर्य और अभिव्यक्ति की सहजता का परिचय उन्होंने आरंभ से ही दिया है युवा रचनाकारों में वह अलग से पहचाना जाने वाला है। उन्होंने स्वयं को आक्रामक मुहावरे के सम्मोहन से बचा लिया है। वे ठंडे लहज़े में और संजीदगी के साथ बात कहती हैं। इस ठंडे लहजे में इतनी अमूर्तता भी नहीं है कि इस की मनमानी व्याख्या कर दी जाए। दरअसल आक्रामक मुहावरा स्वयं अपने किस्म का एक रूपवाद ही है। जब विचार और संवेदना के बीच की खाई को भाषा के चातुर्य से पाटने की कोशिश की जाती है तब अभिव्यंजक मुहावरा गढ़ा जाता है। प्रगति सक्सेना को इस की जरूरत नहीं पड़ा है। एक कविता में उन्होंने इस मुहावरे की सीमाओं को रेखांकित भी कर दिया है *एक हल्की सी फूंक/और एक आवेग/बुझ जाता है एकाएक।*

सृजन का एक तर्क उन की कविताओं के बीच से उभरता है। वह है चीजों को सुधारने की इच्छा। पूछा जा सकता है कि बदलने की इच्छा क्या नहीं? दरअसल, इच्छा मात्र से न चीज़ सुधर सकती है न बदला जा सकता है। इसलिए यह बहस बेमानी है। देखना यह चाहिए कि कवि ने उन चीजों के सूक्ष्म प्रामाणिक और संवेदनात्मक ब्यौरे पेश किए हैं या नहीं जिन्हें कि सुधारा जाना है। यह कोशिश पूरी तैयारी के साथ इन कविताओं में दीखती है।

ये बनाम कविताएँ मामूली सी लगने वाली चीजों को अपना विषय बनाती हैं। ये चीज़ें मनुष्य की नियति से जुड़े किसी न किसी सवाल के उठने का वसीला बन जाती हैं। मसलन संग्रह की पहली कविता देखिए *मेरे पास/एक कलम है/और कुछ कागज/खुले आसमान सा कुछ है/जिस की तरफ प्रार्थना में/उठते हैं हाथ।/कुछ है उस पत्ता-सा/जो काँप उठता है/मौसम की हल्की-सी हलचल पर।*

यहां सब हमारा जाना पहचाना चीज़ें हैं। मौसम की हल्की-सी हलचल पर काँप उठने वाला पत्ता मानवीय संवेदनशीलता के उच्च स्तरों की ओर संकेत कर देता है जिस के अभाव में क़लम कागज और खुले हुए आसमान का कोई अर्थ नहीं है।

इस सिलसिले में संग्रह की अडतीस संख्या पर मौजूद कविता भी काफ़ी सशक्त है। कविता का 'बहुत दिनों

कहीं अतिकथन से काम नहीं लिया है।

कात्यायनी महज विचार के बजाए संवेदना पर अधिक जोर देती है। 'यदि हम यहाँ नहीं होते तो' कविता उन की वैचारिक स्थिति को स्पष्ट कर देती है। कविता में बार-बार व्यवहृत 'यहाँ' शब्द एक वैचारिक स्थिति को ध्वनित करता है। वह शापित पीड़ित वर्गों के पक्ष में खड़े होने की स्थिति है। कविता में इस स्थिति को दो तरह से खोला गया है। एक यदि हम यहां नहीं होते तो कहाँ और किस रूप में होते? अर्थात *हम हत्यारों की वंदना में तल्लीन होते। हमारी खाल गैंडे की खाल की तरह मोटी होती। चेहरे पर गधे-सा संतोष का भाव रहता। आँखों में लोमड़ी सी कुटिलता होती। और सुअरों की तरह हम विलासप्रिय होते।* दूसरे यहाँ होने से हम 'मानवीय पीड़ा के गरिमामय भार' को महसूस कर सकते हैं। फूलों बच्चों रोशनी संगीत और मौन की भाषा में बातें करते रहना हमारे लिए संभव हो सकता है।

कवयित्री ने अपने समय की विरूपताओं और विसंगतियों को आड़े तिरछे कोणों से देखा है। वे एक पत्रकार की तरह स्थितियों के ब्यौरों में जाने की कोशिश करती हैं। कहीं उन की कविता में कटाक्ष और व्यंग्य की धार पैदा हो जाती है। यह महज भाषा की खूबी नहीं बल्कि यथार्थपरक दृष्टि की पहचान है। यह एक संयोग है कि उन की व्यंग्य रचनाओं का संबंध प्रायः साहित्य की दुनिया से है। राजनीति यहां स्वभावतः शामिल है। संग्रह की 'धंसो धंसो जल्दी धंसो' 'कवि और कर्ज़' 'महान लोग' और 'एक दिन शेष जी के घर पर' कविताएँ देखी जा सकती हैं। सतह से देखने पर लग सकता है कि कवयित्री ने प्रगतिवाद और जनवाद पर फब्तियाँ कसी हैं। लेकिन सच्चाई यह है कि वे प्रगतिवाद और जनवाद से जुड़े लोगों में स्वयं को शामिल करते हुए उन के वैचारिक और चारित्रिक स्खलन पर चिन्ता जताती हैं। रघुवीर सहाय के शीर्षक के वजन पर लिखी गई 'धँसो धँसो जल्दी धँसो' कविता उन आत्मगत कारणों की ओर ध्यान आकृष्ट करती है जिन के रहते हुए प्रगतिशील आंदोलन-रूपी गज अपने ही भार से कीचड़ में धंसता चला गया। ज़ाहिर है कि इन व्यंग्यों में उपहास के बजाए बेचैनी का एहसास ज्यादा है।

कात्यायनी स्त्री के जीवन को ऐतिहासिक विकास-क्रम के अनिवार्य परिणाम के रूप में सामने आई परिस्थिति की द्वंद्वात्मकता में देखती हैं। वे नारीवाद की अमूर्त लड़ाई नहीं लड़तीं। यही कारण है कि स्त्री के इर्द गिर्द रची गई उन की कविताएं सिर्फ़ करुणा उपजा कर नहीं रह जातीं बल्कि यथार्थ के एक अछूते आयाम से हमें रू-ब-रू कराती हैं। एक लोकगीत से प्रेरित 'सात भाइयों के बीच चंपा' एक ऐसी रचना है जो हमें स्त्री के हक़ में सोचने के लिए उद्वेलित करती है। यह एक प्रकार से स्त्री की आस्था गीत है। बाप की छाती पर सांप-सी लोटती सपनों में काली छाया-सा डोलती सात भाइयों के बीच चंपा सयानी होती है। उस बार-बार नष्ट किया जाता है और वह बार-बार नए रूपों में अपना अस्तित्व जताती है। यह हर साजिश को परास्त करती हुई नारी-चेतना की अभिव्यक्ति है।

'स्त्री का सोचना एकांत में' कविता स्त्री के अपने समूचे अस्तित्व को महसूस कर पाने के संघर्ष को उजागर करती है। सोच पाने के लिए एकांत के कुछ क्षण उसे कभी मयस्सर नहीं हो पाते। यहाँ विष्णु खरे की 'हमारी पत्नियाँ' (*सब की आवाज़ के पर्दे में*) कविता अनायास याद आ जाती है जो इस मौज़ूँ पर एक बेमिसाल कविता है।

भाषा और संरचना के स्तर पर इन कविताओं में सधाव की कमी अखरती है। कात्यायनी के पास बात है लेकिन बात कहने के ढंग में विविधता नहीं है। यहाँ प्रचलित मुहावरे से अलग हट कर भाषा को रचने की कोशिश कम दिखाई देती है। लंबी कविताओं की बनिस्बत छोटी कविताएँ ज्यादा संतुलित और अतर्गुंफित हैं।

शांति शर्मा के संग्रह *मौसम से बड़ी दोपहर* की कविताएँ एक भावुक मन की तात्कालिक प्रतिक्रियाएँ हैं। कवयित्री की सदाशयता और नीयत पर कोई शक नहीं है लेकिन उन की दृष्टि यथार्थ के एकायामी और सतही रूप तक

ही सामित रही है। वे जा दखती हैं और महसूस करती हैं उसे तरल भाषा में सयोजित करने की क्षमता उन क पास है, लेकिन बेहतर कविता क लिए इस से अधिक सर्जनात्मक कौशल की दरकार है। बात सिर्फ़ कविता होने की नहीं ह बल्कि कविता के अपने समय का साक्षी होन की है।

शशि शर्मा जब गाँव और घर क निजी सदर्भों क बीच से कविता रचती हैं तब उन की तरल भावुकता मोहक और सुखद लगती है। लेकिन जब वे अपने समय के सामाजिक प्रश्नों का स्पर्श करती हैं तो उन का यह रामानी अदाज़ कविता का शक्ति का नष्ट कर देता है। यही कारण ह कि इस सग्रह की अपेक्षाकृत जानदार कविताएँ वही हैं जिन म दादा, माँ आर भाई-बहन की मौजूदगी है। 'कीकर' 'माँ' 'ममता और 'गाँव की एक उदास शाम' ऐसी ही उम्दा कविताएँ है।

सग्रह म कविता की कच्ची सामग्री काफी है इसी सामग्री क बूत पर कहीं-कहीं कविता भी पैदा हा गई ह। 'पहाड एक एसा ही रचना है। सयोग स यह रचना औरत पर लिखी गई है। इस सग्रह की श्रेष्ठतम कविता कहा जा सकता है। इस में स्त्री को नए कोण म दखा गया है *मीठे झरनो और हरियाले गदीले पेडों स भरा पूरा पहाड़ है वह/बडा अजीब सा लगता है ना उस का/एक औरत का पहाड होना।*

प्रगति सक्सना उन चद रचनाकारों म स ह जिन्होन इस दशक की शुरुआत क साथ अपनी पहचान बनाई है। *आश्चर्य लाक* उन का पहला सग्रह है। जिस वैचारिक धैर्य और अभिव्यक्ति की सहजता का परिचय उन्होंने आरभ स हा दिया ह युवा रचनाकारा म वह अलग से पहचाना जाने वाला है। उन्होंने स्वय का आक्रामक मुहावरे के सम्मोहन स बचा लिया है। व ठडे लहज़े में और सजीदगी के साथ बात कहती हैं। इस ठड लहजे में इतनी अमूर्तता भी नहीं है कि इस की मनमानी व्याख्या कर ली जाए। दरअसल, आक्रामक मुहावरा स्वय अपने क़िस्म का एक रूपवाद ही है। जब विचार आर सवेदना के बीच की खाई को भाषा के चातुर्य से पाटने की कोशिश की जाती है तब अग्निवमक मुहावरा गढा जाता है। प्रगति सक्सना का इस की ज़रूरत नहीं पड़ी है। एक कविता म उन्होंने इस मुहावरे की सीमाओं को रखांकित भी कर दिया ह *एक हल्की-सी फूँक/और एक आवेग/बुझ जाता है एकाएक।*

सृजन का एक तर्क उन की कविताओं क बीच से उभरता ह। वह है 'चाज़ों को सुधारने की इच्छा। पूछा जा सकता है कि बदलने की इच्छा क्या नहीं? दरअसल इच्छा मात्र स न चीज़ें सुधर सकती हैं न बदला जा सकता ह। इसलिए यह बहस बेमानी ह। देखना यह चाहिए कि कवि न उन चाजों क सूक्ष्म प्रामाणिक आर सवदनात्मक ब्योरे पेश किए हैं या नहीं, जिन्हें कि सुधारा जाना है। यह कोशिश पूरी तैयारी क साथ इन कविताओं में दीखती है।

ये बनाम कविताएँ मामूली-सी लगन वाली चीज़ों का अपना विषय बनाती हैं। य चीज़ें मनुष्य की नियति स जुड़ किसी न किसी सवाल को उठान का वसीला बन जाता हैं। मसलन सग्रह की पहली कविता देखिए *मेरे पास/एक कलम है/और कुछ कागज़/खुले आसमान सा कुछ है/जिस की तरफ प्रार्थना में/उठते हैं हाथ।/कुछ है उस पत्ता सा/जो काँप उठती है/मौसम की हल्की सी हलचल पर।*

यहा सब हमारा जानी पहचानी चीजें हैं। मौसम का हल्की-सी हलचल पर काँप उठन वाला पत्ती मानवीय सवेदनशीलता के उच्च स्तरों की आर सकेत कर देता है जिस के अभाव में क़लम काग़ज़ और खुले हुए आसमान का कोई अर्थ नहीं है।

इस सिलसिले म सग्रह का अड़तीस सख्या पर मौजूद कविता भी काफ़ी सशक्त ह। कविता का 'यहुत दिना

वाद शीर्षक दिया जा सकता है। ज़ाहिर है इस कविता की रचना प्रक्रिया के दौरान कवयित्री के मन में नागार्जुन जरूर रहे होंगे। कुछ विशिष्ट स्थितियों के साथ मानवाय सवेदना के रिश्तों को यह कविता बखूबी उभारती है।

कुछेक कविताओं में नारी जीवन के सवेदनामय चित्र भी मिलत हैं। यह इस विपय पर लिखने की प्रथा का अनुपालन नहीं है बल्कि इस के मूल में कवयित्री की वैचारिक प्रतिबद्धता है। यहाँ दुर्बलता की ग्रथि स मुक्त एक ऐसी स्त्री मौजूद है जो अपनी मुट्ठी में बद साँसों को दूसरी पीढी के लिए सौंपना चाहती है। इस के साथ साथ यह स्त्री अपन निजीपन क साथ जीने की चाह रखती है और यह चाह न केवल स्त्री बल्कि मनुष्य मात्र की पूँजी है। इस दृष्टि से सग्रह की छह और अठारह सख्या पर दर्ज कविताएँ ध्यान देने योग्य हैं।

छह कवयित्रियों के इन सात ताज़ा सग्रहों पर इस सक्षिप्त बातचीत स तीन पीढियों की कवयित्रियों की रचनाओं में सोच क विविध धरातल प्रकट होते हैं। इन की भाषा-दृष्टि में भी पर्याप्त अंतर है। इन विविधताओं को एक साथ समेट कर हा आज की कविता की तसवीर मुकम्मल होती है और उस की चर्चा में पुरुष और महिला लेखन जैसे फूहड़ विभाजन के तर्क से बचने की ज़रूरत है—यह ज़ोर दे कर कहा जाना चाहिए।

चर्चित कविता सग्रह

यहाँ कुछ हुआ तो था इदु जैन भारतीय ज्ञानपीठ, 18 इस्टीट्यूशनल एरिया लोदी रोड नई दिल्ली 110003 1995, मूल्य 60 रुपए

महाभिनिष्क्रमण और *सोच को दृष्टि दो* माना गुलाटी, अस्ति प्रकाशन 9/3 साउथ पटेल नगर, नई दिल्ली 110008 1995 मूल्य क्रमश 100 रुपए और 150 रुपए

सूत्रधार सोते हैं सुनाता जैन अभिरुचि प्रकाशन, 3/114 कर्ण गली विश्वास नगर, शाहदरा दिल्ली 110032 1995 मूल्य 60 रुपए

सात भाइयों के बीच चपा कात्यायनी आधार प्रकाशन 382/सेक्टर 17, पचकूला 134109 1994 मूल्य 40 रुपए

मौसम से कह दो शशि शर्मा भावना प्रकाशन 126 पटपड़गज दिल्ली 110091, 1992 मूल्य 65 रुपए

आश्चर्य लाक प्रगति सक्सेना आधार प्रकाशन पचकूला 1994 मूल्य 40 रुपए

मधुरेश

भैरव प्रसाद गुप्त सघर्ष की ऊर्जा से बना व्यक्ति

भैरव प्रसाद गुप्त प्रगतिवादी आदोलन की अतिम कडी थे—हिन्दी कथा साहित्य में जिस की जड़ें राहुल साकत्यायन और यशपाल ने रापी थीं। नागार्जुन रागेय राघव और अमृतराय इसी आदोलन से फूटी शाखाएँ थीं। जिस दौर में भैरव प्रसाद गुप्त की रचना यात्रा शुरू हुई थी वह व्यक्तिवादी रुझानों का दौर था। एक लेखक और सपादक क रूप में उन की सब से बडी लड़ाई इसी व्यक्तिवाद के विरुद्ध थी। साहित्य के पतनशील व्यक्तिवादी रुझानों के प्रति एक आक्रामक मुद्रा म ही वह वस्तुत भैरव प्रसाद गुप्त की पहचान निहित है। इन प्रवृत्तियों के विरुद्ध उन्होंने सतत अप्रतिम और निर्णायक सघर्ष किया। एक लेखक क रूप में उन्होंने प्रेमचद की भाँति ही शहर और गाँव दोनों को ही अपनी रचना के केन्द्र में रखा और मानवीय शोषण क अनेक रूपों को उद्घाटित करके एक वर्गहीन समाज के निर्माण का रास्ता तैयार किया। प्रगतिवादी आदोलन की उपज होने पर भी व भीष्म साहनी से इस अर्थ में भिन्न थे कि कदाचित् भीष्म साहनी अकेले लेखक हैं जो आदोलन क बीच रह कर भी आदोलनात्मक लेखन की सीमाओं का अतिक्रमण करक उस से बहुत कुछ सीखने का साक्ष्य प्रस्तुत करते हैं। भीष्म साहनी में आदोलन के उत्साह का अतिरेक सब से कम है। रचनात्मक धैर्य का ही उन में अभाव नहीं है—आदोलन का वैसा उग्र रूप उन में नहीं मिलता जो राहुल यशपाल स ले कर भैरव प्रसाद गुप्त तक की पहचान बनी रही। आदोलन की उग्रता और अतिवाद को पचा पाने की दृष्टि से भीष्म साहनी रागेय राघव के अधिक निकट पडते हैं। भैरव प्रसाद गुप्त के निधन से हिन्दी में प्रगतिवादी आदोलन की वह अतिम कडी टूट गई है जिस के विकास के लिए वे *शोले* (1946) से *भाग्यदेवता* (1992) तक निरतर सक्रिय रहे।

हिन्दी में नई-कहानी आदोलन में भैरव प्रसाद गुप्त की भूमिका का उल्लेख अनेक लोगों ने किया है—लेकिन फिर भी अभी उस का सम्यक मूल्याकन शेष है। नई कहानी के लिए उन्होंने अपने सपादन में निकलने वाली पत्रिकाओं—*कहानी* और *नई कहानियाँ*—द्वारा नई रचनात्मक ऊर्जा और प्रतिभाओं के लिए मच तो दिया ही इस स भी बड़ी भूमिका उन की इस परिकल्पना में निहित है जिस में व नई-कहानी को प्रेमचद की परपरा के सवर्द्धन और विकास के रूप में देखने और रेखाकित करने की तैयारी में लगे थे। नई-कहानी आदोलन क प्रति उन के उत्साह का सीधा-सादा कारण यह था कि तत्कालीन कविता में प्रयोगवाद और व्यक्तिवाद का जो हल्ला छाया हुआ था एक जिम्मेदार लेखक और सपादक के रूप में उस स व कहानी को बचाना चाहते थे। अपनी वैचारिक और रचनात्मक भूमिका पर टिप्पणी करते हुए उन्होंने स्वय लिखा है—'उन्हें तथा अन्य प्रादेशिक भाषाओं क प्रगतिशील कथाकारों को एक मच पर सगठित करने की आवश्यकता थी और *कहानी* क माध्यम स यही किया गया। हम यह भी समझते थे कि कहानी सर्वाधिक लोकप्रिय विधा ह और इस क माध्यम स हम प्रयो[illegible] कविता को जो पाठकों स एकदम कटी हुई थी अपदस्थ कर सकते थ। इस सदर्भ में उन्हें एक दो[illegible] करना था। एक ओर कविता के व्यक्तिवादी रुझानों स बच कर वे कहानी को प्रेमचद की परपरा स [illegible] थ और दूसरी ओर कहानी में ही जो सत्रधवादी-व्यक्तिवादी रुझान सिर उठा रहे थ उन स भी व कहानी [illegible]

चाहते थे। कहानी में अमरकांत उन की महत्त्वपूर्ण खोज हैं। मोहन राकेश, राजेन्द्र यादव और कमलेश्वर की व्यक्तिवादी रुझानों वाली कहानियों के प्रति उन की कोई अभिरुचि नहीं थी और कहानी के आन्दोलन में दिन-ब-दिन उन की बढ़ती हुई भूमिका उन के लिए गहरे क्लेश का कारण थी और उस के विरुद्ध उन्होंने हमेशा संघर्ष किया। हिन्दी साहित्य का यह परिदृश्य उन के संघर्षों की गहरी छाप लिए है। परिमलवादियों और अज्ञेय द्वारा साम्राज्यवादी संस्कृति के प्रहार के प्रयासों और नीतियों के विरुद्ध उन का संघर्ष भी उन के उसी रचनात्मक संघर्ष का हिस्सा है, जिस की रचनात्मक ऊर्जा में तप कर उन का समूचा व्यक्तित्व बना था। सन् 42 में भारत छोड़ो आंदोलन में बलिया में अस्थायी जनता सरकार निर्माण और ब्रिटिश सरकार के क्रूर दमन की घटना उन का मुख्य उत्साह स्रोत बनी रही। यह जन संघर्ष हिन्दू मुस्लिम जनता का एक साँझा संघर्ष था जिसे अत्यंत संवेदनशील रूप में उन्होंने *सती मैया का चौरा* में उद्घाटित किया। प्रेमचंद और यशपाल की भाँति इस अर्थ में भी वे इस आन्दोलन की अंतिम कड़ी थे जो साम्प्रदायिक सौहार्द और साँझा संस्कृति एवं कार्यभारों के अंकन पर बल देते थे।

भैरव प्रसाद गुप्त एक वर्गहीन समाज के निर्माण के लिए प्रतिबद्ध लेखक थे। ऐसे लेखक हर कहीं प्रचारवादी समझे जाने की नियति ले कर पैदा होते हैं। स्वयं प्रेमचंद भी इस से बच नहीं सके। अपनी सफ़ाई में प्रेमचंद ने 'प्रचार' को 'विचार' का पर्याय बना कर अपने बचाव की लड़ाई लड़ी थी और तब से आगे के सभी ऐसे लेखक इसी तर्क से अपनी लड़ाई लड़ते रहे हैं। रचना के रूप में इन लेखकों को प्रायः ही सोवियत संघ के स्तालिन कालीन उपन्यासों से प्रेरणा मिलती रही है—कम से कम उन में अंकित दो परस्पर विरोधी शक्तियों का संघर्ष और अंतत समाजवादी समाज के निर्माण या समृद्धि में रचना की समाप्ति। लूकाच ने कभी इसी यांत्रिक यथार्थवाद के विरोध में अपना तीव्र विरोध प्रकट किया था। उन्नीसवीं शताब्दी के महान रूसी उपन्यासों की तुलना में यह यांत्रिक है और आरोपित आशावाद उन्हें बहुत बनावटी लगता था। इस संदर्भ में उन की अनेक स्थापनाएँ बहुत विवादास्पद बनीं और अभी भी मार्क्सवादी सौन्दर्यशास्त्र के निर्माण के प्रयासों के संदर्भ में उस पुरानी बहस की प्रासंगिकता किसी न किसी रूप में बनी हुई है जो लूकाच और ब्रेख्ट के बीच लंबे अरसे तक चली थी। लेकिन स्तालिन कालीन सोवियत उपन्यासों के सारे यांत्रिक आशावाद और कथ्यगत रेज़ीमेंटेशन के बावजूद तत्कालीन परिस्थितियों में उन के सर्वश्रेष्ठ रूप के महत्त्व को नकार पाना कठिन है। इलिया ऐहरनबर्ग, अलेक्सांद्र फ़ादेयेव, कांस्तेंतिन फ़ेदिन, निकोलाई आस्त्रोव्स्की, बोरिस पलेवाइ, अलेक्सी ताल्सताय और शोलोखोव आदि लेखकों ने यूरोप में फ़ासीवाद के उदय और उस के अभिशापों को स्वयं भोगा था और ये सब के सब किसी न किसी रूप में युद्ध के मोर्चे पर सक्रिय रहे थे। अनुभव की यह प्रामाणिकता एक ओर यदि गद्य में रिपोर्ताज जैसी विधा को जन्म देती है तो दूसरी ओर नाज़ी प्रतिरोध में जनता की सक्रिय हिस्सेदारी को संघर्ष की सारी ऊर्जा के साथ अंकित करती है। एक ओर यदि नाज़ी प्रतिरोध का संपूर्ण आर्डियल था तो दूसरी ओर युद्ध की पृष्ठभूमि में सोवियत जनता की दैनिक दिनचर्या थी, युद्ध के अभिशापों की छाया में पड़ी और उस के सक्रिय प्रतिरोध के लिए सन्नद्ध और तैयार होती पीढ़ी—फ़ादेयेव के तरुण गार्डों के कोम्समोलों की पीढ़ी। सोवियत-संघ का यह युद्ध-उपन्यास विनाश, प्रतिरोध और निर्माण की इसी प्रक्रिया का अत्यंत प्रामाणिक अंकन है—कम से कम उस का सर्वश्रेष्ठ रूप। हिन्दी में, शीतयुद्ध के दौर में जब सोवियत विरोधी प्रचार अपने चरम रूप में उपस्थित था और मानव मूल्यों के हमारे पोषक समर्थकों का सोवियत-संघ में ढाए जाने वाले कथित अत्याचार ही सब से अधिक दिखाई देते थे। लेकिन इस सोवियत साहित्य का अभिभूतकारी प्रभाव भी हिन्दी में सहज ही देखा जा सकता है। राहुल, यशपाल, मुक्तिबोध, अमृतराय और रांगेय राघव आदि ने अनेक अनुवादों और सोवियत कथा-साहित्य पर लिखी गई अपनी टिप्पणियों में इस के महत्त्व को रेखांकित किया है। भैरव प्रसाद गुप्त वस्तुतः इसी शृंखला के अंतिम लेखक थे।

भारतीय स्वाधीनता की देहरी पर खड़े हो कर सन् 46 में *शोले* से उन्होंने अपनी रचना यात्रा शुरू की थी। कानपुर के मजदूर आंदोलन की पृष्ठभूमि में लिखा गया उन का उपन्यास *मशाल* सन् 48 में प्रकाशित हुआ। हिन्दी प्रचार सभा से सबद्ध हो कर अपने दक्षिण प्रवास से आकस्मिक रूप से लौट कर फिर वे वापस नहीं लौट सके। बलिया से बच निकल कर कानपुर की एक मिल में नौकरी और मजदूर नेता अर्जुन अरोड़ा से उन का आत्मीय परिचय ही *मशाल* की पृष्ठभूमि है। मज़दूरों के बीच अपने काम के अनुभव को भैरव प्रसाद गुप्त ने पर्याप्त प्रामाणिक रूप में उपन्यास में उपयोग किया है। लेकिन सोवियत लेखकों और भैरव प्रसाद गुप्त के जीवनानुभव का अंतर *मशाल* की सीमाएँ स्पष्ट कर देता है।

भैरव प्रसाद गुप्त बुनियादी वर्गों—किसान और मज़दूर—को अपनी रचना के केन्द्र में रखते हैं। *मशाल* *गंगा मैया* (1952) *सती मैया का चौरा* (1959) और *धरती* (1962) इस दृष्टि से उन के महत्त्वपूर्ण उपन्यास हैं। दूसरी ओर वे क्रांति में मध्य वर्ग की भूमिका को भी उचित महत्त्व देते हैं—*अंतिम अध्याय* (1970) *नौजवान* (1974) और *भाग्य देवता* (1992) आदि में उन का केन्द्रीय चरित्र एक लेखक और संपादक है—स्वयं भैरव प्रसाद गुप्त का अपना प्रतिरूप। *धरती* के नायक मोहन का संघर्ष वस्तुतः उस के सर्जक का ही संघर्ष है। उस के संघर्ष पर उस की पत्नी शशि की टिप्पणी महत्त्वपूर्ण है— इन के साथी लेखकों में से कितनों ने ही सरकारी नौकरी कर ली है। कितने ही सरकारी और दूसरी पत्र पत्रिकाओं के संपादक बन गए हैं। सब मोटी मोटी तनख्वाह, भत्ते और इनाम झटक रहे हैं। कितनों ने ही अपनी कोठियाँ खड़ी कर ली हैं और कितनों ने ही कार खरीद ली हैं कितनों की ही किताबें कोर्स में लग गई हैं। सब गुलछर्रे उड़ा रहे हैं और आप बस यही फख्र लिए जा रहे हैं कि हम लड़ रहे हैं। लड़िए साहब खूब लड़िए, अब तो हम भी यह देखना चाहते हैं कि आप कब तक लड़ते हैं—*धरती*—अपने लिए चुने गए कार्य क्षेत्र—के नाम की लड़ाई जीवन को एक अर्थ देने की लड़ाई है। उसे संख्या नहीं, पैसा नहीं, एक अर्थ चाहिए। जीवन मौत से डरने का नहीं उस से संघर्ष का नाम है। अपने नायक मोहन की भाँति भैरव प्रसाद गुप्त भी इस आस्था पर जीवन भर क़ायम रहे कि 'बीच का रास्ता' सिर्फ़ धोखा है—आदमी स्वयं अपने को और दूसरों को धोखा देने के लिए इस रास्ते की ईजाद करता है। यह बीच का रास्ता सुविधाओं और अवसरवाद की डगर पर जा कर आदमी के संघर्ष की धार को कुंठित करता है। भैरव प्रसाद गुप्त जीवन भर इस रास्ते के विरोध में सक्रिय लेखक के उदाहरण हैं। सत्ता प्रतिष्ठान स्वीकृति पुरस्कार और सुविधाओं से कोई लेखक बड़ा नहीं बनता। यह अकारण नहीं है कि हिन्दी में संघर्षशील लेखकों की लंबी परंपरा में निराला उन के आदर्श पुरुष थे। अनेक प्रकार की कुंठित करने वाली हताशापूर्ण स्थितियों के बीच अपने संघर्ष की इस अदम्य ऊर्जा के सहारे ही वे सिर्फ़ एक लेखक बन रहे। एक लेखक के रूप में उन की लड़ाई के अनेक रूप और स्तर थे। उन के उपन्यासों *अंतिम अध्याय* और *भाग्यदेवता* में इस लड़ाई के विभिन्न रूपों को देखा जा सकता है। लड़ाई की निजता ने उन की रचना के फलक को जब तब संकुचित भी किया है—ख़ास तौर से तब जब इस लड़ाई में वे मध्यवर्गीय व्यक्तिवादी हथियारों का प्रयोग करने लगते हैं। लेकिन इस से एक लेखक की संघर्षात्मक ऊर्जा का महत्त्व कम नहीं होता। इस ऊर्जा के सही उपयोग में चूक के उदाहरण उन के यहाँ मिल सकते हैं लेकिन इस ऊर्जा के महत्व को समझने में उन से कहीं कोई चूक नहीं होती।

इस अक के रचनाकार

ओम गोस्वामी जन्म 1947। कहानी कविता एकांकी निबंध उपन्यास आदि साहित्यिक विधाओं में 18 मौलिक और 40 सपादित पुस्तकें हिन्दी और डोगरी दोनों भाषाओं में प्रकाशित। सात पुस्तकें पुरस्कृत। 1986 में साहित्य अकादमी पुरस्कार। सपर्क प्रधान संपादक जे. एड के कल्चरल अकादेमी जम्मू

वेद राही जन्म 1933। डोगरी और हिन्दी दोनों भाषाओं के सुपरिचित लेखक वेद राही ने साहित्य की प्राय प्रत्येक विधा में क़लम को सफलतापूर्वक आज़माया है। कथा-संग्रह *आले* पर साहित्य अकादेमी द्वारा पुरस्कृत। मुंबई में रह कर फ़िल्म लेखन के अतिरिक्त फ़िल्म निर्देशन एवं निर्माण से जुड़े। संपर्क बी 2/35 सर्वोत्तम हाउसिंग *सोसायटी इर्ला ब्रिज मुंबई 400058*

पद्मा सचदेव जन्म 17 अप्रैल 1940 जम्मू। डोगरी की पहली कवयित्री। 1971 में साहित्य अकादेमी पुरस्कार। कविता साक्षात्कार, कथा साहित्य की हिन्दी और डोगरी में अनेक पुस्तकें। नवीनतम प्रकाशन *नौशीन* (उपन्यास)। संपर्क मितवा घर, 16 टोडरमल रोड नई दिल्ली 110001

डॉ उषा व्यास जन्म 1950 कठुआ जम्मू-कश्मीर। विशिष्ट भाषा शैली के कारण कविता-कहानी दोनों विधाओं में खास पकड़। इन दिनों जे एड के. कल्चरल अकादेमी जम्मू में *शीराज़ा* (हिन्दी) की संपादिका

छत्रपाल जन्म 1949। डोगरी और हिन्दी दोनों भाषाओं में एक एक कहानी संग्रह प्रकाशित। आजकल रेडियो कश्मीर, जम्मू के समाचार विभाग में डोगरी न्यूज़ रीडर

बंधु शर्मा जन्म 1934। डोगरी की कथा यात्रा में अलग पहचान। अब तक दो कहानी-संग्रह और एक सत्य संग्रह प्रकाशित। निर्वाचन आयोग में एक उच्च पद से सेवा निवृत्त हो कर पठन पाठन और लेखन

जितेन ठाकुर डोगरी और हिन्दी में समान अधिकार से कहानियाँ लिखने वाले समर्थ युवा हस्ताक्षर

सुदेश राज जन्म 1949। लिखने की शुरुआत 1966 में। अनेक कहानियाँ प्रकाशित एवं आकाशवाणी से प्रसारित। हिन्दी माध्यम से दो बाङ्ला उपन्यासों का डोगरी में अनुवाद। 1995 में डोगरी संस्था जम्मू की ओर से सम्मानित। रेडियो कश्मीर, जम्मू में सेवारत

रत्न केसर रियासती (1941 31 दिसंबर 1995)। व्यवसाय से वरिष्ठ अभियंता। मूल रूप से हास्य अभिनेता। रामलीला तथा अन्य मंचीय भूमिकाओं में काफ़ी लोकप्रिय रहे। 1986 से लेखन क्षेत्र में। नाटक कविता कहानी इत्यादि

डॉ चंपा शर्मा जन्म 9 जून 1941 डगहोड़ गाँव तहसील सांबा जम्मू कश्मीर। 1958 से कविता और *कहानी दोनों में समान रूप से लेखन। इन दिनों जम्मू* विश्वविद्यालय में स्नातकोत्तर डोगरी विभाग की अध्यक्षा

जितेन्द्र शर्मा जन्म 17 मार्च 1931। एकांकी लेखन के अतिरिक्त हास्य-व्यंग्य से ओत प्रोत निबंध। रंगमंचीय गतिविधियों से गहरे जुड़ाव। डोगरी भाषा की पहली फ़िल्म *'गल्लाँ होइयाँ बीतियाँ'* में मुख्य भूमिका। साहित्य अकादेमी द्वारा पुरस्कृत। जम्मू-कश्मीर कल्चरल अकादेमी से अतिरिक्त सचिव के तौर पर सेवा निवृत्त होने के उपरांत स्वतंत्र लेखन में व्यस्त

मोहन सिंह जन्म 8 फ़रवरी 1955। कवि नाट्यलेखक। मंचीय गतिविधियों में नई दिशा तलाश करने में गतिशील। साहित्य अकादेमी द्वारा पुरस्कृत। सरकारी सिंचाई विभाग में पटवारी

पवित्र सिंह सलाथिया नई पौध के कवि। इन दिनों डोगरी का अध्यापन

जितेन्द्र उधमपुरी जन्म 9 नवंबर 1944 उधमपुर। मूल रूप से कवि किन्तु साहित्य के इतिहास और डोगरी नाटक पर भी शोध कार्य। इन दिनों आकाशवाणी जम्मू केन्द्र में डिप्टी डायरेक्टर

प्रद्युम्न सिंह जंद्राहिया जन्म 14 अप्रैल 1937 जंद्राह। गीतों में लोक शैली का स्पर्श। प्रकृति चित्रण एवं शृंगार (रस) प्रिय विषय। गायन में विशेष महारत। आकाशवाणी से मंचीय कार्यक्रम निर्माता सेवा निवृत्त

अरविन्द जन्म 1944। कविता के अतिरिक्त संगीत में विशेष अभिरुचि। डोगरी कविता में नए प्रयोग। व्यवसाय से डॉक्टर। कुछ वर्षों से कुवैत में सेवारत

आनंद यादव जन्म 30 नवंबर 1935 कागल ज़िला कोल्हापुर। उपन्यास कहानियाँ कविताएँ और आलोचनात्मक निबंधों की 23 से अधिक पुस्तकें मराठी में प्रकाशित। 1990 में *झोंबी* उपन्यास पर साहित्य अकादेमी पुरस्कार से सम्मानित। संपर्क द्वारा डॉ दामोदर खड़से 8/9 चंद्रलोकनगरी हडपसर कॉलोनी क्र 11 पुणे 411029

डॉ दामोदर खड़से सुप्रतिष्ठ कथाकार एवं अनुवादक। संपर्क 8/9 चन्द्रलोकनगरी हडपसर कॉलोनी क्र 11 पुणे 411029

शत्रुघ्न (गोविन्दन कुट्टि मेनन) पालघाट, केरल में

जन्म। पाँच कथा-सकलन प्रकाशित। *कटल पोले कामिनी* और *सीता वरेन्द्रायिरितु* पर पुरस्कार। संपर्क उपसंपादक *मातृभूमि* साप्ताहिक पो बा न 46 कालिकट (केरल) 673001

वी डी कृष्णन नंपियार जन्म 1940 तिरुवला। *मलयाळम की श्रेष्ठ कहानियाँ तकषी की कहानियाँ मगलसूत्र वानप्रस्थ* के अनुवाद प्रकाशित। हिन्दी से कमलेश्वर, परसाई भीष्म साहनी आदि अनेक साहित्यकारों की कृतियों का मलयाळम में अनुवाद प्रकाशित। संपर्क प्रिंसीपल गवर्नमेंट कालिज कोंटचेरी कालीकट 673580 केरल

हृदयेश जन्म 1930 शाहजहाँपुर (उ प्र)। अनेक उपन्यासों एवं कहानियों के विख्यात हिन्दी रचनाकार। संपर्क 136/2 बक्सरियाँ शाहजहाँपुर 242001

यादवेन्द्र शर्मा 'चंद्र' जन्म 15 अगस्त 1932। 1955 से स्वतंत्र लेखन। हिन्दी एवं राजस्थानी के प्रख्यात कथाकार। साहित्य अकादेमी पुरस्कार सहित अनेक सम्मान। प्रस्तुत कहानी राजस्थानी की *देवता कठै* का स्वयं लेखक द्वारा अनुवाद है। संपर्क आशा लक्ष्मी, नया शहर, बीकानेर 334004 (राजस्थान)

मोतीलाल जोतवाणी जन्म 13 जनवरी 1936 सक्खर (सिन्ध पाकिस्तान)। सिन्धी हिन्दी अंग्रेज़ी में 45 पुस्तकें कविता कथा एवं अन्य विधाओं की। अनेक पुरस्कार सम्मान। संपर्क बी 14 दयानंद कॉलोनी लाजपतनगर, नई दिल्ली 110024

अतुलानंद गोस्वामी जन्म 1935 जोरहाट (असम)। चार कहानी-संग्रह और एक उपन्यास। *हायदाई मुलोर चोन* बहुचर्चित कथा संग्रह। *नामघरिया* उपन्यास पर टी वी धारावाहिक। 1991 में असम साहित्य सभा का अम्बिका गिरि राय चौधरी सम्मान। *बोलिया हाती* कहानी पर कथा पुरस्कार। कई कहानियाँ हिन्दी अंग्रेज़ी में। संपर्क आधार, जू नारगी रोड गुवाहाटी 781024 असम

नीता बनर्जी जन्म 17 नवंबर 1948 मुंबई। असमिया बाड्ला राजस्थानी हिन्दी तथा अंग्रेज़ी में अनुवाद। *ज़िन्दगी कोई सौदा नहीं* (इंदिरा गोस्वामी) और *बैकुंठनाथ भागवत भट्टाचार्य (डॉ महेश्वर नेओग)* प्रकाशित/पुरस्कृत। शीघ्र प्रकाश्य *पाताल भैरवी* (डॉ लक्ष्मी नंदन बोरा का उपन्यास)। सपर्क बी-49 मानस विहार अपार्टमेंट्स मयूर विहार फ़ेज 1 एक्सटेंशन दिल्ली 110091

शिवकुमार राई (26 अप्रैल 1919 22 जुलाई 1995)। 1978 में साहित्य अकादेमी पुरस्कार। *फ्रंटियर, पहरे, बड़ा डिनर* आदि कहानी संग्रह। *डाक बंगला* (उपन्यास)। सपर्क सितालु बस्ती जे एन पी रोड डाकघर कुर्सियांग ज़िला दार्जिलिंग

विर्ख खड़का डुवर्सेली जन्म 1 अक्तूबर 1954 कटलगुड़ी प बंगाल। हिन्दी-नेपाली में लेखन एव अनुवाद। नेपाली दैनिक *सुनचरी* में सयुक्त संपादक। सपर्क दुर्गागढ़ी प्रधान नगर, दार्जिलिङ 734403

रमाकांत रथ जन्म 13 दिसबर 1934 कटक। विख्यात ओड़िया कवि। ओडिया में *पलातक* नवीनतम कविता संग्रह प्रकाश्य। हिन्दी में किताबघर स *मेरी समग्र कविताएँ* शीघ्र प्रकाश्य। सपर्क उपाध्यक्ष साहित्य अकादेमी नई दिल्ली 110001

श्रीनिवास उद्गाता जन्म 6 जनवरी 1935 बोलांगीर। ओड़िया के प्रसिद्ध कवि उपन्यासकार, कथा-लेखक अनुवादक एव चित्रकार। 60 से अधिक पुस्तकें (मूल तथा अनुवाद) प्रकाशित। हिन्दी के अनेक अनुवाद ओड़िया में अनेक पुरस्कार-सम्मान। सपर्क केबी कुटीर, बोलांगीर 767001 ओड़िसा

नवनीता देवसेन जन्म 1938 कलकत्ता। बाड्ला की सुप्रसिद्ध कवयित्री एवं भ्रमण कहानीकार। पहला कविता-सग्रह *प्रथम प्रत्यय*। *कोरुना तब कोन पय दिये हे पूर्ण तब चरणेर काछे नटी नवनीता* के साथ अन्य कई पुस्तकें प्रकाशित। यादवपुर विश्वविद्यालय कलकत्ता के तुलनात्मक साहित्य विभाग में प्रोफ़ेसर। संपर्क 'भालोबासा' 72 हिन्दुस्तान पार्क कलकत्ता 700029

शंपा भट्टाचार्य (भट्टाचार्या) तसलीमा नसरीन की कविताओं का हिन्दी अनुवाद *यह दुख यह जीवन* प्रकाशित। अन्य कवियों और कहानीकारों का बाड्ला एव अंग्रेज़ी से हिन्दी में अनुवाद। संपर्क एम 15 वी डी ए, फ्लैट्स रवीन्द्रपुरी वाराणसी 221005

रवीन्द्र बरा लगभग 40 वर्ष के इस कवि का संग्रह *शइचर मानूह* पिछले दिनों चर्चित रहा है। संपर्क अंबिकागिरि नगर, गुवाहाटी 781024 (असम)

रत्नेश कुमार सपर्क पूर्वांचल प्रहरी जी एस रोड गुवाहाटी 781607

के सच्चिदानंदन जन्म 28 मई 1946 पुल्लूट (केरल)। मलयाळम के प्रख्यात कवि-समीक्षक-अनुवादक। *हिन्दी में राजकमल प्रकाशन से प्रकाशित काव्यानुवाद* के बाद दूसरा सग्रह *वह जिसे सब याद था* शीघ्र ही किताबघर, नई दिल्ली से प्रकाश्य। सपर्क सपादक *इंडियन लिटरेचर* साहित्य अकादेमी नई दिल्ली

प्यारा सिंह सहराई विख्यात वयोवृद्ध पजाबी कवि। 13 कविता संग्रह प्रकाशित जिन में प्रमुख हैं *शकुंतला रुणझुण बातां वक्त दियां* तथा *संग्राम युद्ध*। संपर्क फ़ॉर्मर सोसायटी 180-बी प्लॉट नं 8

सेक्टर 13 रोहिणी नई दिल्ली 110085

अमरजीत सिंह पत्रकार एवं अनुवादक। हिन्दी और पंजाबी में कहानियाँ कविताएँ। सम्पर्क एच 17/68 सेक्टर 7 रोहिणी दिल्ली 110085

रवीन्द्र स्वप्निल (र स्व प्रजापति) जन्म 15 जून 1970। युवा हिन्दी कवि। संपर्क सियलपुर, तहसील सिरोंज ज़िला विदिशा (म प्र) 464228

सुनील कुमार श्रीवास्तव हिन्दी कवि। संपर्क 2/9 डा ए.डी कॉम्प्लैक्स हिदायतुल्लाह रोड भवानीपेठ पुणे 411042

आशुतोष दुबे युवा हिन्दी कवि। सम्पर्क 6 जानकी नगर एक्सटेंशन इंदौर 452001

बद्री नारायण जन्म 5 अक्तूबर 1965। सच सुने बहुत दिन हुए (कविता-संग्रह) *लोक संस्कृति और इतिहास* तथा *लोक संस्कृति में राष्ट्रवाद* (शोध कृतियाँ) प्रकाशित। संपर्क गोविन्द वल्लभ पन्त सामाजिक विज्ञान संस्थान 3 यमुना एक्लेव संगम नगर, झूसी इलाहाबाद 221506

सविता सिंह जन्म 5 फ़रवरी 1962 भोजपुर (बिहार)। आधुनिकता पर शोध कार्य। कविताएँ प्रकाशित। सम्पर्क : 3481 सेक्टर डी पॉकेट 3 वसंत कुंज नई दिल्ली 110070

यतीश अग्रवाल चिकित्सा संबंधी विषयों के सुप्रसिद्ध लेखक। अंग्रेज़ी और हिन्दी में दस से अधिक पुस्तकें प्रकाशित पुरस्कृत भी। पेशे से रेडियोलॉजिस्ट। अंग्रेज़ी और हिन्दी में कविताएँ यत्र तत्र प्रकाशित। संपर्क 1584 सेक्टर-सी पॉकेट 1 वसंत कुंज नई दिल्ली 110070

कश्मीर उप्पल जन्म लाहड़ी पर्व 1946 या 47 इटारसी (म प्र)। वाणिज्य के प्राध्यापक। कविता कहानियाँ समीक्षा आलेख पत्र पत्रिकाओं में प्रकाशित। सम्पर्क 31 एम आई जी प्रियदर्शिनी नगर, इटारसी 461111

वेद प्रकाश भारद्वाज युवा कवि समीक्षक। दैनिक राष्ट्रीय सहारा नई दिल्ली से संबद्ध।

ज्योतिष जोशी (जोशी मिश्र) जन्म 2 सितंबर 1966 धर्मगता (गोपालगंज) बिहार। कहानियाँ समीक्षात्मक लेख तथा टिप्पणियाँ पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित। नेमिचंद जैन के कृतित्व पर एकाग्र सम्यक पुस्तक का संपादन। प्रकाश्य कृतियाँ *विमर्श और विवेचना* तथा *आलोचना की छवियाँ*। ललित कला अकादेमी की पत्रिका *समकालीन कला* से संबद्ध। सम्पर्क 219 कावेरी जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय नई दिल्ली 110067

डॉ कुमार विमल जन्म 12 अक्तूबर 1931। विख्यात सौन्दर्यशास्त्री और समालोचक। आरंभ में काव्य-रचना भी। *मूल्य और मीमांसा कला विवेचन महादेवी का काव्य सौष्ठव* आदि नौ आलोचनात्मक ग्रंथ। *अंगार* और *कविताएँ कुमार विमल की* आदि छह कविता संग्रह। सम्पर्क 56 एम आई जी एच लोहिया नगर, पटना 800020

नवल किशोर वरिष्ठ हिन्दी समालोचक। *मानववाद और साहित्य आधुनिक हिन्दी उपन्यास और मानवीय अर्थवत्ता* आदि चर्चित कृतियाँ। सम्पर्क घ 6 सेक्टर 5 उदय पार्क हिरणमगरी उदयपुर 313002

प्रेमपाल शर्मा जन्म 15 अक्तूबर 1956 गाँव दीघी, बुलन्दशहर। *चौराहे* (उपन्यास) *तीसरी चिट्ठी* (कहानी संग्रह) तथा समीक्षाएँ प्रकाशित। संपर्क 90-बी कांति नगर (कृष्णा नगर) दिल्ली 110051

नरेन्द्र मोहन वरिष्ठ हिन्दी रचनाकार एवं आलोचक। अनेक नाटक *इस हादसे में सामना होने पर, हथेली पर अंगार की तरह* इत्यादि कई कविता संग्रह एवं आलोचना पुस्तकें प्रकाशित। सम्प्रति दिल्ली विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग में

पुष्पपाल सिंह जन्म 4 नवंबर 1941 भदस्याना ज़िला मेरठ। हिन्दी में कथा समीक्षा और कहानियों के अनेक संग्रह प्रकाशित। उ प्र हि संस्थान और पंजाब सरकार में पुरस्कृत। संपर्क हिन्दी विभाग पंजाबी विश्वविद्यालय पटियाला 147002

जानकी प्रसाद शर्मा जन्म 5 मार्च 1950 सिरोंज (विदिशा म प्र)। *हिन्दी उपन्यास प्रेमचंद के बाद* और *प्रेमचंद की यथार्थवादी परंपरा* (आलोचना) तथा *जलते सेहराओं में नंगे पाँव* (ग़ज़ल संग्रह उर्दू में) तथा उर्दू से हिन्दी में अनेक पुस्तकें अनूदित प्रकाशित। संपर्क बी 330 अशोक नगर, शाहदरा दिल्ली 110093

मधुरेश जन्म 10 फ़रवरी 1939 बरेली उ प्र। हिन्दी कथा-साहित्य के प्रसिद्ध आलोचक। सम्पर्क : *ब्रह्मानंद पांडे का मकान भोंजी टोला बदायूँ* 243601

करुणानिधान सुपरिचित कलाकार (पिछले अंकों में परिचय)। संपर्क 34 चौहानपुर करावल नगर रोड, दिल्ली 110094

प्रो इन्द्रनाथ चौधुरी सचिव द्वारा साहित्य अकादेमी के लिए प्रकाशित तथा नवचेतन प्रिंटर्स 1 ई/2 झण्डेवालान एक्सटेंशन नई दिल्ली 110055 में मुद्रित/संपादक गिरधर राठी